अद्भुत्
आश्चर्यजनक
किन्तु सत्य!
ॐ

जन्म शताब्दी वर्ष के श्रद्धा सुमन

# अद्भुत, आश्चर्यजनक किन्तु सत्य !

## (प्रथम भाग)
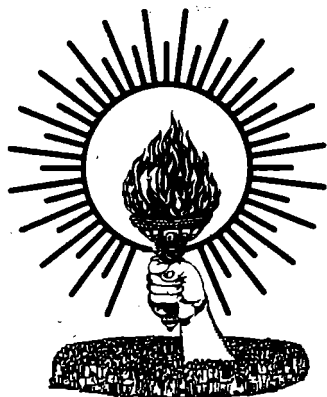
सम्पादक

ब्रह्मवर्चस

प्रकाशक

**श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट (TMD)**

गायत्री नगर-श्रीरामपुरम्, शांतिकुंज, हरिद्वार

(उत्तराखण्ड) पिन-249411

पुनरावृत्ति सन् 2014 मूल्य- 50/-

- **अद्भुत, आश्चर्यजनक किन्तु सत्य!**


- **सम्पादक**

  ब्रह्मवर्चस

- **प्रथम संस्करण:**

  जन्म शताब्दी महोत्सव, संवत् 2068

  तदनुसार 7 नवम्बर 2011

- **पुनरावृत्ति :-** 2014

- **प्रतियाँ :-** 3000

- **मूल्य-** 50.00

- **प्रकाशक**

  **श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट** (TMD)

  गायत्री नगर, श्रीरामपुरम, शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार। पिन-249411


**सम्पर्क सूत्र**

**श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट**

शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार (उत्तराखण्ड) पिन-249411

फोन-01334-260602, 260309, 260328, फैक्स-260866

Web-www.awgp.org, Email: shantikunj@awgp.org

# अनुक्रमणिका

# शुभकामना संदेश

## हमारे आत्मीय स्वजनों!

अध्यात्म क्षेत्र में श्रद्धा की शक्ति को सर्वोपरि माना गया है। एक ही मंत्र, एक ही साधना पद्धति एवं एक ही गुरु का अवलंबन लेने पर भी विभिन्न साधकों की आत्मिक प्रगति की गति भिन्न-भिन्न प्रकार की होती है। इस भिन्नता का मूल कारण है-श्रद्धा, समर्पण, इष्ट के प्रति लगाव में न्यूनाधिक मात्रा। गीताकार ने ठीक ही कहा है-**श्रद्धामये यं पुरुषः यो स एव सः** अर्थात जिसकी जैसी श्रद्धा होती है, वह स्वयं भी वही अर्थात् उसके अनुरूप बन जाता है, ढल जाता है। अपने ईष्ट-आराध्य की महिमा और गरिमा के श्रवण, अध्ययन, चिंतन और मनन से श्रद्धा-भावना प्रगाढ़ बनती है। इसी तथ्य को आधार बनाकर मिशन के नैष्ठिक परिजनों के अनुभव और मार्मिक संस्मरणों के संकलन की योजना बनी ।

परम पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी की अहैतुकी कृपा, अनुदान-वरदान का लाभ कुछ गिने-चुने लोगों तक सीमित नहीं रहा है। अपने प्रवचन 'साधना में प्राण आ जाए तो कमाल हो जाए' में वे स्वयं ही कहते हैं "**आचार्य जी के दरबार में आकर के कोई आदमी खाली हाथ नहीं जायेगा। अहंकार? अहंकार नहीं बेटे, ये वास्तविकता है। हमने किसी भी आदमी को खाली हाथ नहीं जाने दिया है। कोई भी आदमी यहाँ आकर देख ले कि आचार्य जी के यहाँ नौ दिन रहकर के हम खाली हाथ आए? नहीं बेटे! हमारे लिए शरम की बात है, कलंक की बात है।**

**आप हमारे यहाँ आएँ और खाली हाथ चले जाएँ, ऐसा नहीं हो सकता।"** इसी तथ्य का उद्घाटन पूज्य गुरुदेव ने अपनी अंतिम पुस्तक 'परिवर्तन के महान क्षण' में भी किया है "**इस लंबे जीवन की अवधि में कितनों की कितनी भौतिक एवं आत्मिक सहायता बन पड़ी, यह प्रसंग असाधारण रूप से विस्तृत है, इस लंबे प्रसंग को उनके लिए शेष छोड़ दिया है जो शरीर न रहने पर कुछ और खोजने-बताने के लिए उत्सुक होंगे।"**

प्रस्तुत शत संस्मरण रूपी पुष्पों का यह गुलदस्ता हमारी उसी खोज का परिणाम है। यह अकाट्य सत्य है-श्रद्धा तत्व ही आत्मिक प्रगति का आधार भूत कारण है। श्रद्धा के बल पर ही मीरा ने श्रीकृष्ण को साथ रहने के लिए विवश किया, रामकृष्ण परमहंस ने काली की मूर्त प्रतिमा को जीवंत कर उसे भोग ग्रहण हेतु सहमत कर लिया था।

'अद्भुत, आश्चर्यजनक, किन्तु सत्य!' पुस्तक का अवगाहन श्रद्धा-भावना को बलवती बनाये, आप सबके जीवन में शुभ संभावनाओं का मार्ग प्रशस्त करे, ऋषियुग्म से ऐसी हार्दिक प्रार्थना के साथ आप सब के उज्ज्वल भविष्य की मंगल कामनाएँ।

**आपका भाई**

(डॉ. प्रणव पण्ड्या)

**आपकी बहिन**

(शैलबाला पण्ड्या)

# पुरोवाक्

प्रात:स्मरणीय परम पूज्य आचार्य श्रीराम शर्मा जी एक ऐसे साधक, द्रष्टा, विचारक रहे हैं, जिनको व्यक्ति, परिवार, समाज और देश-विदेश में घट रही अथवा घटने वाली घटनाओं की तह में जाकर उन्हें आर-पार देखने की अलौकिक सूक्ष्म दृष्टि प्राप्त थी। वह ऐसे महापुरुष थे, जो दृश्य-अदृश्य जगत् की विविध परिस्थितियों को निमिष मात्र में भाँपकर उन्हें नियन्त्रित कर लेते थे। किसी व्यक्ति के मन का भेद जान लेना, उसकी इच्छाओं-आकांक्षाओं को पढ़ लेना और हितैषी बनकर उसका आन्तरिक ऑपरेशन कर देना उनके लिए बड़ी सहज बात थी। वह एक ऐसे उच्चस्तरीय आध्यात्मिक चिकित्सक थे, जो सदियों-सदियों बाद धरती पर आया करते हैं।

गुरु इस धरती का सबसे पवित्र शब्द है। गुरु व्यक्ति नहीं, एक शक्ति है, जिसकी प्राप्ति पात्रता से होती है। सद्गुरु तक पहुँचने के लिए तो ऊँचे दर्जे के प्रयास करने पड़ते हैं। अपने आपको कई-कई तरह से तपाना पड़ता है, तब कहीं जाकर सद्गुरु हमें शिष्य के रूप में स्वीकार करते हैं। लेकिन, आचार्यश्री ऐसे सदगुरु हैं, जिन्होंने सौ बुराइयों से ग्रसित व्यक्ति द्वारा सिर्फ एक बुराई छोड़ देने पर ही उसे उसकी बाकी बची निन्यानवे बुराइयों के साथ अपना लिया, और वह सब कुछ दे डाला, जो समर्थ गुरु सुपात्र शिष्य को ही दिया करते हैं। बाद में उनके द्वारा बुराइयाँ त्यागने और अच्छाइयाँ ग्रहण करने के ढेरों अवसर बनाए जाते रहे। फलत: उनके अनुयाई एक-एक बुराई त्यागकर अच्छाइयों की खान बनते चले गए। आचार्यवर का कारवाँ बढ़ता गया और देश भर में, दुनिया भर में संव्याप्त होता चला गया।

पिता एक ऐसा शब्द है, जिसका उच्चारण करते ही निश्चिन्ततापूर्ण संरक्षण की अनुभूति होती है। पूज्य आचार्यश्री एक वृहद् परिवार के पिता थे। एक ऐसा परिवार, जिसके सदस्यों को उन्होंने एक खास मकसद के लिए दुनिया के कोने-कोने से तलाशा व तराशा था। वह उनके संरक्षण और विकास के लिए पूरी तरह प्रतिबद्ध थे। वह बहुत दूर बैठकर भी अपने एक-एक बच्चे का ध्यान रखते थे। उनका हर शिष्य आज भी सदैव उनके स्नेहिल संरक्षण में

होने की स्पष्ट अनुभूति करता है और अपने शिष्यों के साथ उनके अलग-अलग रूपों में होने के प्रमाण हमें आये दिन मिलते रहते हैं। दैहिक, दैविक एवं भौतिक तापों से संतप्त इस संसार में पूज्यवर ने अपने मानसपुत्रों को कई बार आसन्न संकटों से बचाया। गायत्री परिवार का इतिहास ऐसी अनेकानेक घटनाओं से भरा पड़ा है।

एक स्थान पर उन्होंने अपने शिष्यों को सम्बोधित करते हुए लिखा- हमने जो लड़ाई छेड़ी है, वह दुष्प्रवृत्तियों के विरुद्ध छेड़ी है और लंका दहन के लिए छेड़ी है। यह काम बहुत बड़ा है और इसमें कुछ मुसीबतें भी जरूर आयेंगी, पर उन मुसीबतों को हम आप तक नहीं पहुँचने देंगे। उन मुसीबतों को हम अपने ऊपर लेते रहेंगे। राणा सांगा को याद करते हुए उनने कहा-युद्ध के दौरान राणा सांगा जहाँ कहीं भी देखता कि उसके साथियों पर गाज गिरी, उनके ऊपर तलवार गिरी, वह भागकर वहीं आ जाता था और उनके बदले का भाला, तलवार अपने शरीर पर झेल लेता था। उसने अपने ढेरों आदमी इस तरह बचा लिए थे। जब उसके शरीर पर अस्सी घाव हो गए तब वह बेहोश हो गया और अपना काम बन्द कर दिया। बच्चो! अस्सी घाव खाने तक तो कोई भी मुसीबत हम तुम्हारे ऊपर नहीं आने देंगे। मुसीबत आएगी, तो हमारे ऊपर आएगी।

आचार्यवर द्वारा स्थापित गायत्री परिवार के सहस्रों कार्यकर्ता, लाखों-लाख उनके पुत्र व पुत्रियाँ ऐसी कई घटनाओं के स्वयं साक्षी हैं। इन अद्भुत् घटनाओं की गिनती करना, इन्हें किसी पुस्तक में बाँध पाना असंभव-सा काम है। फिर भी, कदम-कदम पर प्राप्त होते रहे युगऋषि के अद्भुत् अनुदानों को लेकर जन्मशताब्दी वर्ष में रोम-रोम से कृतज्ञता व्यक्त करते हुए श्रद्धासुमन के रूप में प्रस्तुत हैं- पूज्यवर के वरदपुत्रों द्वारा अभिव्यक्त कुछ अविस्मरणीय अनुभूतियाँ।

**- ब्रह्मवर्चस्**

भगवत्याः जगन्मातुः श्रीरामस्य जगद्गुरोः। चरणारविन्दे वन्दे श्रद्धा-प्रज्ञा स्वरूपयोः॥

## युगऋषि के जन्म शताब्दी वर्ष में
## भाव-संवेदना की श्रद्धांजलि

"अपनों से अपनी बात" कही, जन-जन पर अति उपकार किया।
भींगा जिसका अन्तः उससे, तुमने जी भर कर प्यार किया।।
पितु, मातु, सखा, भ्राता, माना जिनने श्रद्धापूरित होकर।
तव आज्ञा पर मर मिटने हित, दौड़ा आया सब कुछ तज कर।।

तब उन अपनों की क्षमता को, दे दिशा लगाए नव युग हित।
खुद भार उठाए गिरधर सा, उत्साह बढ़ाकर जन-जन हित।।
सब तुच्छ गिलहरी बानर ज्यों, दे शक्ति सभी से काम लिया।
सब स्वयं चकित थे, लख-लख कर, हमने कैसे यह काम किया।।

हे महाप्राण! हम जो भी हैं, अनुयायी नाथ तुम्हारे हैं।
अपनी छोटी हस्ती हम भी, तव चरणों पर ही वारे हैं।।
है एक विनय बस यही प्रभो! बस कृपा दृष्टि करते रहना।
हम रहें तुम्हारे जन्म-जन्म, वह दया दृष्टि रखते रहना।।

तेरे जीवन की बातों की, कुछ कणिकाएँ तुझको अर्पण।
पीढ़ी जिससे पाए प्रकाश, तव चरणों में शत-शत वन्दन।।

**श्रद्धावनत**

**नैष्ठिक परिजन, शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार।**

# अंतिम संदेश

परिजन, जिन्हें हमने ममत्व के सूत्र से बाँध कर परिवार के रूप में विस्तृत रूप दे दिया है, सम्भवतः स्थूल नेत्रों से हमारी काया को नहीं देख पाएँगें, पर हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि इस शताब्दी तक और इसके बाद भी अपने सूक्ष्म और कारण शरीर से शान्तिकुंज परिसर और प्रत्येक परिजन के अंतःकरण में विद्यमान रहकर अपने बालकों में नवजीवन और उत्साह भरते रहेंगे। उनकी समस्या का समाधान उसी तरह निकलता रहेगा जैसा कि हमारी उपस्थिति में उन्हें उपलब्ध होता रहा है। हमारे आपसी संबंध अब और भी प्रगाढ़ हो जायेंगे; क्योंकि हम बिछुड़ने के लिए नहीं जुड़े थे। हमें एक क्षण के लिए भूला पाना आत्मीय परिजन के लिए कठिन हो जाएगा। इसी निमित्त काय पिंजड़ का सीमित परिसर छोड़कर हम विराट घनीभूत प्राण ऊर्जा के रूप में विस्तृत होने जा रहे हैं। देव समुदाय के सभी परिजनों को मेरा कोटि-कोटि आशीर्वाद, आत्मिक प्रगति की दिशा में अग्रसर होने हेतु अगणित शुभकामनाएँ।

-परम पूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

शरीर यात्रा अब कठिन हो रही है। उनके जाने के पश्चात से आज तक एक क्षण भी ऐसा नहीं बीता, जब वे आँखों से ओझल हुए हों। घनीभूत पीड़ा अब आँसू रोक नहीं पा रही है, सो मुझे विराट तक पहुँचना अनिवार्य हो गया है। यह न समझें कि हम स्वजनों से दूर हो जाएँगे। परम पूज्य गुरुदेव के सूक्ष्म एवं कारण सत्ता में विलीन होकर हम अपने कुटुम्बियों को अधिक प्यार बाँटेंगे, उनकी सुख सुविधाओं में अधिक सहायक होंगे।

-वंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका।<br>
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या।।

# मन्त्र पूत जल का कमाल

इस बार की अमेरिका यात्रा में सघन कार्यक्रम थे। दिन में पाँच-छह प्रोग्राम। उसके बीच उन कार्यक्रम स्थलों की दूरी भी नापनी थी, साथ ही मिलने वाले आस्थावान, प्रश्नकर्ता भी विभिन्न प्रकार के। अतः शरीर थक कर चूर था। सोचा, रास्तें में आराम करेंगे। विराट वायुयान ३५० यात्री लेकर लॉस एन्जिल्स से उड़ान भरी, ताइवान, सिंगापुर होते हुए उसे दिल्ली पहुँचना था। बारह-तेरह घंटे की यात्रा थी। अतः लगा कि अब रात्रि आराम से कटेगी।

अचानक एक सवा घंटे बाद एक यात्री की तबियत अत्यधिक खराब हो गई। पायलट को कुछ सूझा नहीं। उसने एनाउन्स किया कि यदि वायुयान वापस ले जाते हैं तो तीन घंटे अतिरिक्त लगेंगे जाने-आने में, व आगे बढ़ते है तो यात्री की जान को खतरा है। अतः यदि वायुयान में कोई डाक्टर हो तो कृपया मदद करें।

उद्घोषणा सुनकर मैं तुरन्त पायलट के पास पहुंच गया। उसने मुझे ऊपर से नीचे तक देखा। उसे विश्वास ही नहीं हुआ कि यह व्यक्ति डॉक्टर हो सकता है। हम देवसंस्कृति का प्रचार करके जो लौट रहे थे। पीली धोती-कुर्ता, माथे पर तिलक, गले में रूद्राक्ष, हाथ में ब्रह्मदंड किसी सन्यासी से कम नहीं थे, सो उसने अपने विश्वास हेतु हमसे कुछ अंग्रेजी में पश्न पूछे। जब जवाब सही मिला विश्वास हुआ तब हमें मरीज तक ले जाया गया। हमने देखा उसे बहुत बेचैनी हो रही थी। थैले से निकाल कर हमने कुछ दर्दनाशक दवाईयाँ दी पर सब व्यर्थ। फिर थोड़ा तेल मंगवा कर उसके पैरों को मलने लगे। तब पायलट ने कहा- "आप तो बस बताते जाइये, परिचारिकाएँ हैं सब करेंगी।" फिर भी उसकी बेचैनी देखते हुए हम लगे रहे।

उसने जब हमें उसी बीच अकेला पाया तब कहा- "जरा सी कोकीन है क्या?" उसने समझा-सन्यासी है तो शायद कहीं इसके पास भी मिल जाय। आज के सन्यासियों के प्रति लोगों की मान्यता देखकर हमें बहुत संताप हुआ। पहले तो हमें उस व्यक्ति के ड्रग्स लेने का शक था लेकिन उसके इतना कहने पर अब तो पूर्ण विश्वास हो गया। अब हमने उसी के अनुरूप इलाज प्रारंभ किया।

गुरुसत्ता का स्मरण कर एक गिलास जल मँगाया। उसे गायत्री मंत्र से अभिमंत्रित कर उसे पिला दिया। चूँकि उसे नशे की काफी आदत थी इसलिये उसके बिना वह अधिक बेचैन था। सारी रात मालिश करते, नब्ज टटोलते, दवा देते व्यतीत हुई। अन्त में उसे नींद आई। तब तक पौ फट चुकी थी। लगभग आधे घंटे बाद सभी को स्थान छोड़ना था। इस प्रकार आराम का सपना चकनाचूर हो चुका था।

ऋषिवर के मंत्रपूत जल ने अपना कमाल दिखा दिया था। हम सभी टोली के भाई गौरवान्वित थे एक भला कार्य सम्पन्न करके।

**-डॉ०प्रणव पण्ड्या,**

**देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार**

# ऐसे थे पूज्य गुरुदेव

गुरुवर जो कहते उसे पूर्णतया स्वयं के जीवन में करके दिखाते। "दूसरों के प्रति उदारता स्वयं के प्रति कठोरता" उनके जीवन में सतत चरितार्थ तो थी ही, किन्तु उस समय वह चरम अवस्था में पहुँच गई, जब उनकी माता दानकुँवरि बाई का निधन हो गया।

मथुरा में जब वे अस्वस्थ थीं, उस समय भी आचार्य जी के कार्यक्रम सारे देश में अनवरत चल रहे थे। हर बार तपोभूमि के कार्यकर्ताओं (जिनमें मैं भी शामिल था) को देख-रेख करने की हिदायत देकर जाते थे; पर पता नहीं क्यों इस बार उन्होंने कहा कि यदि कुछ अनहोनी घट गई तो दोनों स्थान पर टेलीग्राम करना। जहाँ कार्यक्रम समाप्त हो व जहाँ प्रारंभ हो। साथ ही आवश्यक निर्देश देकर दौरे पर चले गए।

द्रष्टा की आँखों से भला कोई बात छिपी कैसे रह सकती है? वही हुआ जिसे समझा गए थे। उस समय छत्तीसगढ़ (पुराना मध्यप्रदेश) के महासमुंद में एक हजार एक कुण्डीय यज्ञ चल रहा था। प्रवचन के बीच में उन्हें टेलीग्राम दिया गया। टेलीग्राम पर नजर पड़ते ही वे सब कुछ समझ गए। एक मिनट के लिए आँखें मूँदकर उन्होंने दिवंगत आत्मा को श्रद्धाञ्जलि दी। पुनः सहज भाव से यथावत् अपनी विवेचना करने लगे। उस समय लोगों को कुछ समझ में नहीं आया, पर बाद में जब सभी ने सुना तो आश्चर्यचकित रह गए। ऐसा समाचार पाकर तनिक भी विचलित न होना, स्थिर भाव से अपना कार्य करते रहना किसी स्थितप्रज्ञ योगी के लिए ही संभव है।

सबके मन में एक ही आशंका थी कि गुरुदेव मथुरा चले जाएँगे तब यहाँ यज्ञ का क्या होगा? किन्तु उन्होंने अपने कार्यकर्ताओं को निश्चिंत करते हुए स्वयं के प्रति कठोर बनकर स्पष्ट कर दिया कि आगे के सभी कार्यक्रम यथावत् होते रहेंगे। हम कहीं नहीं जा रहे, आप सभी के बीच ही रहेंगे। सबने आश्चर्य किया कि "ऐसा कैसे हो सकता है?" स्वयं की माताजी का श्राद्धकर्म चल रहा हो तो बेटा बाहर कैसे रह सकता है, पर महापुरुषों के सभी कार्य लौकिक नियमों के अनुसार सम्पन्न नहीं होते। उन्होंने तो अपनी ओर से श्राद्धकर्म उस एक मिनट में ही सम्पन्न कर लिया था।

कार्यक्रम आयोजक प्रसन्न थे, क्योंकि इस स्थिति में भी पूज्यवर सभी कार्यक्रमों में उपस्थित रहे। उनका कोई भी कार्यक्रम स्थगित नहीं हुआ। सभी कार्यक्रम यथावत् जारी रहे। अन्तिम संस्कार के सारे लौकिक कृत्य वंदनीया माताजी द्वारा सम्पन्न हुए। इस संबंध में उन्हें सूक्ष्म सम्पर्क से निर्देश मिल गए थे। उनके निर्देशानुसार स्वजनों, परिजनों, आगन्तुकों इष्ट मित्रों की उपस्थिति में अन्त्येष्टि संस्कार सम्पन्न किया गया।

इसके बाद परम वंदनीया माताजी ने कम से कम एक दिन के लिए इस असह्य दुःख में पूज्यवर की उपस्थिति चाही। इसके लिए उन्हें मनाने हेतु मुझे जाने के लिए कहा गया। एक तरफ वन्दनीया माताजी का सजल आग्रह, दूसरी ओर गुरुकार्य के

प्रति पूज्यवर की दृढ़निष्ठा- मैं हतप्रभ खड़ा सोच रहा था क्या करूँ? गुरुदेव को उनके निश्चय से डिगाना कठिन ही नहीं असंभव था। उनके सामने जाकर यह बात कहनी पड़ेगी, यह सोचकर ही पसीने छूटने लगे। बचने की कोशिश में मैंने कहा- बलराम जी को भेज दें! पर उन्होंने कहा- "उन्हें तो मना करेंगे। उनसे आग्रह करना, आने की आवश्यकता बताना उनके वश की बात नहीं, इसलिए तुम्हें ही जाना पड़ेगा।" मैं निरुत्तर हो गया।

महासमुन्द के बाद बालाघाट में कार्यक्रम था। वहाँ यज्ञस्थल में पहुँचा तो देखा पूर्णाहुति चल रही थी। इधर प्रणाम का क्रम भी शुरू हो चुका था। मुझे वहाँ देखकर पूज्यवर सब कुछ समझ गये। बोले- **"रास्ते में बात करेंगे, अभी जाकर नहा-धो लो"** स्नान-ध्यान के बाद भोजन किया। मथुरा से बालाघाट पहुँचने में दो रात्रि का जागरण था, मगर विश्राम का अवसर नहीं था। क्योंकि अगला कार्यक्रम जबलपुर में था और हमें तत्काल जबलपुर के लिए प्रस्थान करना था। गाड़ी में बैठकर गुरुदेव ने विस्तार से सारी बातें सुनीं।

इसके बाद मैंने माताजी का आग्रह सुनाया और निवेदन किया कि केवल एक दिन के लिए चलें ताकि स्वजनों-परिजनों, इष्ट मित्रों का शिष्टाचार किया जा सके। गुरुदेव कुछ गम्भीर हुए। एक क्षण रुककर बोले- मैंने अपने बच्चों को समय दिया हुआ है। मैं अपने काम के लिए उनको निराश करूँ, यह सम्भव नहीं। रही बात शिष्टाचार की, तो अब ताई जी के बाद घर में सबसे बड़ा मैं ही हूँ। मुझे किसी से शिष्टाचार निभाने की आवश्यकता नहीं। मैं जो कहूँगा उसी को पालन करना सबका कर्तव्य होगा।

मैंने समझाने का प्रयास किया कि किसी कार्यक्रम को स्थगित करने की जरूरत नहीं होगी, जबलपुर के बाद बिलासपुर के निर्धारित कार्यक्रम के बीच एक दिन खाली है। इसलिए जबलपुर का कार्यक्रम सम्पन्न कर तुरन्त मथुरा की ओर प्रस्थान किया जाए तो वहाँ सभी से मिलकर निर्धारित समय पर बिलासपुर पहुँच जाएँगे या एक दिन विलम्ब हो तो भाई लोग मिलकर सँभाल लेंगे। दरअसल इस आशय की सूचना हमने बिलासपुर के कार्यक्रम आयोजक श्री उमाशंकर चतुर्वेदी जी को दे दी थी कि संभव है कि एक दिन विलंब हो जाय। ऐसी परिस्थिति में आप लोग मिलकर संभाल लें लेकिन यह बात मैंने गुरुदेव को नहीं बताई। इधर बालाघाट से रवाना होते समय बिलासपुर से चतुर्वेदी जी भाई साहब के सुपुत्र नरेन्द्र जी आ पहुँचे। वे पूज्यवर को लेने आए थे। उन्हें देखते ही गुरुदेव बोल उठे 'तू चल, मैं आ जाऊँगा'। मुझसे बोले- "कर दिया न तूने लड़के को परेशान" आखिर निराश होकर मुझे अकेले ही लौटना पड़ा।

**प्रस्तुति : वीरेश्वर उपाध्याय**
**शांतिकुंज, हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )**

# घट-घट में बसै गुरु की चेतना

करीब २२-२३ साल पहले की बात है। तब मैं कॉलेज में पढ़ा करती थी। फरवरी का महीना था। मैं अपनी माँ के साथ ग्राम हर्री,जिला अनूपपुर में अन्नप्राशन संस्कार कराने गई थी। कार्यक्रम शाम का था। लौटने में थोड़ी देर हो गई। शहडोल की आखिरी बस छः बजे थी। हम जल्दी-जल्दी बस स्टैण्ड पहुँचे। लेकिन पता चला कि बस अभी ५ मिनट पहले ही जा चुकी है। यह सुनकर हम माँ बेटी दोनों के प्राण सूख गए। इसके बाद कोई दूसरी बस नहीं थी। माँ को वापस घर जैतहरी जाना था और मुझे शहडोल जाना था, क्योंकि मैं पढ़ाई कर रही थी। दूसरे दिन प्रैक्टिकल था। इसलिए जाना जरूरी था। माँ की बस आधा घंटे बाद थी, लेकिन वह हमें न अकेले छोड़ सकती थी न वापस साथ ले जा सकती थी। बस छूटने के थोड़ी देर बाद एक कार आई। उसे रुकने के लिए हाथ दिया। क्योंकि कार में बैठे व्यक्ति बैंक मैनेजर थे जिनसे जान पहचान थी। लेकिन वे रुके नहीं, आगे बढ़ गए। अब कोई साधन नहीं था। थोड़ी ही देर में घर के तरफ की बस आनेवाली थी। चिंता थी कि उसे भी न छोड़ना पड़ जाए। इसलिए हम और परेशान हो रहे थे। कोई उपाय न देखकर हम दोनों मिलकर गुरुदेव से प्रार्थना करने लगे कि गुरुदेव हमें कोई रास्ता बताइए। इस स्थिति में अब क्या करें ? आप ही कोई उपाय कीजिए। जाड़े का समय था। धीरे-धीरे अँधेरा बढ़ता जा रहा था। हम लोगों की परेशानी भी बढ़ती जा रही थी।

तभी अचानक दूसरी ओर से एक कार हमारे सामने आकर रुकी। हमने देखा ये तो मैनेजर साहब हैं। वे बोले- बेटा क्या बात है ? कहाँ जाना है ? मुझे लगा तुम लोगों को मेरे सहयोग की जरूरत थी। मैंने ध्यान नहीं दिया। मैं करीब दो किलोमीटर आगे चला गया था। लेकिन मुझे आभास हुआ कि तुम्हें सहयोग की जरूरत हैं इसलिए वापस चला आया। गुरुजी के असीम स्नेह को अनुभव कर हम धन्य हो गए। उसी दिन मैं यह जान पाई कि बच्चों की कितनी चिन्ता रहती है उन्हें। इस सज्जन में हमारे प्रति विशेष सद्भावना जगाकर २ कि० मी० से वापस बुला लाए।

मैनेजर साहब ने कहा- बेटी कहाँ तक जाओगी ? मैंने कहा- चाचाजी मुझे शहडोल जाना है। मेरी बस छूट गई है। आप कहाँ जा रहे हैं ? उन्होंने कहा- वैसे तो बुढ़ार तक जाना है, बैठो मैं छोड़ देता हूँ। आगे देखता हूँ। मेरी माँ मुझे कार में बैठाकर निश्चिन्त होकर दूसरी बस से घर के लिए रवाना हो गई। मैं जैसे ही बुढ़ार बस स्टैण्ड के पास पहुँची तो वहीं पर छूटी हुई बस भी खड़ी थी। बस का कण्डक्टर जोर-जोर से चिल्ला रहा था। शहडोल की आखिरी बस है। शहडोल की सवारी बस में आ जाएँ। मैं कार से उतर कर बस में बैठकर सकुशल अपने गंतव्य स्थान तक पहुँच गई।

उस दिन की घटना से मेरा रोम-रोम गुरुदेव के प्रति कृतज्ञ हो उठा। ऐसा था उनका साथ, संरक्षण, सहयोग जिसे हम शब्दों में नहीं व्यक्त कर सकते।

**प्रस्तुतिः श्यामा राठौर, शांतिकुंज ( उत्तराखण्ड )**

# गुरु चिन्तन से मिली कारागार से मुक्ति

यह घटना तुलसीपुर पुरानी बाजार जिला बलरामपुर उ.प्र. की है। श्री घनश्याम वर्मा दो भाई थे। बड़े भाई सीताराम जी थे, जिनके बच्चे नहीं थे। घनश्याम वर्मा जी के चार बच्चे सन्तोष, अशोक, रवि टिंकू एवं एक बच्ची थी। सीताराम जी के बच्चे न होने के कारण सम्पत्ति को लेकर भारी विवाद था। परिवार के अलावा अन्य लोग भी उनकी सम्पत्ति को हड़पना चाहते थे। दोनों परिवार में बँटवारा था। अलग बनाते खाते थे। मेरा इस परिवार से परिचय कुछ ही दिन पूर्व हुआ था। वर्मा जी के यहाँ बच्चे का जन्म दिवस संस्कार था। यज्ञ के माध्यम से संस्कार सम्पन्न हुआ। संस्कार के माध्यम से मैंने गुरुदेव एवं मिशन की जानकारी दी। उस समय मथुरा से एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ था "**ऋषि चिन्तन के सान्निध्य में**"। इस ग्रन्थ की स्थापना घर-घर में कराई जा रही थी। मैंने इस ग्रन्थ का एक पृष्ठ पढ़कर सुनाया, जिससे प्रभावित होकर उन्होंने भी अपने घर में ग्रन्थ को स्थापित किया। इसके बाद नियमित उपासना एवं "**ऋषि चिन्तन के सान्निध्य में**" ग्रन्थ का नियमित स्वाध्याय का क्रम चल पड़ा।

घटना २००३-०४ की है। सीताराम जी किसी कार्यवश बाहर गए हुए थे। जाने का प्रयोजन किसी को मालूम नहीं था। वे कब जाते, कब आते इस विषय में भाई के परिवार में किसी को कुछ मालूम नहीं रहता था; क्योंकि दोनों परिवार के निकास द्वार अलग-अलग दिशा में थे। एक दिन पड़ोस के एक व्यक्ति ने घनश्याम जी से सीताराम जी के बारे में पूछा कि कहाँ है, तो घनश्याम जी ने अनभिज्ञता जताई। पड़ोस के व्यक्ति ने कहा कि कई दिन से दिखाई नहीं पड़ रहे हैं और घर में ताला भी नहीं लगा है। लोगों ने घर के आस-पास जाकर देखा घर से अजीब-सी दुर्गन्ध आ रही थी। उन्होंने घनश्याम वर्मा के घर में यह बात बताई। घनश्याम वर्मा जी का बड़ा लड़का अन्य कुछ व्यक्तियों को साथ लेकर घर में घुसा। घर में सभी जगह देखा- कुछ नहीं मिला, जिससे दुर्गन्ध का कारण मालूम हो सके। काफी देर बाद देखा कि बाथरूम के दरवाजे में ताला लगा था। ताला तोड़ कर देखा तो सीताराम जी की लाश पड़ी थी। कई दिनों से पड़े रहने के कारण लाश से दुर्गन्ध आ रही थी। तुरन्त पुलिस स्टेशन को सूचित किया। यह घटना हवा की तरह चारों तरफ फैल चुकी थी। काफी भीड़ इकट्ठी हो गयी थी। पुलिस आई। सभी लोगों के सामने लाश को बाहर निकाला गया। लाश को पुलिस ने पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया। पुलिस छानबीन करने लगी।

घटना के दो तीन दिन बाद पुलिस आई और घनश्याम वर्मा जी के दो पुत्र सन्तोष और अशोक को पकड़ ले गई। उनके दोनों बच्चे एक एम.एससी. दूसरा बी.एससी कर रहा था। साथ ही वे सिविल परीक्षा की तैयारी भी कर रहे थे। काफी

छान-बीन हुई। जाँच के परिणाम स्वरूप अदालत ने दोनों बच्चों को दोषी मानकर गोण्डा भेजा। उसके पश्चात् आदर्श कारागार लखनऊ भेज दिया गया। इतनी विपरीत परिस्थितियों के बावजूद दोनों बच्चों की श्रद्धा कम नहीं हुई, बल्कि उस समय को वे स्वाध्याय एवं जप में लगातें। लेख भी लिखते और हमेशा प्रसन्न रहते। इस घटना को ईश्वरीय इच्छा और परीक्षा की घड़ी भर मानकर चलते रहे। कहते हैं कि जो सच्चा आध्यात्मिक होता है वह सुख दु:ख से परे होता है। उसका दु:ख तपस्या के समान होता है। ऐसा ही कुछ इन बच्चों के साथ हो रहा था।

एक दिन जेलर राउण्ड लगा रहे थे। सभी जगह चेक करने के बाद वे सन्तोष के कमरे में पहुँचे तो देखा एक युवक बहुत शान्त भाव में बैठा कुछ अध्ययन कर रहा है। जेलर मन ही मन सोचने लगे कि जेल में कैदी हमेशा परेशान, उद्विग्न और चिंतित रहते हैं। कुछ तो ऐसे विकराल होते हैं कि उनका जीवन कभी सुधरता नहीं है। सामान्य कैदियों को भी वे अपने जैसा बना लेते हैं। उन्होंने अपने चिन्तन को विराम दिया और अनायास ही सन्तोष के पास पहुँच गए। जेलर ने पूछा- क्या हाल है ? बच्चे ने सहज भाव से उत्तर दिया सब कुछ गुरुदेव की कृपा से ठीक है। उनकी कृपा से स्वाध्याय एवं ध्यान का अच्छा अवसर मिला है, वही कर रहा हूँ। बच्चे के विश्वास भरे शब्दों को सुनकर जेलर दंग रह गए। सोचा लोग अपनी परेशानी बताते हैं, मैं उनकी परेशानी दूर करता हूँ। इसे तो कोई परेशानी ही नहीं है। वे सोच में पड़ गए। उत्सुकता बढ़ी। उन्होंने पूछा कि कौन हैं तुम्हारे गुरुदेव ? और यह स्वाध्याय और ध्यान कैसा ? उस बच्चे ने **'ऋषि चिन्तन के सान्निध्य में'** पुस्तक का हवाला दिया और पुस्तक का एक पृष्ठ पढ़कर सुनाया- किसी परिस्थिति में विचलित न हों (पृष्ठ सं. ६७)। सुनकर जेलर बहुत प्रभावित हुए और उस पुस्तक के लिए अनुरोध किया कि कुछ दिन के लिए मुझे दे दो। बच्चे ने कहा कि यह पुस्तक मेरे गुरुजी ने दी है, इसे नहीं दे सकता। परन्तु जब मेरे पिताजी मुझसे मिलने आएँगे तो दूसरी पुस्तक आपके लिए मँगवा दूँगा। इस घटना से जेलर को उन बच्चों से आत्मिक लगाव हो गया।

जेलर प्रतिदिन दोनों बच्चों से मिलने आते। हालचाल पूछते और गुरुदेव के चिन्तन को सुनकर जाते, जो उस दिन का चिन्तन होता। अन्तत: परिणाम यह हुआ कि जेलर ने स्वयं सिफारिश कर बच्चों को जेल से रिहा करवा दिया। जेलर बच्चों के गुणों से परिचित हो चुके थे उन्हें विश्वास हो चुका था कि ये बच्चे निर्दोष हैं। बच्चों ने जेलर को गुरुदेव का वह अनुपम ग्रन्थ भेंट किया। जेलर ने भी गुरुदेव के साहित्य से प्रभावित होकर गुरुसत्ता से जुड़ने का सुयोग प्राप्त किया।

इस प्रकार घनश्याम जी के दोनों बच्चे गुरुकृपा से अपने जीवन को संस्कारित करने के साथ औरों के लिए भी प्रेरणास्रोत बन गए। गुरुकृपा की शक्ति की पहचान बहुत ही सहज ढंग से उनने कई लोगों को करा दी।

**प्रस्तुति :- चन्द्रमणि शुक्ला**
**दे.सं.वि.वि., हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )**

# एक ही दिन में मिले तीन जीवनदान

बचपन से ही साधना में मेरी गहरी रुचि थी। ध्यान मुझे स्वतः सिद्ध था। तरह-तरह के अनुभव होते थे, जिन्हें किसी से कहने में भी मुझे डर लगता था। पर धीरे-धीरे उनका अर्थ समझ में आने लगा।

एक दिन न जाने कहाँ से एक महात्मा मस्तीचक आए और धूनी जलाकर बैठ गए। उनका नाम था- बाबा हरिहर दास। उनसे प्रभावित होकर मैंने दीक्षा लेने की इच्छा व्यक्त की। उन्होंने मुस्कराते हुए कहा- मैं तुम्हारा गुरु नहीं हो सकता हूँ। तुम्हारे गुरु इस धरती पर अवतरित हो चुके हैं। मेरा उद्धार भी तुम्हारे गुरु के द्वारा ही होना है। एक दिन वे मथुरा से यहाँ आएँगे और इसी मिट्टी की कुटिया में आकर मेरा उद्धार करेंगे।

बाबा हरिहर दास ने जिस दिन मुझे यह बात बताई, उस दिन के पहले से ही मेरे सपने में एक महापुरुष का आना शुरू हो चुका था। वे खादी के धोती-कुर्ते में नंगे पाँव आया करते थे। उनके चेहरे से अलौकिक आभा टपकती रहती थी। जब भी वे मेरे सपने में आते, मैं यंत्रचालित-सा उनके चरणों में अपना माथा टेक देता। फिर वे मेरा सिर सहलाकर मुझे आशीर्वाद देते और बिना कुछ कहे वापस चले जाते।

वर्षों तक यही क्रम चलता रहा। लेकिन एक रात ऐसी भी आयी, जब उन्होंने अपना मौन तोड़ दिया। अन्तरंगता से आप्लावित शब्दों में उन्होंने मुझसे कहा-अभी कितने दिन यहाँ रहना है। मैं वहाँ तुम्हारी राह देख रहा हूँ।

तभी से एक अनजानी-सी बेचैनी मेरे भीतर घर कर गई। अब तक मुझे इसका आभास हो चुका था कि यही मेरे पूर्व जन्म के गुरु हैं। लेकिन प्रश्न यह था कि इस अवतारी चेतना को मैं कहाँ खोजूँ? कुछ ही दिनों बाद दैवयोग से मैं मथुरा पहुँचा। वहीं पर मुझे मिले बार-बार मेरे सपने में आने वाले मेरे परम पूज्य गुरुदेव-युगऋषि श्रीराम शर्मा आचार्य!

पहली ही मुलाकात में उनसे मुझे ऐसा प्यार मिला कि मैं उन्हीं का होकर रह गया। उनके पास रहते-रहते करीब चार वर्ष बीत गए थे। आचार्यश्री के मार्गदर्शन में साधना और उपासना के बल पर मैं अपने जीवन में होने वाली अनेक घटनाओं के बारे में जानने लग गया था।

इसी क्रम में एक दिन मुझे अपनी मृत्यु के समय का ज्ञान हो गया। तब मैंने पूज्य गुरुदेव से कहा- इस शरीर से आपकी सेवा अगले तीन-चार महीने तक ही हो सकेगी। गुरुदेव ने पूछा-ऐसा क्यों? मैंने मुस्कुराते हुए कहा- मेरी मृत्यु होने वाली है। मरने के बाद भूत बनकर शायद आपकी सेवा कर सकूँ, पर इस शरीर से तो सेवा नहीं हो पाएगी। जवाब में पूज्य गुरुदेव भी मुस्कराने लगे। उन्होंने कहा-तुम्हें इसी शरीर से मेरा काम करना है।

कुछ दिन और बीत गए। मृत्यु को कुछ और करीब आया जानकर मैंने पूज्य गुरुदेव के सामने फिर से यही बात दुहराई। गुरुदेव झल्ला उठे। उन्होंने डपटते हुए

पूछा–अच्छा बता, तेरी मृत्यु कैसे होगी ? मैंने कहा–आज से ठीक दो महीने बाद मुझे एक साँप काट लेगा और उसी से मेरी मृत्यु हो जाएगी। मेरी बात सुनकर उनकी झल्लाहट कुछ और बढ़ गई। उन्होंने कहा–तू अपना काम करता चल। मरने की बकवास छोड़ दे। मुझे लगा कि गुरुदेव का इशारा शरीर की नश्वरता की ओर है। मैं भी करीब आती हुई मौत को भूलकर अपने काम में मगन हो गया।

महीने–डेढ़ महीने बाद तो मैं इस बात को पूरी तरह से भूल गया था कि मौत मेरी तरफ तेजी से बढ़ती आ रही है। आखिरकार वह दिन भी आ ही गया जिसे नियति ने मेरी मृत्यु के लिए निर्धारित कर रखा था। सुबह के समय मैं, शरण जी तथा दो–तीन अन्य परिजनों के साथ नीम के पेड़ के नीचे बैठा था। गुरुदेव सामने के कमरे में थे। हम सब उनके बाहर निकलने का ही इन्तजार कर रहे थे। समय बीतता जा रहा था, पर वे बाहर निकलने का नाम नहीं ले रहे थे। विलम्ब होता देख मैं उधर जाने की सोच ही रहा था कि अचानक पेड़ से एक भयंकर विषधर सर्प मेरे सिर पर गिरा। उसी क्षण मुझे अपनी ध्यानावस्था में देखा हुआ दृश्य याद आ गया कि आज मुझे मृत्यु से कोई बचा नहीं सकता है। पर आश्चर्य! उस काले साँप का फन मेरी आँखों के आगे नाच रहा था। उस काले साँप ने दो–तीन बार अपने फन से मेरे सिर पर और छाती पर प्रहार किया, पर काट नहीं सका। ऐसा लगा कि किसी ने उसके फन को नाथ कर रख दिया है।

अपने जीवन में समय को पूरी तरह से साध लेने वाले मेरे गुरुदेव समय के बीत जाने पर भी आज कमरे से बाहर क्यों नहीं निकले, यह बात अब मेरी समझ में आ चुकी थी। डसने की कोशिश में असफल हुआ वह साँप धीरे–धीरे मेरे शरीर पर सरकता हुआ नीचे आ गया। अब तक वहाँ कुछ और लोग भी जमा हो गए थे। सबने मिलकर उस साँप को मार दिया। तब तक वहाँ इस बात को लेकर कोहराम मच गया कि शुक्ला जी को साँप ने काट खाया है। गुरुदेव अपने कमरे से निकले। इन सारी बातों से अनजान बनते हुए उन्होंने पूछा –क्या हुआ शुक्ला ? मैंने मरे हुए साँप को दिखाते हुए कहा–यह सर्प मेरा काल बनकर आया था। लगता है मैं बच गया। गुरुदेव ने गंभीर स्वर में कहा–इस सर्प को मारना नहीं चाहिए था। किसने मारा ? किसी ने मुँह नहीं खोला। सभी सिर झुकाए खड़े रहे। वातावरण को सहज बनाने के लिए गुरुदेव बोले–खैर, जाने दो। स्नान कर लो। पूज्यवर की शक्ति सामर्थ्य से अभिभूत होकर मैं स्नान करने के लिए चल पड़ा।

उस दिन भी रोज की भाँति ही दोपहर के बाद वाले कार्यक्रम में परम वन्दनीया माताजी के गायन में मुझे तबले पर संगत करनी थी। मंच पर सारी व्यवस्था हो चुकी थी। तबला, हारमोनियम रखे जा चुके थे। माताजी के लिए माइक सेट करना था। जैसे ही मैंने माइक को पकड़कर उठाना चाहा, मेरा हाथ माइक से चिपक गया। माइक में २४० वोल्ट का करंट दौड़ रहा था। अपनी पूरी ताकत लगाकर मैंने हाथ झटकना चाहा, पर झटक नहीं सका। फिर मैं चीखकर बोला–लाइन काटो। मुझे लगा कि अब मेरी मृत्यु निश्चित है। सुबह साँप से तो मैं बच गया था, पर बिजली के इस करंट से

बचना असंभव है। लेकिन मेरे और मेरी मौत के बीच तो पूज्य गुरुदेव की तपश्चर्या की ताकत दीवार बनकर खड़ी थी। उन्होंने भेदक दृष्टि से बिजली के तार की ओर देखा और तार का कनेक्शन कट गया। माइक ने मेरा हाथ छोड़ दिया और मैं झटके से नीचे गिर पड़ा। सब लोग दौड़कर मेरे पास आ गए। पूज्य गुरुदेव भी स्थिर चाल से चले आ रहे थे। लोगों ने उन्हें रास्ता दिया। उन्होंने पास आकर पूछा–कैसे हो बेटे ? बोलना चाहकर भी मैं कुछ बोल नहीं सका। ऐसा लग रहा था, जैसे पूरे शरीर को लकवा मार गया हो।

डॉक्टर बुलाये गए। उन्होंने कहा–बिजली का झटका बहुत जोर का लगा है। इसका असर मस्तिष्क पर भी पड़ सकता है। ठीक होने में कम से कम तीन महीने तो लग ही जाएँगे। डॉक्टर के चले जाने के बाद पूज्य गुरुदेव ने कहा –इसके सारे शरीर में सरसों के तेल से मालिश करो।

संगीत का कार्यक्रम स्थगित कर दिया गया। मैं अकेले में बिस्तर पर लेटा हुआ गुरुसत्ता की सर्वसमर्थता पर मुग्ध हो रहा था। कुछ ही घण्टों के दौरान दो बार काल मुझे निगलने के लिए आया और दोनों बार उन्होंने मुझे मौत के मुँह से बाहर निकाल लिया। मैं उनके प्रति कृतज्ञता के भाव में डूबता जा रहा था कि न जाने कब आँखों में गहरी नींद समाती चली गई। आधी रात के बाद अचानक मेरी नींद टूटी। ऐसा लगा कि कोई मेरी छाती पर बैठकर मुझे जान से मारने की कोशिश कर रहा है और मैं अब कुछ ही क्षणों का मेहमान हूँ। एक ही दिन में तीसरी बार मैं अपनी मृत्यु को करीब से देख रहा था। दोपहर बाद के बिजली के झटके ने मेरी सारी ताकत पहले ही निचोड़ ली थी। इसीलिए चाहकर भी मैं कोई प्रतिकार नहीं कर सका। जब मुझे लगा कि अगली कोई भी साँस मेरी अन्तिम साँस साबित हो सकती है, तो मेरे मुँह से सिर्फ दो ही शब्द निकले–हे गुरुदेव! उनका नाम लेना भर था कि मेरी छाती पर सवार मेरा काल शून्य में विलीन हो गया। इस प्रकार परम पूज्य गुरुदेव ने विधि के विधान को चुनौती देकर एक ही दिन में तीन–तीन बार मुझे नया जीवन दिया।

सुबह होते ही पत्नी ने पूज्य गुरुदेव के कल के आदेश का पालन करने की तत्परता दिखाई। सरसों के तेल की मालिश शुरू हुई। बीस मिनट की मालिश में ही एक चौथाई आराम मिल गया। मालिश का यह क्रम करीब एक हफ्ते तक चलता रहा। डॉक्टर साहब ने तो जोर देकर कहा था कि मुझे ठीक होने में कम से कम तीन महीने लग जायेंगे, लेकिन आठवें दिन ही मैं अपने आपको पहले से भी अधिक ताकतवर महसूस करने लगा था। उनकी दवा धरी की धरी ही रह गई थी।

**प्रस्तुतिः रमेशचन्द्र शुक्ल**
**मस्तीचक, (बिहार)**

# मृत महिला को मिला नया जीवन

घटना दिसम्बर सन् १९६९ की है। युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य यज्ञ कराने प्रथमत: पटना पहुँचे। इस यज्ञ में शामिल होने के लिए मेरे पिताजी श्री विजय कुमार शर्मा अपनी माता जी-मेरी दादी-के साथ जमालपुर से आकर यज्ञ में शामिल हुए। विशाल जन-समूह के बीच हर्षोल्लास के साथ वैदिक रीति से यज्ञ का शुभारम्भ हुआ। यज्ञ की समाप्ति पर सभी अपने-अपने घर की ओर चल पड़े। पिताजी भी दादी जी के साथ मुंगेर की वापसी की ट्रेन पकड़ने पटना रेलवे स्टेशन पर आए। वहाँ पहुँचते ही दादी के पेट में अचानक बहुत तेज दर्द शुरू हुआ। लम्बी यात्रा और दिन भर की थकान से पेट में गैस बन जाने की आशंका को लेकर पिताजी ने दादी को नींबू-पानी पिलाया। दादी की तबीयत बजाय सुधरने के और भी बिगड़ती चली गई। दादी के मुँह से झाग निकलना शुरू हुआ और कुछ ही देर बाद दादी ने दम तोड़ दिया।

दादी को मरे हुए चार घन्टे गुजर चुके थे। चेहरे पर मक्खियाँ भिनभिनाने लगी थीं। लाश के चारों ओर भीड़ इकट्ठी हो गई थी। स्टेशन मास्टर रेलवे स्टेशन के अन्य कर्मचारियों के साथ लाश को जमालपुर भेजने की तैयारी में व्यस्त थे।

तभी प्लेटफॉर्म नं.४ के जन-समुदाय ने नारा लगाया-गुरुजी की जय...... गायत्री माता की जय.....। पिताजी प्लेटफार्म नम्बर-१ पर थे। नारे की ऊँची आवाज से उनका ध्यान प्लेटफॉर्म नं.४ पर गया। उन्होंने दूर से गुरुजी को देखा। दौड़कर रेल की पटरियों को फलाँगते हुए प्लेटफार्म नं.४ पर पहुँचे। पिताजी की आँखों के आँसू रुक नहीं रहे थे। उन्होंने कँपकँपाती हुई आवाज में गुरुजी से कहा- गुरुजी! मेरी माँ मर गई। उन्हें ......। आगे के शब्द पिताजी के गले में ही अटके रह गए। वे फूट-फूटकर रोने लगे। गुरुदेव ने पिताजी के कंधे पर हाथ रखा और साथ लेकर दो नं. प्लेटफार्म पर जाने के लिए पुल की ओर बढ़े। भीड़ पीछे-पीछे चल पड़ी। क्षण भर के लिए गुरुजी ने दादी की लाश को देखा और मुस्कुराते हुए बोल पड़े- उठा..उठा..माँ को उठा। पिता जी किंकर्तव्यविमूढ़ से खड़े रहे।

गुरुदेव के दुबारा कहने पर उन्होंने यंत्रवत माँ को उठाने की चेष्टा की। ...और आश्चर्य! दादी माँ सचमुच उठकर बैठ गईं। उस वक्त दादी की उम्र प्रौढ़ावस्था की दहलीज पर खड़ी थी। गुरुदेव ने पिताजी से कहा- माता जी को घर ले जा, अब इनकी उम्र दो गुनी हो चुकी है। पिताजी, दादी जी को लेकर खुशी-खुशी वापस जमालपुर पहुँचे। तभी से पूरा परिवार गुरुदेव को भगवान मानकर उनके युग परिवर्तन के अनुपम अभियान में जुट गया। युगऋषि का कथन अक्षरश: सत्य हुआ। दादी माँ गुरु-कृपा से उनकी दी हुई दोगुनी उम्र (८० वर्षों) तक आनन्दपूर्वक लोकसेवा करती रहीं और अन्तत: ऋषि सत्ता में विलीन हो गईं।

**प्रस्तुतिः सुदर्शन कुमार**

**देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, ( उत्तराखण्ड )**

# माँ के लहूलुहान हाथ

मेरी धर्मपत्नी ने गुरुदेव के पास रहकर देव कन्याओं का शिविर किया था। विवाह के बाद उनके माध्यम से मैं भी गुरुदेव से जुड़ गया। पत्नी की पहली डिलीवरी के समय हम बहुत परेशान थे, वहाँ हमारे गाँव में न कोई साधन, न सहयोगी थे। उस परिस्थिति में हमारे पास प्रार्थना के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं था। डिलीवरी के दिन पत्नी बहुत तकलीफ में थीं। उनकी हालत देख मैं गुरुदेव से प्रार्थना करने लगा। संयोग से समय पर एक नर्स मिल गई। उन्होंने बड़ी सहजता के साथ डिलीवरी करा दी। तब से गुरुदेव के प्रति श्रद्धान्वित मैं कोई काम शुरू करने से पहले उनसे अवश्य पूछता हूँ।

सन् १९९१ में मैं राइस मिल चलाने जा रहा था। माताजी से आशीर्वाद लेने गया। राइस मिल की बात सुनकर माताजी गम्भीर हो गईं। बोलीं- दुकान पर तो बैठ रहा है, क्या दिक्कत है? मैंने कहा- भाई लोगों के पास काम नहीं है इसलिए मिल लगाना चाहता हूँ। माताजी ने अनुमति देते हुए कहा- ठीक है, जा मशीन लगा। मैंने राइस मिल ले ली। ठेका में काम शुरू किया। लेकिन साल भर में लगभग छः महीने मिल बंद रही। उसके बाद बहुत काम भी नहीं हुआ। फिर भी उस साल नुकसान नहीं हुआ।

दूसरे साल अच्छी तरह मिल चला सकें इसके लिए फिर आशीर्वाद लेने गया तो माताजी ने कहा इस साल चला ले, लेकिन अगले साल मिल मत चलाना। इस साल भी ज्यादा काम तो नहीं हुआ, लेकिन नुकसान भी नहीं हुआ। तीसरे साल यानि १९९३ में मैंने खुद अपने दम पर मिल चलाया। इस बार चार-पाँच गुना अधिक काम होने के बावजूद मेरा बहुत नुकसान हुआ। करीब बीस लाख रुपये का नुकसान हो गया। इसी साल मिल में एक दुर्घटना हुई। राइस मिल बॉयलर फट गया। लगभग २०-२५ मजदूर काम कर रहे थे किसी को कुछ नहीं हुआ। बॉयलर के टुकड़े बिखर कर आस-पास के घरों के ऊपर गिरे; रोड पर गिरे। किन्तु आश्चर्य की बात कि किसी को चोट नहीं आई।

उसी रात माताजी सपने में दिखाई दीं। उन्होंने कहा- मानता नहीं, देख मेरे हाथ लहूलुहान हो गए हैं। मैं देखकर सन्न रह गया। उनकी दोनों हथेलियाँ खून से लथपथ थीं। अब समझ में आया कि इतनी बड़ी दुर्घटना में किसी के हताहत न होने के पीछे माताजी का सक्रिय प्रयास था। मुझे अपनी मनमानी पर अफसोस होने लगा। माताजी ने पहले ही मना किया था। माँ के उस वत्सल रूप को देख मेरा हृदय गद्‌गद् हो गया। आज भी उस क्षण को याद करता हूँ तो आँखों में आँसू भर आते हैं।

**प्रस्तुति : पुरुषोत्तम सुल्तानिया**
**जानकी ज्यापा ( छत्तीसगढ़ )**

# इसी बुड्ढे ने बचाई थी मेरी जान

सन् १९८८ ई. की बात है। गायत्री शक्तिपीठ, बलसाड़ की एक विशेष गोष्ठी में गायत्री महामंत्र की असीम शक्तियों पर परिचर्चा हो रही थी। धीरे-धीरे परिचर्चा का विषय इस युग के अन्यतम गायत्री साधक पं. श्रीराम शर्मा 'आचार्य' की अलौकिक क्षमताओं की ओर मुड़ने लगा। कई परिजनों ने सूक्ष्म रूप से पूज्य गुरुदेव द्वारा जीवन-रक्षा किए जाने के विस्मयकारी प्रसंगों की झड़ी लगा दी। इन चर्चाओं से सभी इस नतीजे पर पहुँचे कि ऐसे अद्भुत् कार्यों का सम्पादन या तो ईश्वर कर सकते हैं या ईश्वर के अवतार।

इन चर्चाओं से अभिभूत होकर कई वृद्ध परिजनों ने एक स्वर में कहा-काश! हम अभागे लोग भी अवतार पुरुष के दर्शन कर पाते। वृद्ध परिजनों की मार्मिक पीड़ा देखकर कुछ युवकों ने इन्हें हरिद्वार ले जाने का बीड़ा उठाया।

अगले दिन उन युवकों ने हरिद्वार की यात्रा की योजना पर विचार-विमर्श शुरू किया। गुरु दर्शन के लिए जाने की ललक से भरे ग्रामीणों की संख्या बढ़ती ही जा रही थी। ६०० से अधिक लोगों की सूची तैयार हो चुकी थी। इतनी बड़ी संख्या को देखकर आयोजक युवकों ने एक पूरी ट्रेन बुक कराने का निर्णय लिया।

बलसाड़ स्टेशन से स्पेशल ट्रेन से यात्रा शुरू हुई। रेलगाड़ी के सभी डिब्बों का वातावरण गायत्रीमय हो गया था। किसी डिब्बे में गायत्री महामंत्र का सामूहिक जप, किसी में वरिष्ठ परिजनों का उद्बोधन, किसी में पूज्य गुरुदेव तथा वन्दनीया माता जी के प्रेम-निर्झर की चर्चाएँ, तो किसी में युग संगीत का गायन-वादन। सभी हर्षोल्लास में डूबे यात्रा करते रहे।

दूसरे दिन, रात के १०:०० बजे ट्रेन दिल्ली पहुँची। आधे घंटे बाद हरिद्वार के लिए रवाना हुई। ट्रेन अभी आउटर सिग्नल को क्रॉस कर ही रही थी कि बीच के एक डिब्बे से अति वृद्ध महिला, जो खुले दरवाजे के पास बैठी थीं, ट्रेन के तेज झटके से संतुलन खोकर, नीचे गिर पड़ीं। महिला के नीचे गिरते ही पूरे ट्रेन में कोहराम मच गया-बाई गिर पड़ी...... बाई गिर पड़ी। शोर-शराबे और अफरा-तफरी के बीच एक युवक ने चेन पुलिंग की। ट्रेन रुक गई।

बहुत सारे परिजन टॉर्च लेकर उतरे और बाई को खोजते हुए विपरीत दिशा में बढ़ने लगे। ये लोग कुछ ही दूर बढ़े थे कि दिल्ली की तरफ से दूसरी ट्रेन आती हुई दिखी। दिल्ली से तो वैसे भी बहुत सारी रेल गाड़ियाँ अलग-अलग जगहों के लिए चलती ही रहती हैं। सबको यह देखकर आश्चर्य हुआ कि ग्रीन सिग्नल होने के बावजूद ट्रेन की रफ्तार कम होती जा रही है। धीरे-धीरे वह दूसरी ट्रेन उस ट्रेन के सामने आकर रुक गई जो इन लोगों को लेकर हरिद्वार जा रही थी।

जिस डिब्बे से बूढ़ी औरत गिरी थी, ठीक उसी डिब्बे के सामने वाले डिब्बे से कुछ लोगों ने ऊँची आवाज में कहा- इस ट्रेन से अभी थोड़ी देर पहले एक बाई गिर पड़ी थी। उसे हम सुरक्षित साथ ले आये हैं। इसके साथ के लोग यदि इस डिब्बे में हों,

तो आकर इसे ले जाएँ। सामने के डिब्बे से बहुत सारी औरतें नीचे उतर आईं। उधर बाई को खोजने के लिए निकल पड़े लोग भी वापस लौटकर डिब्बे के पास आ चुके थे। सभी ने जोर से कहा- हाँ..हाँ। हम लोगों ने इसी बाई की खोज करने के लिए ट्रेन रुकवाई थी और दिल्ली की ओर जाने लगे थे। बाई को दूसरी ट्रेन से नीचे उतारकर वापस आरक्षित ट्रेन में बिठाया गया। बाई एकदम ठीक-ठाक दिख रही थी। फिर भी कई लोगों ने जिज्ञासावश पूछा-क्या हुआ था, कैसे गिरी, कहीं चोट तो नहीं लगी? बाई ने कहा- मैं बिल्कुल ठीक हूँ, कुछ नहीं हुआ है, अचानक गिर पड़ी थी। एक बूढ़े ने मुझे गिरने से पहले ही अपने हाथों में उठा लिया और ले जाकर आराम से उस ट्रेन में बिठा दिया।

ट्रेन का वातावरण एक बार फिर गायत्रीमय हो चुका था। लोग पहले की तरह गायन-वादन में तल्लीन हो गए। सुबह होते-होते ट्रेन हरिद्वार पहुँची।

हरिद्वार से शांतिकुंज पहुँचने पर सभी नहा-धोकर गुरुदेव के दर्शन के लिए गए। साथ में वह बूढ़ी महिला भी थी। उसकी नजर जैसे ही गुरुदेव पर पड़ी, वह जोर से चिल्ला उठी- यही है.....यही वह बुड्ढा है, जिसने मेरी जान बचायी है। जब मैं ट्रेन से नीचे गिरी थी, तो इसी ने मुझे अपने हाथों में सम्हाल कर दूसरी ट्रेन में बिठाया और फिर तुरंत गायब हो गया।

पूज्य गुरुदेव के दर्शन को आये हुए सभी लोग महिला की कहानी सुनकर विस्मय-विमुग्ध हो गए। गुरुसत्ता की उस असीम अनुकम्पा से सभी की आँखें भर आईं।

**सौजन्यः ई. एम. डी. शान्तिकुञ्ज,**
**हरिद्वार (उत्तराखण्ड)**

## आत्मिक प्रगति हेतु अवलम्बन की आवश्यकता

सद्गुरु की तलाश प्रत्येक श्रेयार्थी साधक को करनी चाहिए। इस पुण्य प्रयोजन के लिए प्रज्ञा अभियान के संचालन तंत्र परम पूज्य गुरुदेव एवं वन्दनीया माताजी का चयन किया जा सकता है। वे इन दिनों प्रज्ञा परिजनों की तात्कालिक आवश्यकता पूरी करने के लिए युग संधि में आत्मशक्ति के व्यापक उत्पादन का महत्व समझाते हुए ब्रह्मनिष्ठ आत्माओं के सृजन में निरत हैं। सूक्ष्म व कारण शरीर से वे स्वयं व वन्दनीया माता भगवती देवी सबकी परोक्ष सहायता करने में पूर्ण समर्थ हैं।

# काल के गाल से निकाला महाकाल ने

नौ साल पहले की बात है। तब मैं लखनऊ में कार्यरत था-उत्तर प्रदेश के कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान विभाग में। मासिक पत्रिका अखण्ड ज्योति के वैज्ञानिकता से भरे अध्यात्मपरक आलेखों से मेरी दृष्टि बदल चुकी थी। युग निर्माण योजना के क्रान्तिकारी विचार मेरे मानस पटल पर अंकित हो चुके थे। रविवार के साप्ताहिक अवकाश तथा अन्य सभी छोटी-बड़ी छुट्टियों में सुबह सात बजे से रात के दस बजे तक मिशन के काम में डूबा रहता था।

उन दिनों मिशन के विभिन्न कार्यक्रमों में ग्राम स्वावलम्बन पर विशेष ध्यान दिया जा रहा था। सभी परिजनों ने मिलकर एक विशेष इकाई-गौ ग्राम उत्कर्ष संस्थान की स्थापना की थी। इसी इकाई के तत्वावधान में सीतापुर के परिजनों ने ग्राम स्वावलम्बन विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया था। गोष्ठी का समय सुबह १० बजे से १२ बजे तक का था। उसी दिन, शाम के चार बजे लखनऊ में कारगिल में शहीद हुए नौजवान लेफ्टीनेंट हरि सिंह बिष्ट का श्रंद्धाजलि समारोह आयोजित था। इस समारोह में तत्कालीन गर्वनर महामहिम विष्णुकान्त शास्त्री आमन्त्रित थे, जिसमें मुझे मुख्य कार्यकर्त्ता के दायित्व का निर्वहन करना था।

सीतापुर जनपद लखनऊ से ६०-७० कि.मी. दूर दिल्ली राजमार्ग पर स्थित है। रास्ता लगभग दो घंटे का है। सीतापुर जाने के लिए मड़ियांव थाने के पास से टाटा सूमो और बसें मिल जाती है।

मैंने सोचा कि मड़ियांव थाने तक अपने स्कूटर से जाकर उसे पास के मेडिकल स्टोर पर खड़ा करके टाटा सूमो से सीतापुर जाया जाये, ताकि वापसी में मड़ियांव थाने से श्रद्धांजलि समारोह स्थल तक समय पर पहुँचा जा सके। मैं सुबह सवेरे संस्थान के नैष्ठिक कार्यकर्त्ता डॉ. रामकिशोर गुप्ता को साथ लेकर घर से सीतापुर के लिए चला। स्कूटर (यू.पी. ३२ ए.एफ. ०२३३) से मड़ियांव थाने पहुँचा।

वहाँ पहुँचकर मैंने देखा कि एक टाटा सूमो जाने के लिए तैयार खड़ी है और उसकी आगे की दो सीटें खाली हैं। मैंने गुप्ता जी से कहा-दौड़कर दोनों खाली सीटें कवर कर लीजिए।

गुप्ता जी स्कूटर से उतरकर टाटा सूमो की ओर दौड़ पड़े। मैं स्कूटर पार्क करने के लिए मेडिकल स्टोर के पास पहुँचा, तो देखा कि स्टोर बन्द है। मैंने तुरंत यू टर्न लिया और गुप्ता जी को आवाज दी-गुप्ता जी, वापस आइए। स्कूटर पार्किंग के लिए हमें कहीं और जाना पड़ेगा।

गुप्ता जी को आगे की सीट मिल चुकी थी, उन्होंने अपने हाथों में स्वावलम्बन गोष्ठी में प्रदर्शित की जाने वाली विभिन्न सामग्रियों की एक पोटली भी संभाल रखी थी, इसलिए कुछ-एक पल उनकी आनाकानी में बीत गए। दूसरी बार आवाज देने पर वे मन मारकर टाटा सूमो से उतरे और आकर स्कूटर पर बैठ गए।

पार्किंग के लिए मैने मड़ियांव थाने जाने का मन बनाया, क्योंकि वहाँ के एक सिपाही श्री इन्द्रपाल यादव मिशन के सक्रिय कार्यकर्त्ता थे। उनका नाम मुझे आज भी याद है, किन्तु आश्चर्य कि थाने के अन्दर जाते ही मैं उसका नाम भूल गया।

जब दिमाग पर बहुत जोर डालने के बाद भी नाम याद नहीं आया, तो मुझे लगा कि यहाँ भी मेरा काम नहीं बनेगा। थाने में किसी अपरिचित पुलिस वाले से इस प्रकार की अपेक्षा की नहीं जा सकती थी।

स्कूटर थाने से बाहर निकालकर मैं सोचने लगा कि अब इसे कहाँ खड़ा किया जाए। तभी मुझे बक्शी का तालाब कस्बे के ठाकुर साहब याद आए। आठ-दस कि.मी. आगे की ही बात थी। वहाँ सड़क के किनारे ही ठाकुर साहब की दुकान थी। यह विचार इसलिए भी जँच गया कि ठाकुर साहब मेरे पुराने परिचित थे और व्यस्तताओं के कारण उनसे मिले हुए एक अर्सा गुजर चुका था।

मैंने सीतापुर जाने वाली सड़क पर स्कूटर बढ़ाया, मुश्किल से ५० गज ही आगे बढ़ा था कि मैंने देखा-सड़क की दाहिनी ओर एक दुकान के ऊपर एक बड़ा-सा बोर्ड लगा है। उस पर लिखा है-तिवारी फोटो स्टूडियो। मैंने हँसी-हँसी में गुप्ता जी से कहा-सामने तिवारी जी की दुकान है, क्यों न ब्राह्मणवॉद का कुछ लाभ उठा लूँ। गुप्ता जी ने ठहाका लगाकर सहमति जताई।

मैंने स्टूडियो के आगे स्कूटर खड़ा किया और काउन्टर के पीछे बैठे युवक से कहा-तिवारी जी, नमस्कार। मैं राम महेश मिश्र हूँ, गायत्री परिवार से जुड़ा हूँ। मुझे सीतापुर जाना है। क्या मैं वापस आने तक अपना स्कूटर यहाँ खड़ा कर सकता हूँ?

युवक ने आदर भाव से हाथ जोड़कर मुझसे कहा-आप ही श्री राम महेश मिश्र जी हैं? मेरे मामा जी आपकी बहुत चर्चा करते हैं।

मैने पूछा-क्या नाम है आपके मामा जी का?

उसने कहा-श्री रामगोपाल बाजपेयी। ये सीतापुर में रहते हैं।

मैं सुखद आश्चर्य से बोल पड़ा-अरे मैं तो उन्हीं के यहाँ जा रहा हूँ। उन्होंने ही तो गोष्ठी का आयोजन किया है।

इतना सुनते ही वह युवक आव भगत की मुद्रा में आ गया। मैं बड़ी मुश्किल से उसके चाय नाश्ते के आग्रह को टालने में सफल हो सका।

स्कूटर खड़ा करने की चिंता से मुक्त होकर हम दोनों पैदल ही वापस टैक्सी स्टैण्ड की ओर बढ़ चले। वहाँ पहुँचकर हमने देखा कि जिसमें गुप्ता जी पहले बैठे थे, वह टाटा सूमो जा चुकी थी। दूसरी टाटा सूमो आधी खाली थी। बीच वाली सीट पर हम दोनों आराम से बैठ गये।

सवारियों से पूरी तरह लद जाने के बाद टाटा सूमो सीतापुर के लिए रवाना हुई। सफर शुरू होने के कोई २० मिनट बाद की बात है। गाड़ी बक्शी का तालाब को पीछे छोड़ती हुई इटौंजा बाजार से गुजर चुकी थी।

अचानक हमारी टाटा सूमो की रफ्तार धीमी हो गई। हमने गर्दन उचकाकर देखा-आगे एक टाटा सूमो क्षत-विक्षत हुई पड़ी थी, उसके ऊपर शीशम का एक

विशाल दरख्त गिर पड़ा था। हमारी गाड़ी दुर्घटना स्थल के पास आकर रुक गई।

हमने खिड़की से सिर निकालकर सड़क पर खड़े एक व्यक्ति से पूछा- क्या यह एक्सीडेंट रात में हुआ है? उसका उत्तर था-नहीं, थोड़ी देर पहले। तभी ड्राइवर ने पलटकर मुझसे कहा-साहब, ये वही गाड़ी है, जो मड़ियांव थाना स्टैण्ड पर मेरी गाड़ी के आगे खड़ी थी और आपके साथी सीतापुर जाने के लिए उसमें बैठ भी चुके थे।

यह सुनकर हम दोनों सन्न रह गए। नीचे उतर कर देखा, सामने ६ लाशें पड़ी हुई थीं। बाकी लोगों को अस्पताल ले जाया जा चुका था। बाद में पता चला कि उस टाटा सूमो की एक भी सवारी जिन्दा नहीं बची थी।

तब हमने समझा कि मेडिकल स्टोर का बन्द होना, थाने जाकर सिपाही का नाम भूल जाना और थोड़ी देर बाद ही तिवारी फोटो स्टूडियो के मालिक से घनिष्ठ परिचय हो जाना संयोग मात्र नहीं था। यह व्यवस्था महाकाल के अवतार द्वारा हम दोनों गायत्री परिजनों को मौत के मुँह से निकाल लेने के लिए ही बनाई गई थी।

**प्रस्तुतिः राम महेश मिश्र**
**देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )**

## मोत्कर्ष का मूल आधारः श्रद्धा

श्रद्धा को मानव जीवन की सर्वोपरि सामर्थ्य के रूप में समझा जा सकता है। व्यक्तित्व का निर्धारण इसी से होता है। श्रद्धा से अनेक क्रिया-कलापों का सूत्र संचालन और उन्हें सफलता के उच्च स्तर तक पहुँचा सकना सम्भव होता है। आत्मा का सबसे विश्वस्त और सबसे घनिष्ठ सचिव श्रद्धा ही है। उसी के सहारे आत्मिक प्रगति से लेकर सिद्धि-चमत्कार के वरदान पाने और आत्म-साक्षात्कार से लेकर ईश्वर-दर्शन तक के समस्त दिव्य वरदान प्राप्त होते हैं। साधना की सिद्धि श्रद्धा की प्रगाढ़ स्थिति में ही संभव है। श्रद्धा, चाहे वह गुरु के प्रति हो या महामानवों के प्रति, श्रेष्ठता के समुच्चय आदर्शों, सत्प्रवृत्तियों के प्रति अथवा निराकार परब्रह्म की सत्ता के प्रति, हर स्थिति में मानव-जीवन का सम्बल है, प्रगति-पथ का पाथेय है एवं आत्मोत्कर्ष का मूलभूत आधार है।

# ईसाई चिकित्सक को दिव्य दिशा निर्देश

१० अक्टूबर, १९८३ के ब्रह्ममुहूर्त के वे पल मुझसे भुलाये नहीं भूलते। पूज्य गुरुदेव ने आत्मीयतापूर्वक कहा था-''बेटा, तू मेरा काम कर और मैं तेरा काम करूँगा।''

प्यार में रंगे पूज्य गुरुदेव के ये शब्द आज भी उन क्षणों में गूँज उठते हैं, जिन क्षणों में मेरे जीवन की कोई जटिल समस्या मुझे पंगु बना देती है।

पूज्य गुरुदेव के संरक्षण में जब मैंने अपनी आध्यात्मिक यात्रा शुरू की तो मेरे जीवन में कई तरह के उतार-चढ़ाव आए। पिताजी, माताजी के देहावसान के बाद परिवार की सारी जिम्मेदारी मेरे ही कंधे पर आ गई।

पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में आने के २३ साल बाद की बात है। पिछले कुछ समय से बीमार चल रही मेरी पत्नी श्रीमती कलावती देवी की डॉक्टरी जाँच से पता चला कि उन्हें कैंसर हो गया है। तब तक यह असाध्य बीमारी आखिरी स्टेज में पहुँच चुकी थी, इसलिए सभी प्रयासों के बावजूद उनका देहान्त हो गया। यह ६ अक्टूबर २००६ का दिन था।

अब पूरे परिवार की देख-रेख की जिम्मेदारी मुझ अकेले के कन्धों पर आ गई थी। एक ओर मेरी बेटी सुषमा विवाह के योग्य हो चुकी थी और दूसरी ओर दो छोटे-छोटे बच्चों के पालन-पोषण का उत्तरदायित्व भी मुझे ही वहन करना था। मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि नौकरी की आठ घण्टे की ड्यूटी पूरी करने के बाद घर के इतने सारे काम अकेले कैसे कर पाऊँगा। खैर, जैसे-तैसे सुबह से देर रात तक अपने शरीर का दोहन करता हुआ मैं इन बच्चों के लालन-पालन में लगा रहा, लेकिन इतने पर ही बस नहीं हुआ। दुर्भाग्य मेरे पीछे हाथ धोकर पड़ा था। इन दायित्वों के निर्वाह के दौर में प्रारब्ध ने मेरी एक और कठिन परीक्षा ली।

घटना सन् २००९ की है। अक्टूबर का महीना था। हजारीबाग की वरिष्ठ चिकित्सक डॉ. निधि सरन ने बताया कि मुझे प्रोस्टेट के साथ किडनी में इंफेक्शन की शिकायत है।

घर में छोटा बेटा नरेन्द्र और बेटी सुषमा ही थी। मेरी बीमारी की बात सुनकर दोनों सकते में आ गए। उन्होंने मेरे जीवन की रक्षा के लिए भीगी आँखों से पूज्यवर को याद किया और मुझे राँची के एक अस्पताल में भर्ती कराया। यहीं पर शुरू हुई नियति के साथ पूज्य गुरुदेव की जंग।

यहाँ आकर उपचार के दौरान मेरी तबियत ठीक होने के बजाय और भी बिगड़ती चली गई। अंत में मुझे वहाँ के डॉक्टरों की सलाह पर १० नवंबर २००९ को राँची के अपोलो अस्पताल में भर्ती कराया गया।

मेरा अंत निकट आया जानकर मेरे परिवार के लोग मुझे देखने के लिए हॉस्पिटल आने लगे। नेफ्रोलॉजिस्ट मुझे नित्य ४ घंटे डायलिसिस पर रख रहे थे। एक दिन अस्पताल के डॉ. घनश्याम सिंह ने बताया कि किडनी की स्थिति बहुत ही खराब हो चुकी है। इन्हें बदलवाकर ही मरीज को जिन्दा रखा जा सकता है, वह भी कुछ ही समय के लिए। यह सुनकर मेरे बच्चों की स्थिति ऐसी हो गई, मानो उनके ऊपर पहाड़ टूट पड़ा हो।

अपोलो के इलाज से निराश होकर श्रद्धेया शैल जीजी व श्रद्धेय डॉ. प्रणव पण्ड्या जी को इस विपत्ति के बारे में फोन पर बताया गया। उन्होंने कहा कि प्राण रक्षा के लिए वे हम सबके आराध्य देव आचार्यश्री एवं वन्दनीया माताजी से प्रार्थना करेंगे। इधर गायत्री शक्तिपीठ, हजारीबाग के समस्त परिजन भी मेरे स्वास्थ्य लाभ के लिए गायत्री उपासना करने लगे।

सामूहिक रूप से की जा रही उपासना-प्रार्थना १६ नवंबर को फलीभूत हुई। दोपहर का समय था। मुझे आभास हुआ कि पूज्य गुरुदेव व माताजी मेरे सिरहाने के पास आकर मेरा सिर सहला रहे हैं। पूज्य गुरुदेव का स्नेहिल स्पर्श पाकर मेरी आँखों से आँसुओं की धार फूट पड़ी। मुझे सान्त्वना देते हुए उन्होंने कहा-"बेटे! हॉस्पिटल बदलो। कहाँ जाना है, कब जाना है, किससे मिलना है, इन सबकी व्यवस्था हमने कर दी है।"

परिवार के लोगों ने किडनी ट्रांसप्लांटेशन के लिए देश के नामचीन अस्पतालों से संपर्क करना शुरू कर दिया था। अंततः मुझे- क्रिश्चियन मेडिकल कॉलेज, सी.एम.सी., वैल्लूर ले जाने का निर्णय लिया गया। जैसे-तैसे हम वैल्लूर पहुँचे।

वैल्लूर हॉस्पिटल जाकर पता चला कि किडनी ट्रान्सप्लांटेशन के विशेषज्ञ डॉक्टर से एक सप्ताह बाद मुलाकात हो पाएगी। यहीं प्रारंभ हुई गुरुवर की लीला। मैं व्हील चेयर पर बैठा युगऋषि का ध्यान करने लगा। इसी बीच मेरे छोटे बेटे नरेन्द्र को ऐसी अन्तःप्रेरणा हुई कि वह बिना किसी की अनुमति लिए मेरे ह्वील चेयर को दौड़ाते हुए नेफ्रोलॉजी विभाग पहुँचा और विभाग के प्रभारी डॉ. राजेश जोसेफ के आगे हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

डॉ. जोसेफ ने हमें देखकर असहज भाव से पूछा-क्या बात है? नरेन्द्र ने राँची के अपोलो में चले इलाज से लेकर अब तक की स्थिति की जानकारी देते हुए उनसे किडनी ट्रान्सप्लाण्ट करने की प्रार्थना की और अपोलो हॉस्पिटल की रिपोर्ट की फाईल उनके आगे रख दी।

डॉ. जोसेफ ने रिपोर्ट देखकर कहा-"चिन्ता की कोई बात नहीं है। सब ठीक हो जायेगा।" दरअसल कल से ही मुझे आप जैसे किसी मरीज के आने का स्पष्ट पूर्वाभास हो रहा था। मुझे लग रहा था कि अगले दिन अकस्मात् आने वाले किसी मरीज की अविलम्ब चिकित्सा के लिए मेरे प्रभु मुझे प्रेरित कर रहे हैं। सच पूछिए तो आज सुबह से मैं आप लोगों की ही प्रतीक्षा कर रहा था।" इतना कहते हुए वे स्वयं अपने हाथों से मेरा ह्वील चेयर सँभालकर डायलिसिस कक्ष की ओर चल पड़े।

लगभग 4 घंटे तक डायलिसिस चलने के बाद मुझे बाहर लाया गया। डॉ. जोसेफ ने नरेन्द्र से मुस्कराते हुए कहा कि अब किडनी ट्रान्सप्लाण्ट करने या भविष्य में कभी डायलिसिस पर रखने की नौबत नहीं आयेगी। कुछ ही दिनों में ये पूरी तरह से स्वस्थ हो जायेंगे।

सवेरे-सवेरे डॉ. जोसेफ ने फोन पर निर्देश देकर ब्लड के विभिन्न टेस्ट करवाये। रिपोर्ट बता रही थी कि सुधार की प्रक्रिया तेजी से शुरू हो चुकी है।

तीन दिन बाद पुनः ब्लड टेस्ट हुआ, रिपोर्ट आश्चर्यचकित करने वाली थी। अब तक मैं ह्वील चेयर से उठकर कुछ कदम टहलने लायक हो चुका था। इस बीच कभी डायलिसिस पर जाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। 25 दिसंबर को डॉ. जोसेफ ने अपने जन्मदिन पर एक समारोह का आयोजन किया। इसमें मेरा बेटा नरेन्द्र भी आमंत्रित था।

उन्होंने नरेन्द्र के समक्ष इस तथ्य का उद्घाटन किया कि ४ घण्टे तक चली मेरी गहन चिकित्सा के दौरान कोई दैवी शक्ति उन्हें लगातार प्रोत्साहन तथा दिशा निर्देश दे रही थी।

डॉ. जोसेफ की बातें सुनकर भाव विह्वलता में नरेन्द्र की आँखें मुंद गईं। उसे लगा कि सामने गुरुदेव खड़े होकर मुस्करा रहे हैं और उनका दाहिना हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में ऊपर उठा हुआ है।

**प्रस्तुतिः शिव नारायण साहू,**
**तापीन, हजारीबाग ( झारखण्ड )**

## जीवन साधना और भाव साधना

जीवन साधना का अर्थ है अपने समय, श्रम और साधनों का कण-कण उपयोगी दिशा में नियोजित किए रहना। भाव साधना का अर्थ है अन्तरात्मा के महत्तम भाव स्थल को उच्च सत्ता के साथ सम्बद्ध करना। दोनों परस्पर एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। एक के बिना दूसरी अधूरी है। दो पहियों का रथ ही आत्मिक प्रगति का यात्रा-क्रम सही प्रकार चला पाता है। इन दोनों में उपेक्षा किसी की भी नहीं होनी चाहिए। निष्ठा के उस कल्पवृक्ष को पोषण, साधना की खाद और उपासना का पानी नियमित रूप से देते रहने पर ही सम्भव होता है।

# पल भर में सुनी गई अबला की पुकार

उन दिनों मैं सिविल कोर्ट, बलरामपुर में सर्विस कर रही थी। जून में कोर्ट की छुट्टियाँ होने को थीं। सन् २००२ ई. की बात है। इस बार हमने शान्तिकुञ्ज में छुट्टियाँ बिताने की सोची। पहले तो कई लोग आने को तैयार थे, पर बाद में उन सभी ने अलग-अलग कारणों से अपना प्रोग्राम बदल दिया और मैं अकेली रह गई। छुट्टियों के दिन होने के कारण ट्रेन में रिजर्वेशन नहीं मिल पाया था। किन्तु मुझे तो किसी भी हाल में शान्तिकुञ्ज पहुँचना ही था। मन में ठान चुकी थी। सो, अकेली ही रवाना हो गई। गोण्डा से ट्रेन से चारबाग स्टेशन, लखनऊ पहुँची, तो शाम के चार बज चुके थे। दून एक्सप्रेस से जाना था। लेकिन, स्टेशन पर यात्रियों की भारी भीड़ देखकर मैं अन्दर से काँप उठी।

प्लेटफार्म पर पैर रखने की जगह नहीं थी। नतीजा यह हुआ कि ट्रेन छूट गई। इसके बाद वाली ट्रेन जनता एक्सप्रेस में भी नहीं चढ़ सकी। पता चला कि इसके बाद रात में कोई और ट्रेन नहीं है। मैं स्टेशन पर चिन्तित बैठी थी। सोच रही थी कि काश, यह समाचार झूठा होता, संयोगवश कोई ट्रेन आ जाती।

रात गहरी होती गयी। स्टेशन पर से भीड़ घटती जा रही थी। मेरा भय लगातार बढ़ता जा रहा था। पूरी रात मैं प्लेटफार्म पर अकेली कैसे रहूँगी? यहाँ किसी को जानती भी नहीं कि उसके घर जाकर रात बिता सकूँ। चोर-उचक्के ही आ जाएँ या अकेली औरत देख किसी पर बदनीयती ही सवार हो जाए, तो क्या करूँगी। मन बार-बार यह कहने लगा कि मुझे अकेले नहीं आना चाहिए था। आए दिन कितनी ही उल्टी सीधी घटनाएँ घटती रहती हैं। अखबारों में रोज ही ऐसी खबरें छपती हैं। दस की भीड़ में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करना अलग बात है, पर यहाँ सुनसान रात में अनजान स्टेशन के प्लेटफार्म पर रहना....! यही सब सोचकर मैं अन्दर ही अन्दर काँप रही थी।

इतने में एक आदमी पास आकर खड़ा हो गया। मुझे उसके रंग-ढंग ठीक नहीं लग रहे थे। वह मुझसे पूछने लगा-कहाँ जाना है? मैंने उपेक्षापूर्ण स्वर में कहा-हरिद्वार। उसने बात आगे बढ़ाने की चेष्टा की-मैं रेलवे का इम्प्लाई हूँ। हरिद्वार की आखिरी ट्रेन भी जा चुकी है। अब वहाँ के लिए कोई ट्रेन आपको कल ही मिलेगी। मेरा रहा-सहा होश भी गुम होने लगा। वहाँ से उठकर मैं टी स्टाल के पास वाली बैंच पर बैठ गई। थोड़ी देर बाद वह आदमी मेरे पास आकर बैठ गया और बेमतलब की बातें करने लगा। मैं बुरी तरह डर गई थी। जब और कोई उपाय नहीं दिखा, तो आँखें मूँदकर गुरुदेव का ध्यान करने लगी। मन ही मन उनसे प्रार्थना करती हुई बोली -"हे गुरुदेव, अकेले ही घर से निकलकर मैंने बहुत बड़ी गलती की है, अब तो आप ही मेरी लाज बचा सकते हैं।" मैं परेशान होकर इधर-उधर टहल रही थी। मेरी आंखों में आँसू

भरे हुये थे। मैं रोना चाहती थी, किंतु रो नहीं रही थी। मैं टलहते हुए स्टेशन के दूसरे छोर के पास पहुँच गई। मैं एक खंभे के पास खड़ी हो गई। मैं डरी हुई थी। चूंकि वह व्यक्ति आस-पास ही रह रहा था।

मैंने देखा खम्भे के पास जहाँ थोड़ी जगह होती है वहीं पर एक बूढ़े दम्पत्ति को बैठे हुए देखा। उनके पास दो छोटी-छोटी गठरियाँ थीं उन्हें देखकर मैं उन्हीं के पास खड़ी हो गई। मुझे उनके पास खड़े होने पर लग रहा था जैसे गुरुदेव मेरी करुण पुकार सुनकर स्वयं आ गये हों। मैं भी थोड़ी जगह पर बैठ गई, थोड़ी देर में बात-चीत के क्रम में उन्होंने कहा -'बेटी क्या बात है ? कुछ परेशानी है क्या ? ' मैंने कहा कि बाबा मुझे हरिद्वार जाना है। किंतु हरिद्वार की दोनों रेले जा चुकी हैं मैंने पता किया, तो मालूम हुआ कि हरिद्वार के लिये कोई ट्रेन नहीं है मैं बहुत परेशान हूँ। पूरी रात स्टेशन पर क्या करूँगी ? बाबा बोले- इसमें चिंता की क्या बात है ? तुम्हें हरिद्वार ही जाना है। अभी एक ट्रेन आयेगी इसी प्लेटफार्म पर, जो सहारनपुर जायेगी। तुम लक्सर स्टेशन पर उतर जाना, वहाँ से हरिद्वार के लिए कोई न कोई ट्रेन मिल जायेगी। पूरी रात स्टेशन पर बैठने से अच्छा है टेन में रहोगी और सुरक्षित भी रहोगी। उनकी बात मुझे अच्छी लगी किंतु विश्वास नहीं हो रहा था कि ये जो कह रहें हैं वह सही है। चूंकि उनकी वेशभूषा से नहीं लग रहा था कि ज्यादा पढ़े लिखे होंगे। इनको कैसे पता चला कि कौन सी ट्रेन आ रही है ? किंतु न जाने क्यों मुझे उनकी बातों में सच्चाई लग रही थी। उनकी वाणी में अजीब सी मिठास एवं अपनापन झलक रहा था। मैंने कहा- बाबा आप सच कह रहे हैं। वो तो मैं सही बोल रहा हूँ, मुझे भी हरिद्वार जाना है। अभी १०.३० बजे ट्रेन आयेगी।

मैंने सोचा इंतजार करने में क्या हर्ज है अभी सच्चाई तो पता चल ही जायेगी। ३०-३५ मिनिट की बात है लेकिन उस स्थिति में एक-एक मिनिट पहाड़ जैसी बीत रही थी। आखिर १०.३० बजे वह ट्रेन आई। मैं अपना बैग लेकर बाबा के साथ चल दी ट्रेन में चढ़ने के लिए। मैंने सोचा कि बाबा बूढ़े हैं इनकी सहायता करनी चाहिए इसलिए मैंने कहा- बाबा, पहले आप चढ़ जाइए तब मैं चढूँगी। तो बाबा बोले- पहले तुम चढ़ो तुम मेरी चिंता मत करो। मैं ट्रेन में चढ़ गई। ट्रेन में काफी भीड़ थी मैंने सोचा बाबा इसी ट्रेन में होंगे लेकिन आस-पास मुझे वह बाबा दिखाई नहीं पड़े। मैं रात भर ट्रेन में बैठी रही। मुझे हल्की झपकी लग जाय, तो मैं जाग जाती थी। चूंकि मुझे लक्सर स्टेशन पर उतरना था। पहली बार स्टेशन का नाम सुना था कि कहीं भूल न जाऊँ। मैंने ट्रेन में बैठे व्यक्तियों से भी स्टेशन के बारे में पूछा। दूसरे दिन मैं लक्सर स्टेशन पर उतर गई। मैंने इन्क्वाइरी में जाकर हरिद्वार के लिये ट्रेन पूछी तो पता लगा अभी एक घंटे बाद ट्रेन आएगी। इस प्रकार गुरुकृपा से हरिद्वार आ गई। जब भी मैं इस घटना के बारे में सोचती हूँ मेरा हृदय गुरुवर के प्रति श्रद्धा से भर जाता है। गुरुदेव की कृपा का कर्ज मैं इस जन्म में नहीं चुका सकती।

**प्रस्तुति : अर्चना सिंह**
**बलरामपुर ( उ.प्र. )**

# आस्था से मिली संकट से मुक्ति

मेरे बेटे को अक्सर पेट में दर्द रहता था। थोड़ी बहुत इधर-उधर की दवाइयों से वह ठीक भी हो जाता। किसी ने सुझाया- डॉक्टर को दिखा दो, ताकि अच्छे से इलाज हो जाए। कई बार ऐसी लापरवाही से अन्दर ही अन्दर गम्भीर बीमारी पकड़ लेती है। मैंने भी सोचा दिखा ही दूँ, पर बात टलती गई। एक दिन इतना असहनीय दर्द शुरू हुआ कि वह छटपटाने और रोने चिल्लाने लगा। रविवार का दिन था। अधिकतर क्लीनिक और दवा की दुकानें बंद थीं। मजबूरन मुझे दोपहर की उस कड़ी धूप में उसे साइकिल पर बैठाकर डॉक्टर की खोज में निकलना पड़ा।

डॉ० जी० एल० कुशवाहा जो अभी नये डॉक्टर थे, मेडिकल कॉलेज से हाल ही में पढ़ाई करके आए थे, उन्होंने उसे सामान्य तौर पर देखकर दवा दे दी। जब बच्चा दवा खाता तो थोड़ी देर के लिए दर्द कम हो जाता। एक हफ्ते तक ऐसा ही चलता रहा। अगले हफ्ते जब डॉक्टर को जाकर यह बात बताई तो उन्होंने दवा बदल दी; पर इससे भी कोई लाभ नहीं हुआ। इसी तरह दवा बदलते हुए लगभग एक महीना बीत गया लेकिन कोई राहत नहीं मिली। डॉ० साहब ने चिन्ता जताते हुए उसे किसी नर्सिंग होम में ले जाने की बात कही और इसके लिए एक सीनियर डॉक्टर के पास भेजा। बच्चे का इलाज यहाँ एक महीने तक चला, लेकिन बच्चे के स्वास्थ्य में किसी प्रकार का कोई सुधार नहीं हुआ। वाराणसी के डॉ० रोहित गुप्ता ने बच्चे के विषय में रिपोर्ट दी कि बच्चे की आँत में कोई गड़बड़ी आ गई है। बच्चे का इन्डोस्कोपी कराया गया, जिसकी रिपोर्ट करीब १५ दिन के बाद मिलनी थी। बीच-बीच में बच्चे की हालत काफी नाजुक हो जाती, कभी पेट में दर्द होता, कभी सिर में दर्द होता। शरीर सूखकर कंकाल की तरह हो गया था। हम सभी बच्चे का दर्द देखकर बहुत परेशान थे। बच्चे के इलाज में काफी पैसे लग चुके थे। ढाई महीने बीत जाने के बाद भी स्वास्थ्य में कोई परिवर्तन नहीं आया। बार-बार ऑफिस से छुट्टी लेने के कारण परेशानी और बढ़ गई। आर्थिक स्थिति बहुत कमजोर हो गई थी। मन-मस्तिष्क भी थकने लगे थे।

संयोग से इन्हीं दिनों किसी सज्जन से मुझे "गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार" पुस्तक मिली। परिस्थितियों से मैं बहुत परेशान था। ध्यान हटाने के लिए एवं मन को श्रेष्ठ चिन्तन में लगाने के लिए मैं पुस्तक का अध्ययन करने लगा। उसमें मैंने बहुत से लोगों के बारे में पढ़ा, जिन्हें गायत्री साधना से प्रत्यक्ष लाभ मिला था। मैंने भी अनुष्ठान करने के बारे में सोचा। यदि सभी को कुछ न कुछ लाभ मिला है, तो हमें भी अवश्य मिलेगा। मैंने अनुष्ठान आरंभ कर दिया। बच्चे के स्वास्थ्य में थोड़ा बहुत सुधार भी हो रहा था। रिपोर्ट में आया कि बच्चे की आँत में घाव हो गया है।

इस नाजुक परिस्थिति में हमें कुछ सूझ नहीं रहा था। इसी बीच हमारा शांतिकुंज जाना हुआ। वहाँ जाकर हमने डॉक्टर को दिखाया। डॉक्टर साहब ने ऑपरेशन की सलाह दी और कहा कि कल आप ९.३० बजे ऑपरेशन के लिए आ

जाइये। मैं बुरी तरह से डर गया था। कुछ समझ में नहीं आ रहा था कि मैं क्या करूँ! मन ही मन गुरुदेव से प्रार्थना कर रहा था। हमें गुरुदेव का संरक्षण मिल रहा था, किन्तु उस समय इसका आभास नहीं हो रहा था। हुआ यह कि जब बच्चे को ऑपरेशन थियेटर में ले जाया जा रहा था तब वह इतना कमजोर था कि ऑपरेशन नहीं हो सकता। उसी वक्त खून चढ़ाया जाना था। मैंने अपना खून दे दिया। खून चढ़ते ही बच्चे को बुखार आ गया और बच्चे का ऑपरेशन नहीं हो सका।

लेकिन अगले दिन देखा गया कि बच्चा धीरे-धीरे स्वस्थ हो रहा है, तो डॉक्टर साहब ने कहा कि अब बच्चे को कोई दवा नहीं दी जायेगी। ऐसा क्यों कहा उस समय पता नहीं था। वास्तव में गुरुदेव की चेतना सूक्ष्म रूप से बच्चे का इलाज कर रही थी। धीरे-धीरे बच्चा स्वस्थ हो गया। घर की परिस्थिति भी सामान्य हो गई। हमारी जिन्दगी दुबारा फिर अच्छे तरीके से चलने लगी।

यह कोई कहानी नहीं बल्कि हमारी जिन्दगी की प्रत्यक्ष घटना है। इस घटना ने गायत्री और गुरुदेव के प्रति मेरे मन में गहरी आस्था और विश्वास का भाव जगा दिया।

**प्रस्तुति : श्यामबाबू पटेल, बादलपुर ( उत्तरप्रदेश )**

## जीवन कैसे जियें

हम लिप्साओं के लिए, लालसाओं के लिए, वासनाओं के लिए, तृष्णा के लिए, अहंकार की पूर्ति के लिए किसी तरीके से मुट्ठी पकड़ करके बन्दरों की तरह फँसे रहते और जीवन सम्पदा का विनाश कर देते हैं, जिससे हमें बाज आना चाहिए और अपने आपको इससे बचाने की कोशिश करनी चाहिए। हमको अपनी क्षुद्रता का त्याग करना है। क्षुद्रता को अगर हम त्याग कर देते हैं, तो हम खोते नहीं है, हम कमाते ही कमाते हैं। कार्लमार्क्स मजदूरों से कहते थे कि "मजदूरो एक हो जाओ, तुम्हें गरीबी के अलावा कुछ खोना नहीं है" और मैं यह कहता हूँ कि "अध्यात्म मार्ग पर चलने वाले विद्यार्थियों तुम्हें अपनी क्षुद्रता के अलावा और कुछ नहीं खोना है। पाना ही पाना है। आध्यात्मिकता के मार्ग पर पाने के अलावा कुछ नहीं है। इसमें एक ही चीज हाथ से गुम जाती है, उसका नाम है आदमी की क्षुद्रता और संकीर्णता।" क्षुद्रता और संकीर्णता को त्यागने में अगर आपको कोई बहुत कष्ट न होता हो तो मेरी प्रार्थना है कि आप उसे छोड़ दें और आप महानता के रास्ते पर चलें। जीवन में भगवान को अपना हिस्सेदार बना लें। भगवान के साथ आप नाता जोड़ लें। जोड़ लेगें तो ये हिस्सेदारी आपके बहुत काम आएगी।

– आचार्य श्रीराम शर्मा

# चुटकियों में हुआ ब्लड कैंसर का इलाज

वर्ष १९८६ के प्रारंभिक दिनों में शान्तिकुञ्ज से थोड़ी दूर, रायवाला छावनी के सैनिक आवास में मैं अपनी बीमार पत्नी श्रीमती उर्मिला लाल के साथ रहता था।

राँची के एक वरिष्ठ चिकित्सक डॉ. रमण और कैंसर रिसर्च इन्स्टीट्यूट की रिपोर्ट के अनुसार उन्हें 'ब्लड कैंसर' था, जो दुनिया के लिए आज भी लाइलाज बीमारी है।

चिकित्सकों की एक ही राय थी कि उनकी मृत्यु ६ माह के अन्दर निश्चित है। इसीलिए मैं उन्हें अपने पास रायवाला ले आया था। दिन में दो बार उन्हें १०६.४ डिग्री ताप का बुखार चढ़ता था, जो किसी भी दवा से थमता नहीं था और लगभग २ घंटे रहता ही था। रुड़की मिलिट्री हॉस्पिटल के कर्नल साहब ने भी स्वयं टेस्ट करके 'ब्लड कैंसर' की पुष्टि कर दी थी।

तभी रायवाला छावनी के मेजर सक्सेना ने सलाह दी कि मैं अपनी पत्नी का इलाज शान्तिकुञ्ज में कराऊँ। उर्मिला जी दिनों-दिन दुबली होती जा रही थीं, १८-२० दिनों से खाना बंद था। खाने का प्रयास करते ही उल्टी हो जाती थी। किसी तरह जीप में बिठाकर मैं उन्हें शान्तिकुञ्ज ले आया और डॉ. राम प्रकाश पाण्डेय के समक्ष उपस्थित हो गया। निरीक्षण के उपरान्त उन्होंने सलाह दी कि माता जी के दर्शन का समय है, अतः मैं पहले सपत्नीक उनके दर्शन कर लूँ, उसके बाद ही चिकित्सा प्रारम्भ करवाई जाए।

मैं आधे-अधूरे मन से माता जी के दर्शन के लिए चल पड़ा, क्योंकि मेरे मन में धार्मिक गुरुओं के प्रति अच्छी धारणा नहीं थी। अपने पिछले अनुभवों के कारण मैं उन्हें समाज का नासूर मानता था। किसी प्रकार पत्नी को सहारा दे कर प्रथम तल वाले उस कक्ष में ले गया, जहाँ माता जी बैठती थीं।

पत्नी ने रो-रो कर अपना दुखड़ा सुनाया। माता जी ने बड़े स्नेह और दुलार से कहा था "अरे बेटी, तुझे कुछ भी तो नहीं हुआ है, वैसे ही दुःखी हो रही है। तू तो अभी बहुत जियेगी और गुरुदेव का कार्य भी करेगी। छोटी-सी बीमारी है, पाण्डेय जी से जड़ी-बूटी लेकर ठीक हो जायेगी।"

माता जी के शब्दों में न जाने कैसा जादू था कि मैं भाव-विह्वल हो उठा। मेरी आँखों से आँसुओं की धार फूट पड़ी। मैंने अपना सिर उनके चरणों में रख दिया। उन्होंने कहा भोजन-प्रसाद लेकर ही जाना। उस समय ऊपर ही भोजन की व्यवस्था थी। पता नहीं कैसे, पत्नी ने भी आधी रोटी खा ली।

डॉ. पाण्डेय जी के पास आने पर उन्होंने एक दवा खिलायी और कुछ देर और बैठने को कहा। दस मिनट के बाद मेरी पत्नी को ढेर सारी उल्टी हुई। उल्टी

इतनी बदबूदार थी कि जैसे कोई जानवर मर कर सड़ गया हो। पास खड़े एक व्यक्ति ने हाथ-मुँह धुलवाया और अपने हाथों से फर्श की सफाई की। मैं सेवा भावना के इस रूप से परिचित नहीं था, सोचा कोई सफाई कर्मचारी होगा। मुझे तो बाद में पता चला कि सफाई करने वाले सज्जन उड़ीसा से आए हुए एक एम.बी.बी.एस. हैं, जो आदरणीय पाण्डेय जी से आयुर्वेद की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

मैं पत्नी को वापस रायवाला ले गया। वहाँ चिकित्सा प्रारम्भ हुई और पहले ही दिन बुखार १०२ डिग्री से अधिक नहीं बढ़ा। दूसरे दिन केवल १०१ डिग्री तक रहा और रात्रि के २ बजे के आस-पास पत्नी ने मुझे जगा कर कहा कि मुझे खाने को चाहिए, भूख लगी है। डॉक्टर की सलाह के अनुसार मैंने एक सेब के चार टुकड़े किए, आधे ग्लास पानी में उबाल कर जूस को ठंडा करके पीने दे दिया। सेब का जूस पी कर उन्होंने कहा कि वह रोटी खाएँगी।

मुझे लगा कि अब उनका अंतिम समय आ गया है। यही सोचकर मैंने दो रोटियाँ सेंक दीं। पहली रोटी खाते ही उन्हें नशा-सा हो गया और वह बिना हाथ धोए सो ही गईं। ऐसे, जैसे बेहोश पड़ी हों। सुबह साढ़े चार बजे मैंने बाबूजी (डॉ. रामप्रकाश पाण्डेय) को फोन कर सारी बातें बताईं। पिता की तरह थोड़ी डाँट सुनने को मिली और निर्देश हुआ कि यथाशीघ्र, पत्नी की नींद खुलते ही, शांतिकुंज लेकर आऊँ।

शांतिकुंज पहुँचने पर उन्होंने पुनः उर्मिला जी का निरीक्षण किया। दवाइयाँ बदल दीं और मुझे विशेष निर्देश दिये, जो खान-पान और चिकित्सा से सम्बन्धित थे। उन्होंने कहा-ठीक से देख-भाल करोगे, तो १० दिनों में १५ किलो वजन बढ़ जाएगा और शरीर में नई जान आ जाएगी।

नकारात्मक सोच में डूबा हुआ मेरा मन अपने-आप से कह उठा "वाह! बड़ा डॉक्टर आ गया, १० दिनों में १५ किलो वजन बढ़ा देगा।" मुझे क्या पता था कि महाकाल के इस घोंसले में जड़-चेतन सभी केवल उन्हीं की आज्ञा का पालन करते हैं। उनके शिष्य जो कहें, वैसा न हो, यह असम्भव है। १० दिनों के बाद मैं जब पुनः जाँच कराने आया, तो पाया गया कि मेरी पत्नी का वजन था ५४ किलो। उस दिन वह स्वयं सीढ़ियाँ चढ़कर वंदनीया माता जी के पास आशीर्वाद लेने गईं।

६ महीने की चिकित्सा के बाद जब पुनः मिलिट्री अस्पताल रुड़की में कैंसर का टेस्ट किया गया, तो रिपोर्ट देखकर कर्नल साहब देर तक मेरी पत्नी को अविश्वास की दृष्टि से देखते रहे। रिपोर्ट में कैंसर का नामो-निशान नहीं था।

इस घटना को २४ वर्ष बीत चुके हैं। आज भी सब कुछ सामान्य है। वंदनीया माताजी की अनुकम्पा से मेरी पत्नी का उत्तम स्वास्थ्य आज भी आस-पास की महिलाओं के लिए एक उदाहरण है।

**प्रस्तुतिः भास्कर प्रसाद लाल**
**साधनगर, पालम कालोनी ( नई दिल्ली )**

# और वह तबादला वरदान बन गया!

सन् १९९६ के आखिर में मेरा तबादला चाइबासा में हो गया। यहाँ आने के लिए मैं मानसिक रूप से बिल्कुल तैयार नहीं था। आरंभ से ही गुरुदेव से और उनके मिशन से इस प्रकार जुड़ा रहा कि विभागीय जिम्मेदारियों को पूरा करने के बाद जो समय बचता था, उसमें मिशन का काम किए बिना मुझे चैन नहीं मिलता था, किन्तु उड़ीसा की सीमा से सटे इस क्षेत्र में मिशन के कार्य कर पाने की संभावना नहीं के बराबर थी। मैं पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना करने लगा कि वे मेरा तबादला रुकवा दें, लेकिन उन्होंने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी और विभागीय दबाव के कारण अन्ततः मुझे चाइबासा का कार्यभार सँभालना ही पड़ा।

वहाँ का प्रभार सँभालते हुए कुछ ही दिन बीते थे कि एक दिन सुबह-सुबह दो लड़कियाँ मेरे आवास पर पहुँच गयीं। मैं सोचने लगा कि ये कौन हैं और इन्हें दफ्तर जाने के बजाय यहाँ आवास पर आने की क्या जरूरत पड़ गई। पास आकर जब उन दोनों ने अपना परिचय दिया तो मेरा हृदय एक सुखद आश्चर्य से भर उठा। वे दोनों गायत्री परिवार की ही थीं। उनमें से एक थी वन्दना और दूसरी चंचल गुप्ता। मेरे विभाग के ही किसी व्यक्ति के द्वारा उन्हें यह मालूम हो चुका था कि मिशन से मेरी गहरी सम्बद्धता है। वे इस उम्मीद से मेरे पास आई थीं कि उनके द्वारा जैसे-तैसे चलाए जा रहे मिशन के कार्यक्रमों को विस्तार दिया जा सके।

उन्होंने बताया कि मिशन का नाम जानने वाले यहाँ गिने-चुने लोग ही हैं। वे दोनों अपने स्तर से पूरी तरह प्रयासरत हैं, फिर भी मिशन को मजबूती नहीं मिल पा रही है। इन प्रयासों में अधिकाधिक समय देने के कारण गाहे-बगाहे इन्हें घर-परिवार वालों की डाँट भी सुननी पड़ जाती थी। इन विकट परिस्थितियों में उनके द्वारा किए जाने वाले प्रयासों की मैं मन ही मन सराहना किए बिना न रह सका।

मुझे लगा कि इन दोनों बहिनों के साथ मिलकर इस क्षेत्र में मिशन को मजबूत करने के लिए ही पूज्य गुरुदेव ने मुझे यहाँ भेजा है। तभी उन्होंने तबादला रुकवाने की मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं की थी। अब मुझे सबसे पहले नौ कुंडीय यज्ञ के लिए एक स्थान का चयन करना था। इसके लिए शंभुस्थान, शंकर मंदिर मैदान उपलब्ध हो गया। यज्ञ में लोगों को शामिल करने के लिए सघन प्रचार की आवश्यकता थी। इसके लिए जगह-जगह छोटे-छोटे दीप यज्ञों का आयोजन कर लोगों को संदेश दिए जाने लगे। घर-घर सम्पर्क कर विशेष गोष्ठियों का आयोजन किया गया, ताकि स्थानीय लोगों को युग निर्माण योजना के बारे में विस्तार से बताया जा सके।

इधर लोगों के बीच प्रचार के कार्य चल रहे थे, उधर कुण्ड निर्माण से लेकर साधन-सामग्री जुटाने का प्रयास भी किया जा रहा था। यज्ञ की तैयारियों में शुरू से अन्त तक कहीं कोई अड़चन नहीं आई। चारों ओर से सहयोग की बारिश होने लगी। भोजन प्रसाद की व्यवस्था श्री रूँगटा ने की। दीप यज्ञ और हवन के लिए घर-घर से आमंत्रण आने लगे। विभिन्न व्यावसायिक ग्रुपों ने भी सहयोग का हाथ बढ़ाना शुरू कर दिया।

मारवाड़ियों के एक व्यावसायिक प्रतिष्ठान–कोल ग्रुप द्वारा दीप यज्ञ का आयोजन किया गया। अन्ततः यज्ञ इतने भव्य रूप में सम्पन्न हुआ जिसकी कल्पना भी नहीं की गई थी।

इस यज्ञ के दौरान ही शक्तिपीठ की स्थापना की बात रखी गई। रायपुर के एक मारवाड़ी सज्जन ने शक्तिपीठ के लिए स्थान की पेशकश की। तीन कट्ठे के अहाते में बना हुआ तीन कमरे का मकान, चौड़ा बरामदा, अहाते के अन्दर ही चाँपाकल। स्थान के उपलब्ध हो जाने से शक्तिपीठ के निर्माण का कार्य द्रुतगति से चल पड़ा।

१८ जनवरी १९९७ को भूमि पूजन हुआ। एस.पी. रामजी साहब ने शक्तिपीठ के निर्माण के लिए विधिपूर्वक भूमि पूजन किया। यह भूमि दरअसल एक बहुत बड़े भू-खंड का हिस्सा थी। उस पर काफी दिनों से कोर्ट में केस चल रहा था, जिसमें पूर्वोक्त मारवाड़ी सज्जन को कुछ इस तरह लपेटा गया था कि भूमि पर उनका अधिकार साबित होने की कम ही गुंजाइश थी। प्रतिपक्ष की जोड़तोड़ के कारण स्थिति कुछ ऐसी बन गई थी कि उनको जेल भी जाना पड़ सकता था। ऊपर से स्थानीय भू-माफियाओं द्वारा उन्हें जान से मारने की धमकी भी दी जा रही थी, जो उस भूमि पर कब्जा करना चाहते थे।

शक्तिपीठ के लिए इस भूमि को दान में देने की मौखिक पेशकश करते ही परिस्थिति कुछ इस प्रकार पलटती चली गई कि सारे विरोधियों के सब प्रयास धरे के धरे रह गए। केस की दिशा ही बदल गई और निष्पत्ति मारवाड़ी सेठ के पक्ष में रही। मारवाड़ी सेठ की वर्षों से चली आ रही इस समस्या के बारे में एस.पी. साहब ने मुझे तब बताया जब इस विवाद का निपटारा न्यायालय द्वारा पूरा हो गया। जब स्थानीय लोगों को इस बात की जानकारी मिली तो सभी एक स्वर से कहने लगे कि ऐसे जटिल मुकद्दमें का फैसला मारवाड़ी सेठ के पक्ष में होना उनके द्वारा शक्तिपीठ के लिए भूमिदान का ही परिणाम है। खुद एस.पी. साहब भी इस निर्णय को लेकर आश्चर्यचकित थे।

पूरे क्षेत्र में चर्चित इस मुकद्दमें में मारवाड़ी सेठ की जीत से चारों ओर गायत्री माता और गुरुदेव की शक्ति की चर्चाएँ होने लगीं। इन चर्चाओं को तब और बल मिला जब अनायास ही वन्दना के लिए रिश्ता मिल गया और उसकी शादी हो गई। एक पैर से लाचार होने के कारण उसके लिए रिश्ता मिलना मुश्किल हो रहा था। यही कारण था कि २५-२६ वर्ष की हो जाने के बाद भी उसकी शादी तय नहीं हो सकी थी। शादी को लेकर उसके माता-पिता के लिए भी यह एक सुखद आश्चर्य की घड़ी थी।

इतना सब कुछ घटित होने के बाद यह बात मेरी समझ में आ गई कि चाईबासा के तबादले की व्यवस्था पूज्य गुरुदेव ने मुझे पुरस्कृत करने के लिए ही बनाई थी। तबादले के समय मैं यह सोचकर मरा जा रहा था कि वहाँ मिशन के काम मुझे अधूरे छोड़ने पड़ेंगे, लेकिन यहाँ आकर जब शक्तिपीठ की स्थापना जैसा महत्वपूर्ण कार्य मुझ अकिंचन के द्वारा पूरा हुआ तो मेरा रोम-रोम गुरुसत्ता की असीम अनुकम्पा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने लगा।

**प्रस्तुतिः के.पी. पाण्डेय**
**आईएएस पटना ( बिहार )**

# नतमस्तक हो गये वनवासी लुटेरे

शान्तिकुञ्ज हरिद्वार में सन् १९८९ ई. में विचार क्रान्ति के प्रसार के लिए एक स्कूटर टोली बनाई गई। तय यह हुआ कि टोली बलसाड़ से स्कूटर से चलेगी, प्रचार-प्रसार करते हुए शान्तिकुञ्ज पहुँचेगी और तीन दिनों तक वहाँ रुककर दूसरे रूट से वापस बलसाड़ पहुँचेगी। पूरी यात्रा २५ दिनों की थी। पहले तो टोली में २५ लोगों का जाना तय हुआ था, लेकिन कई कारणों से अन्ततः ९ व्यक्तियों की टोली बनाई गई।

२२ अप्रैल को यात्रा शुरू हुई। चार स्कूटरों पर दो-दो व्यक्ति और एक स्कूटर पर एक अकेला आदमी। सभी इस भाव से भरे थे कि अकेले आदमी वाले स्कूटर पर पूज्य गुरुदेव सूक्ष्म रूप से बैठे हैं।

टोली जहाँ-जहाँ रुकी, वहाँ सभी प्रज्ञा परिजनों का भव्य स्वागत हुआ। सभी अमदा में रात्रि विश्राम के लिए रुके। वहाँ के लोगों द्वारा किये गये स्वागत-सत्कार से सभी गद्‌गद् हो गए। एक ने तो इस आशय का पत्र लिखकर घर भेज दिया कि रास्ते भर हमने जो देखा-जाना है, जिस तरह से समादृत हुए हैं, उसके बाद जीवन में कुछ देखने-पाने की इच्छा शेष नहीं रह गई है। अब हम यदि जीवित न भी लौटे तो कोई अफसोस नहीं होगा। आप लोग भी चिन्ता मत करना।

उत्साह और उमंग से भरे सभी शान्तिकुञ्ज पहुँचे, तो उन्होंने देखा कि द्वार नं. २ से लेकर ज़हाँ अभी गुरुदेव की समाधि बनी है, वहाँ तक दोनों तरफ लोग हाथों में फूल लेकर खड़े थे। गेट के अन्दर प्रवेश करते ही इनके ऊपर पुष्प वृष्टि होने लगी। सभी अभिभूत हो गए।

तीन दिनों तक शान्तिकुञ्ज में रुककर यह टोली बलसाड़ के लिए रवाना हुई। ३,६०० कि.मी.की इस सड़क यात्रा का वापसी का रूट दूसरा था। ये लोग रोज ४००-५०० कि. मी. चलकर रात्रि विश्राम करते थे व रात को १०-११ बजे के बीच खाना खाकर सोते थे और सुबह ४ बजे अगले पड़ाव के लिए निकल पड़ते थे।

गर्मियों के दिन थे, लेकिन तेज धूप में भी इन्हें ऐसा लगता था, जैसे एयर कंडीशन गाड़ी में सफर कर रहे हों। कहीं कोई थकान नहीं, हर पल तरोताजा।

विचार क्रान्ति के बीज बोता हुआ यह काफिला इन्दौर पहुँचा। शाम के पाँच बजे जब ये अगले पड़ाव की ओर चलने को तैयार हुए तो वहाँ के लोगों ने इन्हें आगे जाने से रोका। कारण यह था कि इन्दौर से आगे दाउद और उसके आसपास का इलाका भीलों के उत्पात के लिए प्रसिद्ध था। रात के समय इनके द्वारा राहगीरों को लूट कर उनकी हत्या तक कर दी जाती थी।

लेकिन युगशिल्पियों को मौत का भय भी रोक नहीं सका। उन्हें निर्धारित समय के अनुसार अगले पड़ाव पर पहुँचना ही था। इसलिए स्थानीय लोगों के लाख रोकने पर भी सभी पूज्य गुरुदेव का स्मरण करते हुए आगे बढ़ चले।

रात गहरी होती जा रही थी। सड़क पर दूर-दूर तक सन्नाटा पसरा हुआ था। सड़क के दोनों ओर बड़ी-बड़ी झाड़ियाँ थीं, जंगल ही जंगल था। पाँचों स्कूटर आगे पीछे तेज रफ्तार में बढ़े चले जा रहे थे।

अचानक अगले स्कूटर सवार ने गाड़ी की रफ्तार बहुत धीमी कर दी। उसने हेडलाइट की रोशनी में यह देख लिया था कि सड़क पर एक छोर से दूसरे छोर तक बड़े-बड़े पत्थर रखे हुए हैं। धीमी गति से बढ़ते हुए उसने दोनों तरफ आँखें गड़ा कर देखा। दायें-बायें तहमद लपेटे हुए कुछ लोग नंगे बदन खड़े थे। सबके हाथों में तीर कमान।

स्कूटर सवार ने स्कूटर नहीं रोका। आँखें बंद करके पूज्य गुरुदेव से जीवन रक्षा की गुहार करते हुए उसने स्कूटर की रफ्तार बढ़ाई और दाँत भींचकर दो पत्थरों के बीच से स्कूटर निकाल ले गया।

अगले सवार को सुरक्षित निकलते देखकर पीछे आ रहे स्कूटर सवार का हौसला बढ़ा। उसने स्कूटर का हैंडिल हल्के से दाएँ-बाएँ घुमाकर हेडलाइट की रोशनी सड़क के दोनों ओर डाली। उसने देखा दोनों ओर तीस-चालीस के करीब लुटेरे खड़े हैं। सब के नंगे कंधों पर धनुष हैं। सबने सिर झुकाकर हाथ जोड़ रखा है।

सभी स्कूटर सवार एक-एक कर सुरक्षित निकल गए। कुछ दूर जाकर सभी एक जगह रुके। एक-दूसरे से कहने लगे-लुटेरे भीलों से बचकर निकल पाना परम पूज्य गुरुदेव की कृपा से संभव हुआ है। एक ने कहा- गुरुदेव की महिमा असीम है। उनकी कृपा से एक साथ एक ही क्षण में इतने सारे अंगुलिमालों का विचार परिवर्त्तन हो गया।

**साभारः ई.एम.डी. शांतिकुंज**
**हरिद्वार (उत्तराखण्ड)**

## मुस्कान की महिमा

मुस्कुराने की आदत मानसिक स्वास्थ्य को कायम रखने और दूसरों को वही उपहार बाँटने की दृष्टि से नितान्त सस्ता और बहुमूल्य उपक्रम है। यदि स्वभावतः ऐसी प्रकृति न मिली हो, वातावरण ने यदि इन सद्गुणों को विकसित होने का अवसर न मिलने दिया हो, तो फिर अपने प्रयत्न से एक उपयोगी व्यायाम या योगाभ्यास की तरह इसे आरंभ करना चाहिए।

# तुम सदा रहते साथ हमारे

आज से करीब आठ वर्ष पहले की बात है। मैं झारखण्ड राज्य के भारतीय संस्कृति ज्ञान परीक्षा की जिला संयोजक थी। भा.सं.ज्ञा.परीक्षा सम्पादित कराने हेतु मुझे अक्सर झारखण्ड के कई जिलों का दौरा करना पड़ता था। एक बार मैं झींकपानी चाईबासा होकर वापस जमशेदपुर आ रही थी। अचानक एक जगह आकर हमारी बस रुक गई। आगे का रास्ता जाम था। बस कण्डक्टर ने बताया गाड़ी आगे नहीं जाएगी। आप लोगों को जाना हो, तो निजी वाहन, ऑटोरिक्शा आदि से जा सकते हैं। पता चला आज सरहूल है। यह इस क्षेत्र का प्रसिद्ध त्योहार है, जिसमें हजारों-हजार नर-नारी इकट्ठे होकर नाचते-गाते, खुशियाँ मनाते हैं। देखा, सड़क के दोनों ओर लगभग पाँच-सात हजार लोग अपने पारम्परिक वेश-भूषा में पंक्तिबद्ध खड़े होकर एक दूसरे की कमर पकड़कर नृत्य कर रहे हैं। सभी का शरीर एक साथ एक ताल पर आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ झुक रहे थे।

झारखण्ड की संस्कृति की झाँकी को प्रस्तुत करता नृत्य-उत्सव का वह अपूर्व दृश्य भी मुझे बाँध न सका। बार-बार घिरती हुए साँझ की ओर देखती और मन कहता जल्दी घर पहुँचना है। बहुत लोग बस से उतर-उतर कर पैदल ही अपने रास्ते की ओर चल दिए। बस के कर्मचारी वहीं विश्राम की तैयारी करने लगे। हमें बता दिया गया कि यह कार्यक्रम अभी तीन-चार घण्टे तक चलेगा। मजबूर होकर मुझे भी उतर जाना पड़ा।

मुझे उस स्थान के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। लोगों से पूछताछ करने पर पता चला कि उस स्थान को हाता के नाम से जाना जाता है। मुझे किसी ने बताया जमशेदपुर जाने के लिए पश्चिम की ओर चलना होगा। इसी आधार पर मैं अपने गन्तव्य की ओर बढ़ने लगी। धीरे-धीरे अँधेरा घिर आया। सुनसान सड़क पर इक्के-दुक्के लोग ही चल रहे थे। सड़क के दोनों ओर क्या है, आगे वाले रास्ते में खाई है या खन्दक, रोड़ा है या कीचड़ यह भी नहीं दीखता। मैं अनायास कदम बढ़ाती जा रही थी। बगल की कँटीली झाड़ियों से कई बार पाँव भी जख्मी होते जा रहे थे, मगर मेरे मन में केवल एक बात आ रही थी कि समय रहते घर पहुँचना है। एक अनजाना सा भय मुझे दबाए जा रहा था। अकेली औरत, सुनसान सड़क, क्या कुछ नहीं हो सकता था। लेकिन मुझे घर पहुँचने की जल्दी थी।

अचानक मैंने ख्याल किया कि मेरे आगे-आगे सफेद धोती पहने लम्बे कद के कोई पुरुष चल रहे हैं। उनके कमर के ऊपर का हिस्सा नहीं दीख रहा। मुझे भय भी लग रहा था मगर उन्हीं के साथ-साथ कदम मिलाती हुई पीछे-पीछे चली जा रही थी। मुझे लग रहा था आगे वाले व्यक्ति के कदम तीन-तीन फीट पर पड़ रहे हैं। पता नहीं मैं कैसे उस गति से चल रही थी। उस समय यह सब सोचने के लिए भी समय नहीं था। जैसे मेरे कदम हवा में पड़ रहे थे। कष्ट की अनुभूति भी नहीं हो रही थी।

करीब आधे-पौन घण्टे तक इसी तरह चलती गई। इसके बाद शहरी इलाका दीखने लगा। दुकानों की झिलमिल रोशनी देख मन में साहस आया। इसके बाद वह व्यक्ति भी न जाने कब आँखों से ओझल हो गया।

एक टेलीफोन बूथ पर जाकर मैंने फोन किया। घर में सूचना दी। विलम्ब होने का कारण बताया। वहीं पूछने पर पता चला उस स्थान का नाम परसूडीह है। वहाँ से ऑटो रिक्शा लेकर मैं बस स्टैण्ड गई, जहाँ से साकची की बस मिलने वाली थी।

जब घर पहुँची और सब हाल बताया, तो सभी विस्मय से अवाक रह गए। कहा- हाता से परसूडीह तुम इतनी जल्दी पहुँची कैसे? वह तो २५-३० किलोमीटर का रास्ता है। मुझे आगे-आगे चलनेवाले उस मार्गदर्शक की याद आई। श्रद्धा से नतमस्तक हो गई मैं। गुरुदेव कई बार कहा करते थे- बेटा, तुम मेरे काम में एक कदम भर बढ़ाओ, मैं तुम्हें सफलता के रास्ते दस कदम बढ़ा दूँगा।

**प्रस्तुति :-सुषमा पात्रो**
**टाटानगर ( झारखण्ड )**

## स्वास्थ्य का रहस्य

तब बीमारियाँ एक पहाड़ पर रहा करती थीं। उन दिनों की बात है, एक किसान को जमीन की कमी महसूस हुई। अतः उसने पहाड़ काटना शुरू कर दिया। पहाड़ बड़ा घबराया, उसने बीमारियों को आज्ञा दी-बेटियों! टूट पड़ो इस किसान पर और इसे नष्ट-भ्रष्ट कर डालो। बीमारियाँ डंड-बैठक लगाकर आगे बढ़ी और किसान पर चढ़ बैठी। किसान ने किसी की परवाह नहीं की और डटा रहा अपने काम में। शरीर से पसीने की धार निकली और उसी में लिपटी हुई बीमारियाँ भी बह गई। पहाड़ ने क्रुद्ध होकर शाप दे दिया-मेरी बेटी होकर तुमने मेरा इतना काम भी नहीं किया, अब जहाँ हो वहीं पड़ी रहो। तब से बीमारियाँ परिश्रमी लोगों पर असर नहीं कर पातीं। गंदे और आलसी लोग ही उनके शिकार होते हैं।

# फलित हुआ माँ का आश्वासन

बात उन दिनों की है जब अश्वमेध यज्ञों की श्रृंखला चल रही थी। इस श्रृंखला में पटना का अश्वमेध यज्ञ भी था। फरवरी, १९९४ का महीना था। चारों तरफ केवल यज्ञ की ही चर्चा हो रही थी। यज्ञ के बारे में लोग तरह-तरह की बातें कर रहे थे। कोई कहता कि भगवान राम ने जिस प्रकार से अश्वमेध यज्ञ किया था और पहले घोड़ा छोड़ा था उसी प्रकार से इस यज्ञ में भी घोड़ा छोड़ा जाएगा।

प्रत्येक परिजन में भारी उत्साह था। मैं भी यज्ञ में जाने के लिए उत्साहित था। घर में पत्नी से यज्ञ की चर्चा की और मन बना लिया। यज्ञ की महिमा और उसका प्रभाव मैं जानता था, इसलिए यह अवसर मैं गँवाना नहीं चाहता था। मेरे छोटे बहनोई थे विश्वनाथ जी। छोटी कमाई, बड़ा परिवार। घर का खर्च बड़ी मुश्किल से चलता था। ऊपर से उन्हें शराब की लत लगी हुई थी। सारा का सारा पैसा शराब पीने में चला जाता था। कई बार उनने कसम खाई लेकिन हर बार कसम तोड़ देते थे। मन में आया कि उनको भी यज्ञ में ले चलूँ, शायद कल्याण हो जाए।

मैं इसके पहले शानितकुञ्ज एवं मिशन के बारे में कुछ नहीं जानता था, केवल यज्ञ हवन से प्रभावित था कि इतना बड़ा यज्ञ हो रहा है तो इसमें शामिल होना चाहिए, यही भावना थी; और यह भी कि यदि बहनोई की शराब की आदत छूट जाय तो बच्चों का भविष्य बन जाएगा। यज्ञ में जाने की खबर सुनकर मेरा भतीजा अनिल, जिसकी उम्र केवल ७ वर्ष की थी, वह भी आ गया। अब मैं, मेरी, पत्नी बहनोई और भतीजा चारों लोग पटना के लिए गंगा-दामोदर एक्सप्रेस ट्रेन पर बैठे। साथ में और भी सैकड़ों परिजन थे। ट्रेन में भारी भीड़ थी। लगभग ८० प्रतिशत लोग यज्ञ में जाने वालों में से ही थे।

उन दिनों बिहार के मुख्यमंत्री श्री लालू प्रसाद यादव जी थे। चर्चा का विषय बना था कि उन्होंने सभी ट्रेनें यज्ञ में जाने वालों के लिए निःशुल्क करा दी हैं। वे यज्ञ में पूरा सहयोग कर रहे हैं। यज्ञ स्थल के लिए भूमि की व्यवस्था भी लालू जी ने स्वयं करवाई थी।

यज्ञ में पहुँचे तो वहाँ की भीड़ देखकर हम दंग रह गए। यज्ञ की व्यवस्था बहुत ही अच्छी थी। सुरक्षा व्यवस्था के लिए बनी कार्यकर्ता टोली में मुझे भी शामिल कर लिया गया था। इस दायित्व को पाकर मैं फूला नहीं समा रहा था। यज्ञ के दौरान दिए गए सारगर्भित प्रवचनों को सुनकर आत्मा तृप्त हो गई। लालू जी ने भी मंच से लोगों को संबोधित किया। वे अपने अंदाज में कह रहे थे- यह वही स्थान है जहाँ हम भैंसे चराते थे और माँड़-भात खाते थे। आज बिहार में गायत्री परिवार जैसे मिशन की आवश्यकता है, जो अपने साथ-साथ सभी को लेकर चलते हैं।

माता जी से मिला, तो लगा हमें असली माँ मिल गई हैं। सभी परिजन उनकी बातों को सुनकर प्रसन्न हो रहे थे। माता जी का प्रवचन सुना। वे बोल रही थीं "बेटे

हम तुम्हारी रक्षा वैसे ही करेंगे, जिस तरह से चिड़िया अपने अंडों को सेती है। हमारे डैने बहुत विशाल हैं"। इन शब्दों को सुनकर मैं सोच रहा था कि ऐसा आश्वासन तो कोई बहुत बड़े ऋषि या भगवान ही दे सकते हैं। माता जी के इन शब्दों ने जैसे वहाँ उपस्थित सभी लोगों में नवचेतना का संचार कर दिया था। मैं अपने-आपको बहुत सौभाग्यशाली मान रहा था कि ऐसी अवतारी सत्ता का सान्निध्य पा सका। यज्ञ में करीब ६०-६५ लाख व्यक्ति मौजूद थे। लेकिन व्यवस्था में कहीं कोई गड़बड़ी नहीं। यही सोच-सोच कर मैं हैरान था।

यज्ञ समाप्त हुआ। हम सभी अपने-अपने घर जाने को तैयार हुए। फुलवारी शरीफ मेन रोड पर आकर देखा, सड़क पर भारी भीड़ थी। हमें सड़क पार कर उस तरफ जाना था। मेरे बहनोई सड़क पार कर गए, तो अनिल भी पीछे दौड़ पड़ा। इधर हम कुछ समझ पाते उससे पहले ही तेज गति से आ रही एक एम्बेसडर कार उसके ऊपर से गुजर गई। एकबारगी अन्तरात्मा काँप गई। अन्दर से एक विकल पुकार उठी-माता जी यह क्या हो गया? अब मैं किसको क्या मुँह दिखलाऊँगा? कई बातें मस्तिष्क में कौंध गईं। बच्चे को खोने का डर तो था ही, अन्तर को मथते हुए एक शंका यह भी उठ रही थी-लोग तरह-तरह की बातें करेंगे। माताजी के आश्वासन पर से सभी का विश्वास उठ जाएगा।

गाड़ी जाने के बाद हम लोग सहमते हुए आगे बढ़े। देखा बच्चा बेहोश पड़ा था। चारों ओर से सहानुभूति के स्वर सुनाई पड़ रहे थे; पर उधर ध्यान देने का वक्त नहीं था। बच्चे को गोद में उठाकर जल्दी से किनारे ले आया। बच्चे के शरीर पर एक खरोंच तक नहीं लगी थी। किसी ने इस तरफ ध्यान दिलाया तो हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा। सहसा यकीन ही नहीं हुआ। क्या ऐसा भी संभव है? फिर एक उम्मीद जगी शायद माताजी की कृपा से बच ही जाए। वहाँ उपस्थित एक भाई ने बताया कि पास ही डॉक्टर का क्लीनिक है, वहाँ ले जाइए। उन्होंने हाथ से इशारा करके दिखाया। करीब दस कदम की दूरी पर एक डॉक्टर की क्लीनिक थी। वहाँ ले जाकर बच्चे को बेंच पर बैठाया तो वह बैठ गया। डॉ० ने बच्चे को जाँच कर बताया-घबड़ाने की कोई बात नहीं। बच्चा डर गया है। इसे कुछ नहीं हुआ है। १५ मिनट बाद इसे आप ले जा सकते हैं। कोई १०-१५ मिनट बाद बच्चे ने आँखें खोल दीं और घबड़ाई नजरों से इधर-उधर देखने लगा। हमें देखकर आश्वस्त हुआ। हम सबकी आँखों में आँसू छलक आए। याद आ रहा था माताजी का आश्वासन "... हमारे डैने बहुत बड़े हैं।" तत्क्षण हमने अनुभव किया उनके डैनों का अमृततुल्य प्रभाव।

**प्रस्तुतिः- भरत प्रसाद**
**सिन्दरी, धनबाद ( झारखण्ड )**

# ..और आखिर गुरुदेव ने सुनी उनकी बात

नवयुग के निर्माण के लिये युग शिल्पियों की जो विशाल सेना युगऋषि पं० श्रीराम शर्मा आचार्य ने खड़ी की है, उसके एक सजग और समर्पित सेनानी हैं श्री विजय शर्मा। वे गया में उप कृषि निदेशक के पद पर कार्यरत हैं। जुलाई, २०१० के तीसरे सप्ताह में श्री शर्मा की तबीयत अचानक खराब हो गई । वह भी इस हद तक कि घर में कोहराम मच गया। उन्हें तुरन्त ही शहर के एक बड़े क्लीनिक में ले जाया गया। सघन जाँच हुई और ई.सी.जी. तथा टीएमटी की रिपोर्ट से इसके स्पष्ट संकेत प्राप्त हुए कि श्री शर्मा कॉरोनरी आर्टरी डिजीज़ के मरीज हैं। स्थिति इसलिए भी खतरनाक मानी गई कि यह उच्च रक्तचाप तथा मधुमेह के पुराने रोगी हैं।

दिनांक २३ जुलाई को श्री शर्मा जी का एन्जियोग्राफी मेट्रो हार्ट इन्स्टीट्यूट, फरीदाबाद में डॉ. नीरज जैन, डी.एम., कॉर्डियोलॉजिस्ट के द्वारा किया गया। श्री शर्मा एन्जियोग्राफी के तीन-चार दिन पहले से ही इस बात को लेकर चिंतित थे कि यदि एन्जियोप्लास्टी अथवा बाईपास सर्जरी कराना पड़ा, तो इसका व्यय भार वहन करना उनके लिए कहीं से भी सम्भव नहीं हो पायेगा। दूसरा संकट यह भी था कि इतनी लम्बी छुट्टी विभाग से कैसे मिलेगी। चिन्ता जब चरम पर पहुँच गई, तो उन्होंने परम पूज्य गुरुदेव की सुपुत्री स्नेहसलिला शैलबाला पण्ड्या से फोन पर सम्पर्क करके अपनी परेशानी बताई, तो आदरणीया शैल जीजी ने कहा- आप चिन्ता मत करिए। गुरुजी सब सम्हाल लेंगे। सब कुछ नॉर्मल होगा।

उसी रात सोने से पहले ध्यान लगाकर उन्होंने पूज्य गुरुदेव से द्रवित मन से प्रार्थना की। उन्होंने कहा -गुरुदेव! इतने महँगे इलाज के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं, दफ्तर से छुट्टी भी नहीं मिलेगी। मैं बहुत मुश्किल में हूँ। कुछ ऐसा कीजिए, गुरुदेव! कि सिर्फ एक ही दिन में मेरी चिकित्सा पूरी हो जाय और इलाज में अधिक से अधिक ३०,००० रुपये खर्च हों।

.... और सचमुच परम पूज्य गुरुदेव ने उनकी बात सुन ली। इलाज एक ही दिन में हो गया और खर्च हुए मात्र २३,००० रुपये। २३ जुलाई, २०१० को जब शर्मा भाई साहब ने एन्जियोग्राफी करवाया, तो रिपोर्ट में सब कुछ सामान्य निकला। मेट्रो हर्ट इन्स्टीट्यूट की रिपोर्ट शत-प्रतिशत सामान्य पाई गई। दिनांक ७ सितम्बर को श्री शर्मा जी ने जब आदरणीया जीजी से हरिद्वार आकर मुलाकात की, तो जीजी ने आतुरता से उनकी कुशल-क्षेम पूछी। जाँच की रिपोर्ट के बारे में जानने के बाद उन्होंने गहरी साँस लेते हुए सिर्फ इतना कहा कि यह सब गुरुदेव की लीला है, पर उनकी आँखें साफ बोल रही थीं कि गुरुदेव अपने अंग अवयवों की रक्षा में संसार की सीमाओं को भी लांघ जाते हैं।

**प्रस्तुतिः नीरज तिवारी**
**पूर्वजोन, शांतिकुंज, हरिद्वार( उत्तराखण्ड )**

# खण्डित होने से बचा समयदान का संकल्प

बात सन् १९९० ई. की है। पूज्य गुरुदेव ने महाप्रयाण से कुछ दिन पूर्व अपने नैष्ठिक साधकों को बुलाकर कहा था कि बेटे, हमें अब मिशन का कार्य तीव्र गति से करना है और ऐसे में हमारा स्थूल शरीर अधिक उपयुक्त नहीं जान पड़ता है, अत: अब हम इस स्थूल काया को छोड़ना चाहते हैं। तब साधकों ने कहा-गुरुजी, जब आप शरीर से नहीं रहेंगे तो इस मिशन को गति कौन प्रदान करेगा। मिशन का कार्य कैसे होगा ? तब गुरुजी ने कहा-बेटे हम सूक्ष्म शरीर से कार्य करेंगे। स्थूल शरीर की अपेक्षा सूक्ष्म शरीर के द्वारा हम मिशन के कार्य को और अधिक तीव्र गति से कर पाएँगे।

यह प्रसंग अखण्ड ज्योति पत्रिका में प्रकाशित एक लेख का है। इस लेख को पढ़कर मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि पूज्य गुरुदेव अपने सूक्ष्म शरीर से कैसे कार्य करते होंगे। लेकिन जब मेरे जीवन में एक अविस्मरणीय घटना घटी, तो यह बात समझ में आ गई कि किस प्रकार गुरुदेव सूक्ष्म शरीर से तरह-तरह के काम किया करते हैं।

सन् २००९ में मैं पहली बार शान्तिकुञ्ज आया था। यहाँ की आध्यात्मिक ऊँचाइयों से प्रभावित मैंने मन ही मन संकल्प लिया कि अपने क्षेत्र में भी पाँच कुण्डीय गायत्री महायज्ञ करवाऊँगा। पंचकुण्डीय यज्ञ में पू. गुरुदेव कदम-कदम पर सूक्ष्म रूप से सहायता करते रहे। अगले वर्ष पुन: शान्तिकुञ्ज आकर नौ दिवसीय साधना सत्र करने के बाद एक मासीय युग शिल्पी सत्र पूरा किया और लगे हाथों यहाँ की डिस्पेन्सरी में तीन माह के लिए समयदान करना शुरू कर दिया। अभी समयदान की अवधि पूरी भी नहीं हुई थी कि एक विकट समस्या खड़ी हो गयी। वह रविवार का दिन था। तारीख थी २३ अक्टूबर २०१०। रात के लगभग दस बजे मेरे घर से फोन आया कि पिताजी के बाएँ हाथ में पैरालाइसिस हो गया है। यह सुनकर मैं सकते में आ गया। अपने-आपको जैसे तैसे सहज करके मैंने यह जानने की कोशिश की कि अचानक यह अटैक कैसे हो गया। माँ ने बताया कि शाम के लगभग ४ बजे जब पिताजी गेहूँ की बोरी उठाने लगे, तो उन्हें लगा कि उनका बायाँ हाथ पूरी तरह से सुन्न हो गया है। उन्होंने माताजी को बुलाकर कहा कि उनका बायाँ हाथ काम नहीं कर रहा है। यह सुनकर माताजी घबरा उठीं। उन्होंने पिताजी का हाथ पकड़कर धीरे-धीरे दबाना और झटकना शुरू किया। लेकिन इससे कुछ भी फर्क नहीं पड़ा।

घर के सभी सदस्य अपना-अपना काम छोड़कर पिताजी के पास इकट्ठे हो गए। आपस में विचार करके सबने यही तय किया कि तुरंत किसी डॉक्टर को दिखाया जाए। थोड़ी देर बाद ही उन्हें मुजावरपुर के डॉ. श्री नृपाल सिंह सिगड़ोरे के पास ले जाया गया। जाँच करने पर पता चला कि पिताजी का ब्लडप्रेशर नार्मल से बहुत ही कम हो चुका है। डॉक्टर साहब ने बताया कि लो ब्लडप्रेशर ही पैरालाइसिस की वजह है। उन्होंने यह भी कहा कि बाँए अंग का पैरालाइसिस बहुत ही गंभीर होता

है। लम्बे इलाज के बाद भी यह बड़ी मुश्किल से ठीक हो पाता है। दवा देकर डॉक्टर ने कुछ दिनों तक बेड रेस्ट का सुझाव दिया।

घर वापस आने के बाद पिताजी ने सारी बात फोन पर बताकर मुझे शांतिकुंज से तुरंत घर वापस आने को कहा। पिताजी के बारे में जानकर मेरा मन चिंता से भर उठा था। सुबह की ट्रेन से ही मेरा वापस जाना जरूरी था, लेकिन समयदान का संकल्प खंडित हो जाने का भय मुझे खाए जा रहा था। समझ में नहीं आ रहा था कि करूँ तो क्या करूँ। ऊपर से विभागीय अनुमति मिलने की भी संभावना नहीं दिख रही थी क्योंकि प्रभारी डॉक्टर गायत्री शर्मा पिछले कुछ दिनों से शांतिकुंज में नहीं थीं। गाँव वापस जाने को लेकर अनिश्चय की स्थिति में ही मैंने घर फोन मिलाकर माँ-पिताजी को कहा कि वे आज से ही घर में दीपक जलाकर नित्य कम से कम तीन माला गायत्री मंत्र का जप शुरू कर दें। मैंने उन्हें भरोसा दिलाते हुए कहा कि आप लोग चिन्ता मत कीजिए। पूज्य गुरुदेव की कृपा से सब ठीक हो जाएगा। पिताजी के स्वास्थ्य लाभ के लिए माताजी ने उसी दिन से गायत्री महामंत्र का जप आरम्भ कर दिया। इधर मैंने भी अपनी प्रातःकालीन साधना के दौरान माता गायत्री से पिताजी को शीघ्र स्वस्थ कर देने की प्रार्थना की। फिर मैं पूज्य गुरुदेव एवं वन्दनीया माताजी के समाधि स्थल पर सिर टिकाकर उनसे प्रार्थना करने लगा कि वे मेरी इतनी कठिन परीक्षा न लें। यदि मेरा यह समयदान का संकल्प पूरा नहीं हुआ तो मेरी आत्मा मुझे हमेशा धिक्कारती रहेगी। किन्तु यदि मेरे पिताजी की बीमारी इसी प्रकार बनी रहती है तो आत्मा पर बोझ रखकर भी मुझे वापस जाना ही पड़ेगा। अब इस दुविधा से मुझे आप ही उबार सकते हैं।

अब मेरे डिस्पेन्सरी जाने का समय हो चुका था। वहाँ जाकर दिन भर तो मरीजों के दुःख बाँटने में लगा रहा लेकिन शाम को आवास पर वापस आते ही एक बार फिर से चिन्तातुर हो गया। पूरा ध्यान घर की परिस्थितियों पर ही लगा था। तभी शाम को साढ़े पाँच बजे घर से पिताजी का फोन आया। उनकी आवाज प्रसन्नता से भरी हुई थी। उन्होंने बताया कि उन्होंने मेरे कहे अनुसार दीप जलाकर गायत्री मंत्र की तीन माला का जप पूरा कर लिया है और जप के पूरा होते-होते उन्हें लगभग ८०प्रतिशत आराम मिल चुका है।

यह सुनकर मेरी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। पिताजी से सुनकर भी सहज ही विश्वास नहीं हो रहा था कि सिर्फ तीन माला गायत्री जप से ही पैरालाइसिस जैसी घातक बीमारी लगभग ८०प्रतिशत ठीक हो गई। गुरुसत्ता की इस असीम अनुकम्पा से मेरी आँखें भर आईं। मैं अपने-आप से कहने लगा-गुरुसत्ता ने अपने परिजनों को ठीक ही यह आश्वासन दिया है कि तुम मेरा काम करो और मैं तुम्हारा काम करूँगा। एक हफ्ते बाद ही घर से पिताजी का दूसरा फोन आया कि अब उनका हाथ पूरी तरह से काम करने लगा है और मेरे गाँव आने की आवश्यकता नहीं रह गई है। पावन गुरुसत्ता की इस असीम कृपा के लिए हमारा शत-शत नमन।

**प्रस्तुतिः डॉ. राजेश कुमार चौरिया, चारगाँव, छिन्दवाड़ा ( म. प्र. )**

# शक्तिपात से पल मात्र में हुआ कायाकल्प

उन दिनों मैं राजकीय रेलवे पुलिस में डी.आई.जी. के पद पर कार्यरत था। मेरे कई मित्रों ने पूज्य गुरुदेव के बहुआयामी व्यक्तित्व के विषय में इतना कुछ कहा कि हरिद्वार जाकर उनसे मिलने की इच्छा जाग उठी। इसलिए जब यू.पी. पुलिस के साथ सहयोग बैठक के क्रम में हरिद्वार का कार्यक्रम बना, तो मन ललक उठा-कुछ ही देर के लिए सही, समय मिल जाता तो उनसे भी मिल लेता।

सहयोग बैठक के व्यस्त कार्यक्रमों के कारण शांतिकुंज जाने का समय निकल पाएगा, इसमें कुछ संदेह-सा लग रहा था। फिर भी मैंने उत्तर प्रदेश के संबंधित अधिकारी से अनुरोध किया कि मेरी शान्तिकुञ्ज जाने की प्रबल इच्छा है। अत: वहाँ जाने के लिए मुझे थोड़े समय का अवकाश दिया जाय। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार बैठक के बीच में दो घण्टे का अवकाश था। उतना ही समय मिल पाया। अनुमति मिल जाने से मुझे काफी खुशी हुई। मैं इतने से ही खुश हो रहा था कि भागते दौड़ते ही सही, आचार्यश्री के दर्शन तो कर लूँगा। क्या पता, फिर बाद में कभी मौका मिले या नहीं।

शान्तिकुञ्ज पहुँचा, तो पता चला कि गुरुदेव सूक्ष्मीकरण साधना में हैं। अब वे किसी से मिलते-जुलते नहीं हैं। वन्दनीया माताजी, शैल जीजी, डॉ. साहब - इन तीनों के अलावा और कोई मिल नहीं सकता। यह जानकर बड़ी निराशा हुई। इतने दिनों से सोच रखा था, लेकिन यहाँ आकर भी दर्शन नहीं हुए। अपने-आप पर बहुत कोफ्त हुई। चाहता, तो कभी खुद ही कार्यक्रम बनाकर आ सकता था। किसी ने कहा- माता जी से मिल लीजिए, अब तो सारी शक्तियाँ उन्हीं के पास हैं। मन में एक उम्मीद बँधी, माताजी के पास जाकर उनसे प्रार्थना करूँगा। शायद दर्शन हो ही जाएँ। माताजी से मिला। विगलित स्वर में उनसे विनती की-एकबार आचार्यश्री से मिलवा दें, बड़ी उम्मीद लेकर आया हूँ।

माताजी ने आँखें मूँद लीं, कुछ देर मौन रहीं, फिर उठकर अन्दर चली गईं। मैं चुपचाप बैठा भगवान से प्रार्थना करने लगा-हे भगवान बड़ी मुश्किल से अधिकारियों को मनाकर यहाँ तक आया हूँ। अब मुझ पर इतना अनुग्रह तो कर ही दो कि मैं उनसे मिल सकूँ। पल भर के लिए ही सही एक बार उनके दर्शन तो करा दो, प्रभु! मैं उधेड़बुन में पड़ा अकेला बैठा हुआ था। थोड़ी देर बाद माताजी लौट आईं। उन्होंने हँसते हुए मुझसे कहा-जाओ बेटा, मिल लो। गुरुदेव ने तुम्हें बुलाया है।

मैं उठकर तेजी से चल पड़ा। जिस कमरे में गुरुदेव बैठे थे, उसके अन्दर जाते ही तेज प्रकाश से आँखें चकाचौंध हो गईं। पूरा कमरा एक अलौकिक प्रकाश से भरा था। थोड़ी देर में आँखें उस प्रकाश की अभ्यस्त हुईं तो कमरे में फर्श से लेकर छत

तक फैले उस प्रकाश के बीच मुझे पूज्य गुरुदेव दिखे, उनके अंग-अंग में प्रकाश प्रस्फुटित हो रहा था। मैंने उनकी ओर देखा, लेकिन क्षण भर के लिए भी उनसे आँखें नहीं मिला सका।

मैंने महसूस किया कि उनकी आँखों से दिव्य प्रकाश की किरणें निकलकर मेरे अन्दर प्रविष्ट हो रही हैं। इस प्रक्रिया के प्रारंभिक क्षण तो असह्य-से थे, किन्तु शनैः शनैः वह प्रकाश मेरे संपूर्ण शरीर के लिए सहनीय होने लगा। अब मैं पूज्य गुरुदेव को आसानी से देख पा रहा था। वे शांत, प्रफुल्लित बैठे थे। वे मेरी ओर गहरी नजरों से देखकर मुस्कराये। फिर उन्होंने कहा-यह दिव्य प्रकाश तुम्हारे लिए अभेद्य रक्षा कवच का काम करेगा। सत्य और न्याय की रक्षा के लिए तुम जो चाहोगे, वही होगा। अब कोई तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।

..... और सचमुच हुआ भी ऐसा ही। पहले मेरी कर्तव्यनिष्ठा, ईमानदारी और सख्ती के कारण प्रशासनिक तथा राजनैतिक जगत की कुछ बड़ी हस्तियाँ मेरे विरुद्ध हो गई थीं, लेकिन, पूज्य गुरुदेव द्वारा किए गए उस शक्तिपात से मेरे सभी विरोधी एक-एक कर धराशाई होते चले गए और गुरुकृपा से मेरी चर्चा ईमानदारी तथा कर्त्तव्यनिष्ठा के उदाहरण के रूप में होने लगी।

**प्रस्तुतिः शिवमूर्ति राय**
**सेवानिवृत्त डी.जी.पी., (बिहार)**

## व्यापक अर्थों में आरोग्य का स्वरूप

आरोग्य का अर्थ केवल स्थूल शरीर का रोग-मुक्त होना ही नहीं है। सूक्ष्म शरीर की चिंतन-चेतना एवं कारण शरीर की भाव-मान्यता भी सीधी और सही होनी चाहिए। ऐसी परिस्थिति में ही मनुष्य कुछ महत्वपूर्ण पौरुष कर सकने एवं कहने लायक सफलता प्राप्त कर सकने की स्थिति में होता है। इसलिए किसी महान लक्ष्य का निर्धारण करते हुए यह भी देखना पड़ता है कि अपने तीनों शरीर निरोग हैं या नहीं। इसमें से एक भी रुग्ण हो, तो समझना चाहिए कि अपनी क्षमता अधूरी एवं क्षतिग्रस्त है। उस स्थिति में ऐसा कुछ भी न बन पड़ेगा, जिसे कहने लायक माना और कहा जा सके।

# मैं अभागन उन्हें पहचान न पाई

सन् २००९ई. की गुरु पूर्णिमा के दिन अपने पति और बेटे के साथ मैं हरिद्वार पहुँची। दो कुली को साथ लेकर हम तीनों प्लेटफार्म से बाहर आए। सड़कों पर सन्नाटा छाया हुआ था। जगह-जगह सेना के जवान तैनात थे। हमारे बाहर निकलते ही सेना के एक गश्ती दल ने रोककर कहा-शहर में धारा १४४ लागू है। एक साथ पाँच लोगों का घर से निकलना मना है। तुरन्त वापस जाओ। वरना गिरफ्तार कर लिए जाओगे, पर हमारा शान्तिकुञ्ज पहुँचना बहुत ही जरूरी था। हमें अगले दिन से आरम्भ होने वाली विशेष साधना के लिए उसी दिन संकल्प लेना था। पति और बेटे को वहीं छोड़कर मैं सड़क की ओर बढ़ी। पतिदेव ने टोका-कहाँ जा रही हो? मैंने कहा-आगे जाकर देखती हूँ, शायद कोई सवारी मिल जाए। मेरा जवाब सुनकर वे मुझ पर बरस पड़े-तुमने सुना नहीं कि धारा १४४ लागू है। यहाँ कोई तेरा बाप बैठा है, जो तुझे ले जाएगा। मैंने तमककर कहा- हाँ हैं न बाप! वही तो ले जाएँगे।

बाहर निकलकर काफी देर तक खड़ी रही, पर कोई सवारी नहीं मिली। मैंने घड़ी देखी-बीस मिनट बीत चुके थे। शाम होने से पहले पहुँचना जरूरी था। कुछ देर और रुकी रही तो संकल्प का समय निकल जाएगा। यह सोचकर मुझे रोना आ गया। हे गुरुदेव! अब क्या करूँ? तुमने बुलाया, तो मैं आ गई। अब तुम्हीं कुछ ऐसा करो कि संकल्प ले सकूँ।

मुझे रोते देख गश्ती दल वाले आकर पूछताछ करने लगे। मैं उन लोगों को समझाने का प्रयास कर रही थी कि मेरा आज ही शांतिकुंज पहुँचना बहुत जरूरी है। सभी यही कहते-पैदल चले जाओ, मगर मैं उतनी दूर तक पैदल चल नहीं सकती थी और हमारे साथ सामान भी बहुत सारे थे।

करीब ४५ मिनट बाद सामने से एक रिक्शा वाला आता हुआ दिखा। उसने पीला कुर्ता पहन रखा था। कन्धे पर पीला झोला भी लटकाये हुए था। पास आने पर मैंने उसे रोकते हुए कहा-बाबा मुझे शांतिकुंज जाना है, चलोगे क्या? रिक्शा वाला बोला-बैठ जाओ, पहुँचा देता हूँ। मैंने कहा-मैं अकेली नहीं हूँ, मेरे साथ मेरा बेटा और पति हैं। कुछ सामान भी है। उसने कहा-ले आओ।

वापस आकर मैंने बेटे से कहा-जल्दी से सामान उठाओ, एक रिक्शा वाला जाने को तैयार है। इतना सुनते ही मेरे पति बेटे से कहने लगे-तुम्हारी माँ तो पागल हो गई है। धारा १४४ में रिक्शे वाले को कौन जाने देगा। इतने में रिक्शा वाला भी हमारे पास आकर बोला-चलना है तो चलो, नहीं तो मैं जा रहा हूँ। मैंने इन दोनों से कहा-कोई जाए या न जाए, मैं तो जाती हूँ। मेरे रिक्शा पर बैठने के बाद वे दोनों भी सामान के साथ आ बैठे।

रिक्शा अभी थोड़ी ही दूर चला था कि गश्ती दल वालों से सामना हुआ। उन्होंने रिक्शा किनारे लगवाकर कहा-पैदल जाना हो तो जाओ, रिक्शा नहीं जायेगा। रिक्शावाला कुछ देर तो चुपचाप खड़ा रहा, फिर उसने नजर बचाकर निकलने की

कोशिश की। लेकिन गश्ती दल वालों ने उसे निकलने नहीं दिया। जब तीन बार ऐसा ही हुआ, तो उसने सिपाहियों से कहा-अब तुम लोग हाँ कहो या ना कहो, मुझे तो इन्हें शांतिकुंज ले ही जाना है। सिपाहियों ने अपनी मजबूरी बताते हुए कहा-बाबा, हम तो नियम से बँधे हैं, यदि तुम्हे जाने दें, तो साहब हमें सस्पेंड कर देंगे।

रिक्शे वाले ने कहा-तुम्हें कोई सस्पेंड नहीं करेगा। कहाँ हैं तुम्हारे साहब ? ले चलो मुझे उनके पास। एक सिपाही रिक्शे वाले को साथ लेकर अन्दर गया। देखते ही साहब कड़ककर बोले-क्या बात है ? रिक्शावाले ने बताया-बाबूजी इनका शांतिकुंज पहुँचना बहुत जरूरी है। महिला हैं, इतनी दूर पैदल कैसे चलेंगी ? साथ में सामान भी है। दोनों की बहस में दस मिनट बीत गए। अंत में बाबा ने कहा-रिक्शा नहीं जा सकती, तो आप ही पहुँचाइये। आपके पास तो सरकारी गाड़ी भी है।

इस बात पर पास ही बैठे बड़े साहब को हँसी आ गई। वे बोल पड़े-अरे जाने दो इसे, पागल है, मानेगा नहीं। रिक्शा आगे बढ़ चला। बाबा ने शांतिकुंज के गेट पर पहुँचकर रिक्शा रोका। मैंने बाबा से कहा-तुम भी चलो, सुबह हवन करके चले जाना। बाबा मुस्कराने लगे। अब मेरा ध्यान बाबा के चेहरे की तरफ गया। मैं यह देखकर चौंक पड़ी कि बाबा का चेहरा पूज्य गुरुदेव से मिलता-जुलता है। पूजा घर में मैं देर तक गुरुदेव का फोटो देखती रहती हूँ। मुझे लगा कहीं ये गुरुदेव ही तो नहीं। वहीं कद-काठी, वही ललाट, वैसे ही ऊपर की तरफ लहराते बाल। फर्क सिर्फ इतना था कि बाबा की तरह उनकी दाढ़ी नहीं थी।

तभी बाबा के बोलने से मेरा ध्यान टूटा। वे कह रहे थे-सामान अन्दर ले जाओ, देर हो रही है। मैंने कहा-पहले भाड़ा तो दे दूँ। वे बोले-एक बार में सारा सामान नहीं जा सकेगा। तुम लोग थोड़ा सामान अन्दर रखकर आ जाओ, तब तक मैं बाकी के सामान देखता हूँ।

वापस आकर मैंने देखा कि सामान तो गेट के पास ही रखा है, लेकिन न तो वहाँ कोई रिक्शा है और न ही रिक्शे वाले बाबा। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि बिना पैसे लिए ही बाबा चले कैसे गये। अचानक मन में यह सवाल उठा-कहीं ये पूज्य गुरुदेव ही तो नहीं थे। हरिद्वार स्टेशन के पास धारा १४४ होने के बावजूद एक रिक्शे वाले का आना, पुलिस वालों को मनाकर हमें शांतिकुंज पहुँचाना अनायास ही नहीं हुआ। यह गुरुदेव की ही लीला है।

बात समझ में आते ही मैंने दोनों हाथों से सिर पीट लिया-हाय अभागन! तुमने उन्हें पहले ही क्यों नहीं पहचाना ? मैं बिलख उठी-हाय गुरुदेव! मुझे छलावा देकर चले गए। अपने बारे में बता दिया होता, तो तुम्हारा क्या बिगड़ जाता। यह अभागन भी तुम्हारे चरणों की धूल अपने माथे से लगाकर अपना जीवन सफल बना लेती।

**प्रस्तुतिः नीता बेन देवेन्द्र भाई जानी**
**अहमदाबाद ( गुजरात )**

# गुरुदेव ने मेरी दृष्टि बदल दी

दिसम्बर का महीना था। वातावरण में हल्की फुल्की ठण्डक थी। बाहर का वातावरण बहुत ही खुशनुमा बना हुआ था। उस खुशी की धूप हमारे परिवार में भी छाई हुई थी। हमारी अधीर प्रतीक्षा को विराम देते हुए नर्स ने आकर सूचना दी- लड़का हुआ है। हम सभी के चेहरे खुशी से खिल उठे। चूँकि बच्चा सिजरियन विधि से हो रहा था, इसलिए हम सभी चिंतित थे। नर्स के पीछे-पीछे एक हृष्ट-पुष्ट बच्चे को हाथों में लिए परिचारिका आई। उसके हाथ में बँधे नम्बर टैग को दिखाते हुए नर्स ने कहा- इस नम्बर को याद रखेंगे। अभी हम उसे आँख भर देख भी नहीं पाए थे कि परिचारिका उसे लेकर अंदर चली गई। साथ के सभी मित्र-परिजन एक दूसरे को बधाई देने लगे। किसी ने मिठाई मँगवाने की फरमाइश की। इन्कार का सवाल ही नहीं था। मैंने जेब से तत्काल रुपये निकालकर दे दिए। हृदय आनन्द से इस तरह आप्लावित था। कि कोई आसमान के तारे तोड़ लाने को कहते तो मैं उसके लिए भी चल पड़ता।

अभी अस्पताल की बहुत सारी औपचारिकताएँ पूरी होनी थी, इसलिए बाकी लोगों को वहीं छोड़ मैं वापस आ गया। बहुत सारे काम करने थे, सभी लोगों को खबर देनी थी। मैं अपनी व्यस्तता में खो गया। जब फुर्सत मिली तो सायंकालीन संध्या वंदन का समय हो चला था। अस्ताचलगामी दिवाकर की ओर देख मैं मन-ही-मन कृतज्ञता से भर उठा। उसी समय अचानक अस्पताल से खबर मिली बच्चे की हालत गम्भीर है। इन्क्युबेटर में रखा गया है, ऑक्सीजन दिया जा रहा है।

मैं सकते में आ गया। सहसा विश्वास नहीं कर सका। अभी दोपहर को ही स्वस्थ बच्चा देखकर आया था। इसी बीच ऐसा कैसे हो गया। घर में (ससुराल में) लोगों को बताया तो वहाँ रोना-धोना मच गया। पर मेरे पास तो रोने का भी अवसर नहीं था। मैं भागता हुआ अस्पताल पहुँचा। वहाँ डाक्टरों ने बताया बच्चे के नाक और मुँह से पानी आ रहा है। श्वास लेने में कठिनाई हो रही है। हम हर संभव प्रयास कर रहे हैं। ईश्वर से प्रार्थना कीजिए कि हमारा प्रयास सफल हो। अभी 72 घंटे के बाद ही कुछ कहने की स्थिति बन पाएगी। चिन्तित होकर मैंने माताजी की ओर देखा। वे लोग भी चिन्तित थे। पर उन्हें अपने गुरुपर अटूट भरोसा था। माता-पिता (ससुराल के) गुरुदेव आचार्य श्रीराम शर्मा से दीक्षित थे। मेरा मनोबल बढ़ाते हुए पिताजी ने कहा- बेटा चिन्ता मत कर, गुरुदेव जो करेंगे, भले के लिए ही करेंगे।

आज इन पंक्तियों को लिखते हुए मेरी आँखें नम हो रही हैं, पर उस रात मैं रोया नहीं था। पिताजी के कहे वे शब्द मेरे अन्तर में उतरते चले गए। गहन अंतराल में कहीं ये शब्द बार-बार बज रहे थे। इन्हीं शब्दों में डूबते-उतराते खुली आँखों में ही रात बिता दी।

अगले दिन शाम को एक जूनियर डॉक्टर ने मुझे एकान्त में बुलाकर कहा- देखिए आप बच्चे के पिता हैं,आपको बता दूँ-यह एक हारा हुआ केस है। शायद उन्हें लगा होगा, माताजी के सामने ये बातें बताने पर वे रोने-बिलखने लगेंगी। लेकिन मैं उनके संयमित स्वभाव से परिचित था। मैंने उनको बताया कि डॉक्टर ऐसा कह रहे हैं। उन्होंने शान्त स्वर में कहा- गुरुदेव हमारे साथ हैं, हम लोग अन्त तक कोशिश करेंगे।

शाम ६.३० बजे एक नर्स के सत्परामर्श पर हम सभी बच्चे को लेकर शिशु रोगों के लिए प्रसिद्ध फोटो पार्क नर्सिंग होम ले जाने के लिए तैयार हुए। वहाँ पहुँचने तक यथास्थिति बनी रहे, इसके लिए मैंने अस्पताल से इन्क्युबेटर देने का आग्रह किया, लेकिन वह उपलब्ध न हो सका। बच्चे को गोद में लेकर एक ऐम्बुलेंस में बैठ गया। इतने छोटे बच्चे को ऑक्सीजन मास्क लगाना संभव नहीं था। एक नर्स ने थिस्ल टिप के बदले कागज का टिप बनाकर ऑक्सीजन पाइप को उसमें लगाकर मुझे पकड़ाते हुए कहा- इसे बच्चे के नाक के पास पकड़े रहें।

एम्बुलेंस तेजी से बढ़ती जा रही थी, सभी अन्य वाहन उसे रास्ता छोड़ते जाते। मैं बच्चे को एकटक निहार रहा था, कैसे निस्तब्ध सा पड़ा है मेरी गोद में...। इससे आगे मैं सोच नहीं पाता। पीछे की सीट पर माँ और पिताजी (सासू माँ और ससुर जी) बैठे थे। उनके मौन जप का क्रम निरंतर जारी था। गुरुजी के प्रति उनकी अपार श्रद्धा ही शायद मेरे बच्चे का जीवन लौटा लाए। मैंने भी आँखें मूँद लीं। 'हे गुरुदेव, इतने छोटे बच्चे को इतना कष्ट क्यों'! मन-ही-मन इतना कहते हुए मेरी आँखों में आँसू छलक आए; और एक बूँद टपक कर बच्चे के देह पर गिरा। यही वह क्षण था- पूरे अन्तर्मन को मथता हुआ एक विचार कौंधा, जितने अपनेपन से मैं इस बच्चे के लिए प्रार्थना कर रहा हूँ, सबके लिए प्रार्थना करते समय भी मुझमें इतना ही अपनापन होना चाहिए। इस विचार-तरंग के बाद रुलाई स्वतः बंद हो गई। मन जैसे कोई अवलंबन पाकर निश्चिन्त सा हो गया कि सबका भला-बुरा देखने वाला एक है। जो होगा अच्छा ही होगा।

इन्हीं विचारों के उधेड़-बुन में एम्बुलेंस पार्क नर्सिंग होम पहुँच गई। वहाँ पहुँचते ही बच्चे को जाँच के लिए उपयुक्त कक्ष में ले जाया गया। १५ मिनट बाद हमें बताया गया कि बच्चे का एक नासाछिद्र पूरा बन्द है और एक आंशिक रूप से खुला हुआ है। नाक-मुँह से पानी बहने का यही कारण है। ठुड्डी भी छोटी है तथा फेरेञ्जियल पैरालिसिस हो गया है। जिसके कारण श्वास-नली और भोजन नली का सम्पर्क ठीक से नहीं बन पा रहा है। इसलिए बच्चा कुछ भी निगलने में असमर्थ है। दो विशिष्ट चिकित्सक डॉ० अशोक घोष (सर्जरी) और डॉ० अशोक राय (मेडिसिन) की देख-रेख में इलाज शुरू हुआ। यहाँ हाइजिनिक कारणों से बाहरी कोई वस्तु अन्दर ले जाने पर पाबन्दी थी। मैं अगले दिन गुरुदेव का दिया हुआ ताबीज लेकर गया। नियम

जानते हुए भी मुझसे रहा नहीं गया। बच्चे की देखभाल करने वाली नर्स मणिमाला को बुलाकर मैंने अनुनय भरे स्वर में पूछा-आप मेरे गुरुदेव द्वारा दिए हुए इस ताबीज को मेरे बेटे के माथे से स्पर्श कराकर ला देंगी? उसने मुस्कुराते हुए ताबीज ले ली। थोड़ी देर बाद वापस करते हुए उसने कहा-वैसे मेरे हाथ से आज तक कोई केस खराब नहीं हुआ है; फिर भी आपके इच्छानुसार मैंने इस ताबीज को बच्चे के सारे शरीर में स्पर्श करा दिया है। सब कुछ करने वाले तो वही हैं, हम तो केवल प्रयास भर करते हैं।

इसी तरह प्रतिदिन शाम को बच्चे को ताबीज का स्पर्श कराता रहा। चौथे दिन डॉ० घोष से मेरा परिचय हुआ। उन्होंने गुरुदेव के विषय में भी जानना चाहा। मेरे बताने पर उन्होंने कहा-अब बच्चे को मेरे इलाज की आवश्यकता नहीं। भविष्य में कभी (४-५ साल बाद) जरूरत पड़े तो मेरे पास अवश्य आएँ। उन्होंने अपना सेवा शुल्क (प्रति विजिट ५००/- रुपये) लेने से मना करते हुए कहा कि सर्जरी की जरूरत ही नहीं पड़ी। नाक के छिद्र स्वतः ही खुल गए।

इसके बाद का इलाज डॉ० राय ने किया। कुल १३ दिनों तक इलाज चला। इस बीच सभी के व्यवहार में कुछ बदलाव आ गया था। वहाँ के सभी डॉक्टर और नर्सें मुझे कुछ अतिरिक्त सम्मान देने लगे थे। मैंने इसे गुरुदेव का ही सम्मान माना। अन्तिम दिन जब नर्सिंग होम से बच्चे को वापस लाने के लिए गया तो वहाँ की बहुत सारी नर्सें इकट्ठी होकर मुझसे मिलने आईं और अनुरोध किया- भाई साहब हमारे लिए कुछ कहकर जाएँ। अचानक इस प्रकार के अनुरोध से मैं स्तम्भित रह गया। फिर कुछ सँभलते हुए कहा-हम गायत्री परिवार के हैं। गुरुदेव कहते हैं गायत्री की मूल शिक्षा है-सभी के लिए सद्बुद्धि की कामना। आप भी यही कामना करें। बस मैं तो इतना ही जानता हूँ।

डॉ० राय की फीस भी वहाँ के प्रबंधन ने लेने से इनकार कर दिया। आज ११ साल बाद भी कभी बच्चे को नर्सिंग होम नहीं ले जाना पड़ा। पूर्ण अन्तःकरण से मैं यह विश्वास करता हूँ कि गुरुदेव की सूक्ष्म सत्ता हमें सदा संरक्षण देती रहती है। मैं नतमस्तक हूँ उनके इस स्नेह के प्रति।

**प्रस्तुति : अनुज चक्रवर्ती**
**कोलकाता ( प.बंगाल )**

# तीर के वार से भी कुछ नहीं बिगड़ा

कहते हैं, पहाड़ पर से गिराने, साँपों से कटवाने तथा आग से जलाने का प्रयास भी प्रह्लाद की जीवन लीला समाप्त नहीं कर सका। उसके पिता ने उसे बुलाकर पूछा- तुम्हारी मृत्यु के इतने सारे उपाय किए जाने के बाद भी तुम बच कैसे गये? तब प्रह्लाद ने यही जवाब दिया था, इन भयंकर साँपों में, इस आग में कण-कण में हरि विराजमान हैं। जब मौत मेरे सामने खड़ी थी, उस समय मैं भी उन्हें ही स्मरण कर रहा था। इसलिए मेरे चित्त में भी वही विराज रहे थे। दोनों एकधर्मा होने के कारण ये एक-दूसरे को नष्ट नहीं कर सकते थे।

कुछ ऐसी ही घटना है जो जीवट नगर के मुकेश सोनी के १८ वर्षीय बेटे अनमोल के साथ पिछले दिनों घटित हुई।

वसंत पर्व का समय था। जन्म शताब्दी वर्ष की निर्धारित कार्यक्रम श्रृंखला के तहत ६ से ८ फरवरी तक गुरुदेव के विचारों को प्रत्येक गाँव में पहुँचाने के लिए संकल्पित युवा भाई-बहनों की टोली पूर्व निर्धारित क्षेत्रों की ओर चल चुकी थी।

आदिवासी अंचल का यह इलाका उपजोन बड़वानी में पड़ता है जिसमें छह जिले आते हैं-खरगौन, खंडवा, बड़वानी, बुरहानपुर, अलीराजपुर और झाबुआ। उत्साही परिजनों द्वारा इन सभी स्थानों में गायत्री यज्ञ कराए जाने के कारण पूरा परिवेश ही गायत्रीमय हो चुका था।

सरकार की विभिन्न प्रगतिशील परियोजनाओं के बावजूद जहाँ आज तक आधुनिक संसाधन और सुविधाएँ नहीं पहुँच सकीं, वहाँ ये प्राणवान युवा परिजन पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुँचा रहे थे।

उपजोन के चार हजार गाँवों में, छह हजार स्थलों पर दीपयज्ञ का आयोजन कर ऋषिवर को श्रद्धांजलि अर्पित की गई। २०० स्थानों पर मंगल कलश यात्रा निकाली गई। अखंड जप सम्पन्न किए गए।

७ फरवरी की शाम को सभी धर्मों के लोगों ने लाखों दीप जलाकर नवयुग के आगमन का स्वागत किया। हर्षोल्लास के वातावरण में यह दीपोत्सव सम्पन्न हुआ।

देशवाराय से दीपयज्ञ सम्पन्न कराकर अनमोल और उसके पिता मुकेश सोनी अपनी टोली के साथ लौट रहे थे। रास्ते में राजमलिया फाटक के पास चौराहा पार करते समय अचानक ८-१० आदिवासियों ने हमला कर दिया। नीयत लूटपाट की थी।

हमलावरों के पास तीर कमान थे, जबकि ये सभी निहत्थे थे। यज्ञायोजन के लिए जा रही पुरोहितों की टोली में हथियार का क्या काम?

सभी परिजन मोटर साइकिल पर सवार थे। छह मोटर साइकिलों में सबसे आगे अनमोल अपने ममेरे भाई संकेत के साथ था।

संकेत मोटर साइकिल चला रहा था। अनमोल पीछे बैठा भव्य आयोजन की सफलता के श्रेय को लेकर मन ही मन परम पूज्य गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता व्यक्त कर रहा था।

हमलावर सड़क के किनारे तीर कमान लिए घात लगाकर बैठे थे। मोटर साइकिल सवारों पर तीरों की बौछार होने लगी। एक तीर सनसनाता हुआ आया और अनमोल के सिर के पिछले हिस्से में जा लगा। पूरी ताकत से चलाया गया तीर सिर को भेदकर अन्दर घुस गया।

अनमोल ने बाएँ हाथ से मोटर साइकिल की सीट को जोर से पकड़ा, दाहिने हाथ से तीर लगे हिस्से को दबाया और भाई संकेत को मोटर साइकिल तेजी से भगाने का इशारा किया।

संकेत ने गाड़ी की रफ्तार तेज कर दी। तीस किलोमीटर दूर, जाबेर पहुँचकर उसने प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में गाड़ी रोकी। टोली के सभी भाई साथ ही थे। रात के साढ़े दस बज चुके थे।

स्थिति की गंभीरता को देखते हुए डॉक्टरों ने तत्काल गुजरात के सबसे बड़े अस्पताल, दाहौद हास्पिटल के लिए रेफर कर दिया। राजन सोनी उसे लेकर दाहौद हॉस्पिटल पहुँचे। वहाँ डॉक्टरों ने रात में ही ऑपरेशन करने का निर्णय लिया। सारी तैयारियाँ तेजी से होने लगीं। २० मिनट के बाद ही ऑपरेशन शुरू हो गया।

जब ऑपरेशन से नुकीला तीर निकाला गया तो सभी डॉक्टर तीर की हालत देखकर आश्चर्यचकित रह गए। तीर माथे के पिछले हिस्से में आधा इंच अन्दर घुस जाने के बाद आश्चर्यजनक ढंग से मुड़ गया था।

नुकीला तीर मस्तिष्क को कोई नुकसान नहीं पहुँचा सका था, मानो वह मानव मस्तिष्क नहीं वरन् किसी वज्र का बना हो।

ऑपरेशन के बाद सभी डॉक्टर देर तक इसी घटना पर चर्चा करते रहे। सबने यही कहा कि ऐसी विचित्र घटना पहली बार देखी है। तीर जैसी नुकीली वस्तु कपाल की कठोरता को भेदकर अंदर तो चली जाये, पर सुकोमल मानव मस्तिष्क को न भेद सके, इससे बड़ा आश्चर्य और क्या होगा?

अनमोल ने मुस्कुराते हुए जवाब दिया-मैं गुरुजी का काम कर रहा था, इसलिए मेरा नुकसान हो ही नहीं सकता था। इस साधारण तीर की क्या विसात कि गुरुजी का काम रोक दे।

सभी डॉक्टर अनमोल की बातें सुनकर सहमति सूचक शैली में जोर-जोर से सिर हिलाने लगे। एक सीनियर डॉक्टर ने कहा-अपने गुरुदेव के प्रति तुम्हारे इस अटल विश्वास ने ही तुम्हें बचाया है। भक्त का विश्वास अटल हो तो भगवान उसे किसी भी आसन्न खतरे से बचा ही लेते हैं और कठिन से कठिन परिस्थिति में भी अविचल बनाये रखते हैं।

**प्रस्तुतिः महेन्द्र भावसार**
**अंजड़, बड़वानी (म.प्र.)**

# निर्मूल सिद्ध हुई डॉक्टरों की आशंका

उन दिनों मैं जमालपुर शक्तिपीठ में समयदान कर रहा था। दो-तीन महीने के अन्तराल में घर भी हो आता था। इसी दौरान एक दिन मेरी पीठ पर छोटा-सा फोड़ा निकल आया। मैंने सोचा कि यह तो साधारण सी बात है। राई भर का फोड़ा है, ठीक हो जायेगा अपने आप। लेकिन फोड़ा था कि दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा था। कुछ दिनों बाद जब घर पहुँचा, तो पत्नी को दिखाया। उसने फोड़े का मवाद निकालकर घर में रखा मरहम लगा दिया। लेकिन वह फोड़ा ठीक होने के बजाय और बड़ा हो गया। कार्य की व्यस्तताओं के कारण फोड़े की उपेक्षा होती रही। डॉक्टर को दिखाने के बजाय पत्नी का इलाज ही चलता रहा। साल बीतते-बीतते उसका आकार काफी बड़ा हो गया था। हमेशा असहनीय दर्द रहता। अब तो फोड़े से दुर्गन्ध भी आने लगी थी।

अन्ततः डॉक्टर अशोक मुखर्जी के क्लीनिक में दिखाया, तो उन्होंने चिन्तित स्वर में कहा-इतने दिन डिले नहीं करना चाहिए था। ऐसी देर से साधारण फोड़ा भी कैन्सर में बदल जाता है। आप अच्छी तरह से चेकअप करवाइये। कैन्सर टेस्ट भी अवश्य करा लें। कम-से-कम निश्चिंत तो हो जाएँगे।

डॉ. मुखर्जी की बातों से मन चितिंत हो गया। किसी दूसरे डॉक्टर की राय भी ले ली जाए, यह सोचकर धनबाद के एक सर्जन डॉ. ए.के. सहाय से मिला। उन्होंने भी फोड़े को देखकर यही संदेह जताया कि कैन्सर हो सकता है। उन्होंने कई प्रकार की दवाएँ दीं, लेकिन बीमारी घटने के बजाय बढ़ती ही गई। मवाद का निकलना इस कदर बढ़ गया था कि एक दिन के अन्तराल पर ड्रेसिंग कराना अनिवार्य हो गया।

कैन्सर के अन्देशे के कारण कोई भी डॉक्टर ऑपरेशन करने के लिए तैयार नहीं था। जब फोड़ा बढ़ते-बढ़ते नीबू के आकार का हो गया तो बनारस के कैन्सर के विशेषज्ञ डॉ. एस.पी. सिंह के पास पहुँचा। वे भी खतरे की आशंका से ऑपरेशन के लिए तैयार नहीं हुए।

मेरे इस कष्ट के निवारण के लिए मेरी पत्नी ने शांतिकुंज जाकर विशेष अनुष्ठान किया। वापस आकर उसने बताया-पूज्य गुरुदेव ने कहा है, कुछ नहीं होगा। साधारण सा फोड़ा है, काटकर हटा दे।

पूज्य गुरुदेव का आश्वासन मिल जाने के बाद मैंने एक बार फिर अपने पुराने डॉ. ए.के. सहाय से बात की। वे बड़ी मुश्किल से ऑपरेशन के लिए राजी हुए। उन्होंने फोड़ा काट कर हटा दिया। गुरुकृपा से बड़े-बड़े डॉक्टरों द्वारा व्यक्त की गई कैन्सर की आशंका निर्मूल सिद्ध हुई।

**प्रस्तुतिः त्रिवेणी प्रसाद अग्रवाल,**
**गिरीडीह ( झारखण्ड )**

# आसान होता गया शान्तिकुञ्ज का सफर

जब मैं पहली बार शान्तिकुञ्ज जा रहा था तो पत्नी बहुत रोई थी। उसे किसी ने कह दिया था वहाँ जाने वाले लौटते नहीं, वहीं के हो जाते हैं। उसे संदेह था-कहीं मैं सन्यासी न बन जाऊँ। मैंने समझाया-गुरुदेव स्वयं गृहस्थ हैं। वे हमेशा कहा करते हैं, गृहस्थ एक तपोवन है। सबसे बड़ी तपस्या वहीं होती है, फिर मुझे सन्यास की जरूरत ही क्या है ? मैं तो केवल उनके दर्शन करने जा रहा हूँ। इस प्रकार की ढेर सारी बातें करके उसे बड़ी मुश्किल से मना पाया था।

मैं उन दिनों गायत्री परिवार से पहले-पहल जुड़ा था। गुरुदेव का सत्साहित्य पढ़ता रहा था। सन् १९८६ में जब गुरुदेव की सूक्ष्मीकरण साधना चल रही थी, उन्हीं दिनों दीवार लेखन तथा अखण्ड ज्योति वितरण का कार्य मुझे मिला। इसी वर्ष ३ फरवरी को गर्दनीबाग, पटना के नौकुंडीय यज्ञ में मैंने दीक्षा ली थी। उसी समय श्री चन्द्रशेखर प्रसाद जी (अब स्वर्गवासी) का सान्निध्य प्राप्त हुआ। ये गुरुदेव के समर्पित शिष्यों में से थे। इनके व्यक्तित्व से मैं काफी प्रभावित था।

एक दिन अचानक प्रसाद जी ने मुझसे कहा-आप हरिद्वार चलें। उन्हीं से मालूम हुआ-गुरुदेव ने अपनी सूक्ष्मीकरण साधना के समापन पर सभी नैष्ठिक शिष्यों को पास बुलाया है। उनके पास पत्र आया था, वे चाहते थे मैं भी साथ चलूँ। मैं तो पहले ही अखण्ड ज्योति और युग निर्माण साहित्य से इतना प्रभावित था कि इनके सूत्रधार इस युगपुरुष के दर्शनों के लिए आतुर-सा था। मैं सानन्द चलने को तैयार हो गया।

होली के बाद पटना से रवाना होना था। होली के अगले दिन घर से चला, खजूरिया चौक पहुँचकर देखा कोई यात्री वाहन नहीं चल रहा है। एक ट्रक वाले से अनुरोध किया तो उसने मुजफ्फरपुर तक पहुँचा देना स्वीकार किया। रास्ते में ड्राइवर को गायत्री मंत्र के विषय में बताया तो उसने उत्साहपूर्वक मुझसे स्टीकर लेकर गाड़ी में चिपका लिया, जबकि वह ड्राइवर मुस्लिम था।

मुजफ्फरपुर में जहाँ ट्रक से उतरा वहीं तत्काल कार वाले एक साहब ने लिफ्ट दे दी। इस तरह बिना किसी अड़चन के मैं पटना पहुँच गया। अगले दिन सुबह हम चार लोग पटना से रवाना हुए। यहाँ भी अकल्पनीय रूप से हम सभी को खाली बर्थ मिल गई,जबकि हमारा रिजर्वेशन नहीं था। मन आनंद और उमंग से भरा था। विपरीत परिस्थिति रहते हुए भी मार्ग में सर्वत्र अनुकूलता बनती चली गई। ऐसा लग रहा था जैसे गुरुदेव ने मुझे भी बुलाया हो, तभी तो रास्ते के सारे अवरोध सारी प्रतिकूलताएँ अपने आप ही दूर होती जा रही हैं।

प्रात:काल हरिद्वार पहुँचा, और फिर मेरे सामने था बहुप्रतीक्षित अपना वह गुरुद्वारा-गायत्री तीर्थ, शांतिकुंज! कितनी पवित्र शांति! गंगा की गोद में बसा यह

तीर्थ-दर्शन कर निहाल हो गया। गंगा स्नान के बाद भोजन प्रसाद लिया। अब, बस इस बात की प्रतीक्षा थी कि कब गुरुदेव के दर्शन हों।

दोपहर साढ़े बारह बजे गोष्ठी थी। यात्रा से सभी थके हुए थे, वे सोने की तैयारी कर रहे थे। मैं सोना नहीं चाहता था। भय था कहीं गहरी नींद सो जाऊँ, तो अवसर चूक सकता है। सोचा, गोष्ठी के बाद सो लूँगा। लेकिन इतनी विकल प्रतीक्षा के बावजूद रात्रि की थकान ने असर दिखाया और कब सो गया, इसका पता ही नहीं चला। अचानक ऐसा लगा कि किसी ने झकझोरकर जगाया हो- गोष्ठी में नहीं जाना क्या? मेरी नींद खुल गई, देखा आसपास कोई नहीं है, जल्दी-जल्दी हाथ-मुँह धोकर गोष्ठी में पहुँचा।

गोष्ठी के पहले घोषणा की गई-जिन्हें गुरुदेव का पत्र मिला है, वे अपना नाम दें-गुरुदेव ने माँगा है। मैं निराश हो गया-मुझे तो पत्र नहीं मिला था, द्वार तक पहुँचकर भी दर्शन से वंचित रह गया- सोचकर अंतर तक व्यथित हो उठा, आँखों में आँसू आ गए। परन्तु अगले ही क्षण फिर घोषणा हुई- यदि कोई व्यक्ति स्वयं को क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम समझते हैं, तो वे भी अपना नाम दें। उम्मीद जगी, मैंने अपना नाम दे दिया और इस तरह गुरुदेव के पास जाने की व्यवस्था बन गई।

गुरुदेव के सम्मुख पहुँचा तो पुरुषार्थ की उस प्रतिमा को देख कर ऐसा लगा कि ये तो स्वयं महाकाल हैं। दर्शन पाकर धन्य हो गया। उन्होंने कहा था-बेटा, मैं व्यक्ति नहीं, एक शक्ति हूँ। यह जो हाड़-मांस का पुतला देख रहे हो, यह मेरा स्थूल रूप है।

उनका निर्देश था- जीवन में स्वाध्याय और सत्संग कभी मत छोड़ना। दुनिया पेट और प्रजनन में मर खप जाती है। तुम उससे अलग हटकर रहना। गुरुदेव की प्रेरणा मुझे आज भी अपने कर्तव्य पथ पर अडिग रहने का संबल देती है।

**प्रस्तुतिः मनोजित दासगुप्ता**

**टाटा-जमशेदपुर (झारखण्ड)**

## संकल्प शक्ति के परिणाम

संकल्प शक्ति की दिशा-धारा भली या बुरी कोई भी हो सकती है। इसका गहरा सम्बन्ध मनुष्य की चरित्र-निष्ठा से जुड़ा हुआ है। यदि चरित्र-निर्माण की दिशा गलत हो, तो दृढ़ संकल्प-शक्ति विनाशकारी भी हो सकती है। तब वह निष्ठुर व्यक्तियों को आततायी बनाकर उसे प्रेत-पिशाच के स्तर का भी बना सकती है। हिटलर, नैपोलियन, सिकन्दर आदि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। उनमें संकल्प बल की जरा भी कमी नहीं थी। प्रतिभा भी उनमें कूट-कूट कर भरी थी। पर उनकी दिशा-धारा सही नहीं थी। परिणामस्वरूप उनके विनष्ट होने में देर नहीं लगी।

# जागृत हुई गाँव की सामूहिक शक्ति

यद्यपि मैंने कभी गुरुदेव के साक्षात् दर्शन नहीं किए और न ही दीक्षा ली। पर उनके साहित्य को पढ़कर क्रमशः उनके करीब आता चला गया। इन पुस्तकों के सहारे ही मैं वैज्ञानिक अध्यात्मवाद की गहराई में उतर सका और इस आध्यात्मिक यात्रा के क्रम में मैंने आचार्यश्री का वरण गुरु के रूप में कर लिया। उन्हें गुरु मान लेने के बाद से मुझे सूक्ष्म जगत से कई तरह के संकेत मिलने लगे। इन्हीं संकेतों के आधार पर आचार्यश्री की पुस्तकों को लेकर मैंने एक पुस्तकालय की स्थापना की, जिसमें आज अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की पुस्तकें भी उपलब्ध हैं। पूज्य गुरुदेव ने स्वप्न में आकर मुझे लेखन कार्य के लिए प्रेरित किया। यह गुरुसत्ता की असीम अनुकम्पा का ही परिणाम है कि आज भी कृषि विज्ञान पर लिखी गयी मेरी पुस्तकों पर कृषि वैज्ञानिकों द्वारा शोध-कार्य किए जा रहे हैं। मेरे जीवन में पूज्य गुरुदेव के अनुदान की वर्षा इस प्रकार होती रही कि गाँव का एक साधारण-सा युवक होकर भी मैंने कई देशों की यात्रा सरकारी आमंत्रण पर की।

जीवन की छोटी-बड़ी अनेक विपत्तियों में मुझे पूज्य गुरुदेव का सहारा मिलता रहा। इन विपत्तियों के दौर में समाधान की ओर ले जाने वाले घटनाक्रम को देखकर यह बात साफ तौर से समझ में आ जाती थी कि यह समाधान किसी मानवीय प्रयासों से नहीं, अपितु सूक्ष्म चेतना के संरक्षण से मिला है।

इस तथ्य को मैंने पहली बार तब समझा, जब मेरे यहाँ डाका पड़ा। छोटी-मोटी चोरियाँ तो हमारे गाँव में हो जाया करती थीं लेकिन डकैती जैसे बड़ी वारदात से गाँव वाले उस वक्त तक परिचित नहीं हुए थे। जमींदार का परिवार होने के कारण डकैतों ने सबसे पहले मेरे ही घर पर हमला बोला। हट्टे-कट्टे शरीर वाले लगभग ४० डकैत, वह भी हथियारों से लैस। उन्हें देखते ही सभी के प्राण सूख गए। शिकार आदि के लिए शौकिया तौर पर पिताजी के पास एक बन्दूक थी, मगर अचानक हुए इस हमले के कारण पिताजी को बन्दूक तक पहुँचने का अवसर ही नहीं मिला। आते ही डकैतों ने उन्हें अपनी गिरफ्त में ले लिया। घर के सभी लोग बुरी तरह घबरा गए।

डकैतों ने हम सभी को पूरी तरह से आतंकित करने के लिए घर के लोगों को बेरहमी से पीटना शुरू कर दिया। मेरे अन्दर बार-बार इनका विरोध करने की प्रेरणा जाग रही थी, लेकिन मैं समझ नहीं पा रहा था कि मुझे क्या करना चाहिए। उन्हें छुड़ाने के लिए आगे बढ़ने का तो प्रश्न ही नहीं था। उनकी बन्दूक कभी भी आग उगल सकती थी। डकैतों के इतने बड़े गिरोह से अकेला मैं मुकाबला करूँ तो कैसे करूँ। मैंने गुरुदेव का स्मरण किया और उनसे प्रार्थना की-हे प्रभु बताएँ, इस विपत्ति में मैं अपने परिवार की रक्षा कैसे करूँ।

मुझे लगा कि पूज्य गुरुदेव एक ही वाक्य बार-बार दुहरा रहे हैं-छत पर जा, छत पर जा....। पहले तो तनी हुई बन्दूक के सामने से भागने की हिम्मत नहीं पड़ी, पर तीसरी बार यह निर्देश मिलने के बाद मैं दौड़कर छत पर पहुँच गया। मन ही मन

गुरु-गुरु, गायत्री-गायत्री जपता जा रहा था। एक छत से दूसरी छत पर कूदता हुआ मैं कई मकान आगे तक जा पहुँचा और जोर-जोर से शोर मचाने लगा। एक-एक कर लोग इकट्ठे होने लगे। सबके हाथों में लाठी-भाले आदि विभिन्न प्रकार के हथियार थे। सभी शोर मचाते हुए मेरे घर की ओर दौड़ पड़े। गाँव वालों की भारी भीड़ को पास आता देखकर डकैतों के हौसले पस्त हो गए। उस समय तक वे जो धन-संपत्ति समेट सके थे, उसे लेकर भाग खड़े हुए। गाँव वालों की सामूहिक शक्ति को मिली इस भारी जीत से सभी खुश थे। धन सम्पत्ति की तो काफी क्षति हुई थी, कई लोग घायल भी हो गए थे, लेकिन जान किसी की नहीं गई। खतरों से खेलकर मैंने जिस प्रकार पूरे गाँव को इकट्ठा किया, सभी बड़े-बूढ़े लोग उसकी सराहना कर रहे थे, मेरी उपस्थित बुद्धि को सराह रहे थे। एक ने पूछा-तुम्हें डर नहीं लगा? मैंने सच-सच बता दिया कि पहले तो डर रहा था, मगर गुरु-गुरु जपते ही सारा डर गायब हो गया।

पिताजी ने कहा-तुमने तो अभी तक दीक्षा भी नहीं ली है, फिर गुरु-गुरु क्यों कर रहे थे? मैंने उन्हें बताया कि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य की किताबों से मुझे वैज्ञानिक अध्यात्मवाद का जो गहरा ज्ञान मिला है उसी के कारण मैंने मानसिक रूप से गुरु के रूप में आचार्यश्री का वरण कर लिया है।

इस घटना के दौरान मुझे जिस प्रकार की आन्तरिक अनुभूति हुई थी उसे देखते हुए मेरे मन में यह विश्वास पूरी तरह से जम चुका था कि उन्होंने भी मुझे अपना शिष्य स्वीकार कर लिया है। इसके बाद भी कई बार अलग-अलग रूपों में उनके दर्शन होते रहे- कभी स्वप्न में, कभी प्रत्यक्ष।

**प्रस्तुतिः कृष्णमुरारी किसान**
**शेखपुरा ( बिहार )**

## संयम और सदुपयोग का महत्व

तपश्चर्या के मौलिक सिद्धान्त हैं- संयम और सदुपयोग। इंद्रिय संयम से, पेट ठीक रहता है, स्वास्थ्य नहीं बिगड़ता। ब्रह्मचर्य पालन से मनोबल का भंडार चुकने नहीं पाता। अर्थ संयम से, नीति की कमाई से औसत भारतीय स्तर का निर्वाह संभव बन पड़ता है, फलतः न दरिद्रता फटकती है और न बेईमानी की आवश्यकता पड़ती है। समय संयम से व्यस्त दिनचर्या बनाकर चलना पड़ता है। फलतः कुकर्मों के लिए समय ही नहीं बचता। जो बन पड़ता है, श्रेष्ठ और सार्थक ही होता है। विचार संयम से एकात्मता सधती है। आस्तिकता, आध्यात्मिकता और धार्मिकता का दृष्टिकोण विकसित होता है।

# मुँह की खानी पड़ी नाचती हुई मौत को

घटना वर्ष १९९७ के दिसम्बर महीने की है। उस समय मैं घोड़ासहन सीमा शुल्क इकाई (निवारण) में निरीक्षक के पद पर तैनात था। घोड़ासहन तहसील भारत नेपाल सीमा पर मोतिहारी जिला में अवस्थित है।

मैं मुजफ्फरपुर सीमा शुल्क निवारण प्रमंडल से स्थानान्तरित होकर वर्ष १९९७ फरवरी माह में घोड़ासहन गया था। हम लोगों का कार्यकाल सीमा शुल्क (इंडो नेपाल बोर्डर) पर पाँच साल का होता है। फिर हमारी सेवा केन्द्रीय उत्पाद शुल्क विभाग को लौटा दी जाती है।

सीमा शुल्क में मेरी सेवा का कार्यकाल १९९७ में समाप्त हो रहा था। वर्ष १९९८ में मुझे लौटकर केन्द्रीय उत्पाद शुल्क में आना था। विश्वस्त सूत्रों से मुझे ज्ञात हुआ कि मेरा स्थानान्तरण केन्द्रीय उत्पाद शुल्क, टाटानगर मुख्यालय में होने को है।

उस समय मेरा छोटा बेटा राँची में अपने तीन दोस्तों के साथ अशोक नगर में रहकर प्लस टू की पढ़ाई डी.ए.वी.जवाहर विद्या मंदिर, श्यामली में कर रहा था। उसका स्वास्थ्य थोड़ा खराब रहता था। इसलिए मैं चाहता था कि मेरा स्थानान्तरण राँची हो जाय, ताकि मेरा पुत्र मेरे साथ रहकर पढ़ाई कर सके। इस आशय का निवेदन करने मैं अपने विभागीय मुख्यालय पटना गया।

मैं शाम को पटना से बस पकड़कर सीतामढ़ी पहुँचा। बस के लेट हो जाने की वजह से घोड़ासहन जाने की ट्रेन छूट गई।

दूसरी ट्रेन करीब बारह बजे रात में थी। मैं घोड़ासहन स्टेशन परिसर में ही ट्रेन की प्रतीक्षा कर रहा था। ट्रेन करीब २ बजे रात में आई। सीतामढ़ी से घोड़ासहन का सफर २ घंटे में पूरा हुआ।

तीन बजे के बाद मुझे झपकी आ गई और मैं बैठे-बैठे गहरी निद्रा में चला गया। घोड़ासहन स्टेशन आया। पूड़ी-सब्जी बेचने वालों और दूसरे लोगों के शोरगुल से मेरी नींद खुली। तब तक गाड़ी चल चुकी थी। मैं कच्ची नींद से जागने की वजह से थोड़ा असहज सा था।

मेरे पास एक पतला ब्रीफकेस था। मैं चलती ट्रेन से उतर गया। पर मुझे लगा कि यह तो घोड़ासहन नहीं है। लोगों ने गलत कह दिया है। मैं फिर ट्रेन पर चढ़ गया। पर लोग कहने लगे कि ये घोड़ासहन ही है। फिर मैं ट्रेन से दूसरी बार उतरने लगा। उतरने के क्रम में एक हाथ में ब्रीफकेस होने की वजह से संतुलन बिगड़ गया, जिससे सीढ़ीवाला रॉड मेरे हाथ से छूट गया और मैं नीचे गिर गया।

मैं चीखता हुआ पटरी पर तेजी से घूम रहे चक्के के पास जाने लगा। मुझे लगा कि अब या तो मेरी जीवन लीला समाप्त हो जाएगी अथवा मैं अपंग हो जाऊँगा। मैंने मन ही मन पूज्य गुरुदेव को याद किया और उनसे प्रार्थना करने लगा- हे गुरुदेव! मुझे बचा लीजिए।

अगले ही पल करुणावतार गुरुदेव ने करुणा दिखाई। मुझे लगा कि मेरी पीठ पर किसी पहलवान ने बहुत जोर का प्रहार किया और मैं विपरीत दिशा में उछलता चला गया।

इस आकस्मिक प्रहार से मैं क्राउलिंग करता हुआ कम से कम २० फिट की दूरी पर जाकर गिरा। लेकिन मुझे कहीं कोई गहरी चोट नहीं लगी।

लुढ़कना बन्द होने के बाद मैं अपने कपड़े झाड़ता हुआ उठ खड़ा हुआ और ब्रीफकेस उठाकर घर की ओर चल पड़ा।

उस समय मुझे यह पता नहीं चला कि मेरा घुटना एक पत्थर से टकरा गया है और उस घुटने से खून का रिसाव हो रहा है। जब मैं घर पहुँचा, तो मेरी पत्नी ने मुझे टोका कि यह खून कैसा है।

सारी बातें सुनकर पत्नी की घबराहट कहीं बहुत अधिक न बढ़ जाए, यह सोचकर मैंने उन्हें सिर्फ इतना बताया कि अँधेरे में मैं एक पत्थर से टकरा गया था। ....और कोई विशेष बात नहीं है।

आज भी मुझे जब इस घटना की याद आती है, तो मैं सिहर उठता हूँ और गुरुवर की उस अनुकंपा के स्मरण से मेरा रोम-रोम पुलकित हो उठता है।

**प्रस्तुतिः जटा शंकर झा**
**राँची (झारखंड)**

## अणुशक्ति से भी प्रचण्ड प्रभावी है विचार शक्ति

विचार एक प्रचण्ड शक्ति है और वह भी असीम, अमर्यादित अणु-शक्ति से भी प्रबल। विचार जब घनीभूत होकर संकल्प का रूप धारण कर लेता है, तो प्रकृति स्वयं अपने नियमों का व्यतिरेक करके भी उसको मार्ग दे देती है। इतना ही नहीं, वह उसके अनुकूल बन जाती है। मनुष्य जिस तरह के विचारों को प्रश्रय देता है, उसके आदर्श, हाव-भाव, रहन-सहन ही नहीं, शरीर में तेज, मुद्रा आदि भी वैसे ही बन जाते हैं। जहाँ सद्विचार की प्रचुरता होगी, वहाँ वैसा ही वातावरण बन जायेगा। ऋषियों के अहिंसा, सत्य, प्रेम, न्याय के विचारों से प्रभावित क्षेत्र में हिंसक पशु भी अपनी हिंसा छोड़कर अहिंसक पशुओं के साथ विचरण करते रहते हैं।

# दलदल से निकाल कर दिखाई थी राह

सन् १९७१ई. में मैंने गायत्री महामंत्र की दीक्षा तो ले ली, पर दीक्षा के समय परम पूज्य गुरुदेव के दर्शन नहीं हो सके। उन दिनों वे हिमालय प्रवास में थे। अगले साल हिमालय से वापस आने के बाद उनके दर्शन का सौभाग्य मिला।

दीक्षा के पाँच वर्षों बाद एक बार फिर शांतिकुंज पहुँचा, एक विशेष साधना सत्र में शामिल होने के लिए। सत्र शुरू होने के पहले जब मैं गुरुदेव को प्रणाम करने गया तो देखा कि पंक्ति में पहले से ही काफी लोग खड़े थे। मैं सोचने लगा कि ऐसी परिस्थिति में कुछ व्यक्तिगत बातें करना चाहूँ, तो कैसे करूँ।

जब मैं पूज्य गुरुदेव के सम्मुख पहुँचा तो मुझे एक नजर देखकर ही मेरी मनःस्थिति समझ गए। स्नेहिल स्वर में पूछा–अकेले में बात करना चाहते हो? मैंने सिर हिलाते हुए हामी भरी।

उन्होंने कहा–तुम मुझसे अकेले में मिलकर जो कुछ कहना चाहते हो वह सब मैं सुन चुका हूँ। चिन्ता मत करो। तुम्हारा काम हो जायेगा। पर क्या तुम मेरा काम करोगे?

खुशी के मारे मैं कुछ बोल नहीं सका। मैंने उसी क्षण मन ही मन संकल्प लिया कि पूज्य गुरुदेव की आज्ञा का पालन जीवन भर करता रहूँगा। तभी से मिशन का काम कर रहा हूँ।

बात सन् १९८१ ई. की है। सुपौल से लगभग ७-८ कि.मी. की दूरी पर एक गाँव है- गोरामानसिंह। वहाँ के मुखिया ने गायत्री महायज्ञ के आयोजन का आग्रह किया था। मेरे घर पर जब महायज्ञ के लिए दिन, समय आदि तय हो रहा था, तो मैंने रास्ते के बारे में पूछा।

आसपास के गाँव में यज्ञ कराने मैं प्रायः साइकिल से जाया करता था, इसलिए यह भी जानना चाहा कि बीच में कोई नदी तो नहीं है। लेकिन उनका ध्यान इस तरफ लगा हुआ था कि यज्ञ में कैसे क्या तैयारियाँ करनी होंगी, इसलिए नदी की बात उनके ध्यान से उतर गई। मैं भी बातचीत के प्रवाह में नदी के बारे में दुबारा पूछना भूल गया और मुखिया जी कार्यक्रम तय करके वापस चले गए।

मैं निर्धारित तिथि के एक दिन पूर्व घर से चला। पर रास्ते में ही शाम हो गई। सूर्यास्त के बाद आवाजाही कुछ कम पड़ने लगी। शाम के कुछ और गहरा जाने के बाद रास्ता सुनसान पड़ गया।

आगे की बस्ती में कच्ची सड़क के किनारे कुछ लोग खड़े-खड़े आपस में बातचीत कर रहे थे। उन्होंने मुझे रोककर पूछा–कहाँ तक जाना है पंडित जी? मैंने कहा–गोरामानसिंह।

गाँव का नाम सुनते ही उनमें से एक बोल पड़ा–पंडित जी, गोरामानसिंह तो यहाँ से बहुत दूर है। आगे का इलाका भी ठीक नहीं है। रास्ते में कहीं लूट-पाट, छीना-झपटी करने वालों से सामना हो जाए, तो क्या करेंगे? अच्छा यही होगा कि

आप हमारे यहाँ ही रात्रि विश्राम कर लें। पर मुझे तो पूज्य गुरुदेव के काम से जाना था, उन सबको समझा बुझाकर, धन्यवाद देकर आगे बढ़ चला।

आगे चलकर एक गाँव मिला-रजवा। वहाँ पहुँचकर देखा सामने एक बड़ी-सी नदी है। नदी के किनारे पहुँचकर देखा एक नाव लगी है।

मैंने इधर-उधर नजर दौड़ाई। दाहिनी ओर थोड़ी ही दूरी पर घुटने भर की धोती पहने एक ग्रामीण खड़ा था। मैंने पास जाकर पूछा-यह नाव किसकी है?

उसने कहा-नाव तो मेरी ही है। कहिए, क्या बात है?

मैं बोला-भैया, मुझे गोरामानसिंह जाना है। क्या आप मुझे नदी के उस पार पहुँचा देंगे? उसने लापरवाही से जवाब दिया-इतने कम पानी में नाव नहीं चल पाएगी, उतरकर पार होना पड़ेगा। मैं गुरुदेव का नाम लेकर साइकिल के साथ ही नदी में उतर गया। पानी कमर से कुछ ही ऊपर तक था, लेकिन फिर भी साइकिल आगे बढ़ाने के लिए काफी जोर लगाना पड़ रहा था।

अभी नदी का चौथाई हिस्सा ही पार कर सका था कि एक-एक कर मेरे दोनों पैर दलदल में जा धँसे। बाहर निकलने के लिए जितना ही जोर लगाता था, उतना ही अन्दर धँसता चला जा रहा था। जब जाँघ तक का हिस्सा कीचड़ में धँस गया तो मेरी हिम्मत जवाब देने लगी। भयाक्रान्त मन भी यह मान चुका था कि अब किसी भी पल मेरी जीवन लीला समाप्त हो सकती है।

व्यक्ति को अपने जीवन के अन्तिम क्षण में किस प्रकार की अनुभूति होती है, इसका आभास मुझे उन पलों में होने लग गया था। सारे शरीर में जैसे बिजली सी कौंध गई थी। पिछला पूरा जीवन एकबारगी आँखों के आगे नाच उठा। कितने सारे काम पड़े हैं- मेरे मर जाने के बाद उन छोटे-छोटे बच्चों का क्या होगा?

हताशा के इस दौर में पूज्य गुरुदेव की बात याद आयी। उन्होंने कहा था कि वे हमेशा हमारे आगे पीछे रहेंगे, विपत्तियों से हमारी रक्षा करेंगे। दूसरे पल मन में यह विचार उठा कि संत स्वभाव के हैं, इसलिए दिलासा दे दिया होगा। अब इतनी दूर वे बचाव के लिए कैसे आ सकते हैं?

कीचड़ अब कमर से ऊपर आ चुका था। तभी दो लोग दूर से आते दिखाई पड़े। उनमें से एक ने ऊँची आवाज में पूछा-सुनो भाई, क्या तुम किसी खतरे में पड़े हो? मैंने जोर-जोर से हाथ हिलाते हुए कहा-जी हाँ भाईसाहब! मैं भयानक दलदल में फँस गया हूँ। कृपा करके मुझे बचा लीजिए।

मेरी बात सुनकर वह अपने साथी को पीछे छोड़कर तेजी से दौड़ पड़ा। पास पहुँचकर उसने एक हाथ से लगभग पूरी तरह से डूब चुकी साइकिल थामी और दूसरे हाथ से मुझे एक ही झटके में कीचड़ से बाहर निकालकर किनारे की ओर बढ़ चला।

ऊपर से दुबले-पतले दिखने वाले उस आदमी की अन्दरूनी ताकत देखकर मैं मन ही मन उसकी प्रशंसा कर रहा था। किनारे पर पहुँचकर मैंने उसे हृदय से

धन्यवाद दिया। थोड़ी देर बाद मेरे सहज होने पर उसने पूछा-कहाँ से आए हैं...कहाँ जाना है...क्या काम है... ?

मैंने उसे बताया कि मुझे गोरामानसिंह के मुखिया जी के यहाँ यज्ञ कराने जाना है। उसने कहा-चलिए, मैं आपको वहाँ तक छोड़ देता हूँ।

वह अपने मित्र के साथ आगे-आगे चल रहा था। उनके पीछे-पीछे चलते हुए मैंने जिज्ञासावश जब उनका परिचय पूछा तो मेरी जीवन रक्षा करने वाले ने अपना और अपने गाँव का नाम बताकर कहा कि उसका गाँव गोरामानसिंह के पास ही है। रास्ते भर इधर-उधर की बातें करते हुए आखिरकार हम लोग गोरामानसिंह पहुँच गए। एक बड़े से मकान के पास पहुँचकर वे दोनों रुके और उँगली से इशारा करते हुए कहा, यही मुखिया जी का घर है। अब आप हमें आज्ञा दीजिए। कृतज्ञता के भाव से भरकर मैंने हाथ जोड़ते हुए कहा-आपका यह उपकार मैं कभी नहीं भूलूँगा। आप दोनों कल के यज्ञ में आएँगे, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। उन्होंने सहमति सूचक मुद्रा में गर्दन हिलाई और आगे बढ़ चले।

मैं मुखिया जी के घर की ओर बढ़ा। मुखिया जी अपने दालान पर बैठे मेरी ही राह देख रहे थे। मुझे देखते ही उन्होंने उठकर मेरा स्वागत करते हुए कहा-मैं शाम से ही आपकी राह देख रहा था। रास्ते में कहीं कोई दिक्कत तो नहीं हुई ? उनका इतना पूछना भर था कि मैं बोल पड़ा-मैं तो आज मरते-मरते बचा हूँ मुखिया जी।

मुखिया जी ने अचकचाकर पूछा-क्यों क्या हुआ ? मैंने भयानक दलदल से उबरने का अपना सारा वृत्तान्त एक ही साँस में कह सुनाया। मुझे बचाने वाले उस व्यक्ति का तथा उसके गाँव का नाम सुनकर मुखिया जी चौंक पड़े।

उन्होंने कहा-यहाँ न तो इस नाम का कोई गाँव ही है और न आसपास के गाँव में ऐसा कोई आदमी। मुखिया जी को इस बात पर भी घोर आश्चर्य हो रहा था कि उस व्यक्ति से मेरी सारी बातचीत हिन्दी में होती रही। जब मुखिया जी ने मुझे यह बताया कि आसपास के किसी भी गाँव में एक भी व्यक्ति खड़ी बोली का जानकार नहीं है, तो मेरे भी आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा।

सोचने की मुद्रा में मेरी आखें बन्द हो गईं। मुझे लगा कि सामने परम पूज्य गुरुदेव खड़े हैं। मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कह रहे हैं-तुम जहाँ भी जाते हो मैं तुम्हारे आगे-पीछे मौजूद रहता हूँ। आगे से अनजान राहों पर कुसमय में मत चला करना। भाव लोक में विचरण करते हुए गुरुदेव की इस प्यार भरी झिड़की से मेरी आँखें नम होती चली गईं।

**प्रस्तुतिः चन्द किशोर सिंह**
**आरा बगीचा, मुंगेर ( बिहार )**

# संजीवनी साधना से मिला जीवनदान

घटना अगस्त १९९७ की है। पटना जिले के ग्रामीण क्षेत्र के लगभग ६५ भाई बहनों के साथ शांतिकुञ्ज हरिद्वार ९ दिवसीय साधना सत्र में भाग लेने के लिए आया था। सत्र बहुत ही अच्छे तरीके से सम्पन्न हुआ। जब हम पटना वापस जा रहे थे तो मेरे पेट में हल्का दर्द महसूस हुआ। प्रातः घर पहुँचा। उसी दिन शाम को असहनीय दर्द होने लगा, जिसके कारण मैं बेहोश हो गया था। घर के लोग परेशान हो गए। पिताजी ने तुरन्त डॉक्टर को बुलवाया, लेकिन तब तक मुझे होश आ गया था। परीक्षण के उपरान्त पता चला कि हमें अपेण्डिसाइटिस है। डॉक्टर ने दवा दी। उस दवा से दर्द कुछ कम हुआ।

दूसरे दिन पटना के प्रख्यात सर्जन डॉ० बसन्त कुमार सिंह को उनके लक्ष्मी नर्सिंग होम, राजापुर में जाकर दिखाया। उन्होंने भी कहा कि अपेण्डिसाइटिस है। फिर मेरा अल्ट्रासाउंड कराया गया। रिपोर्ट देखकर ऑपरेशन की सलाह दी गई। इस दौरान पेट का दर्द समाप्त हो चुका था। केवल पेट में भारीपन अनुभव हो रहा था। लक्ष्मी नर्सिंग होम में मेरा ऑपरेशन हुआ था। जिस कमरे में मैं रह रहा था उसमें मैंने रैक पर प० पूज्य गुरुदेव, वंदनीया माताजी एवं गायत्री माँ के चित्र को लगा रखे थे। मैं ऑपरेशन थियेटर में जाते समय गुरुजी एवं माताजी से अपने स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करके गया था। ऑपरेशन के उपरान्त होश आने पर डॉ० साहब मुझसे मिलने आए। कमरे में प्रवेश करते ही उन्होंने कहा कि आप बड़े भाग्यशाली हैं; आपका अपेण्डिक्स दो दिन पहले फट गया था, लेकिन एक झिल्ली उसके जहरीले मवाद को आपके पेट में फैलने से रोके हुए थी। इस कारण आप बच गए।

मैंने गुरुदेव के चित्र की ओर देखा। मुँह से निकला- सब इन्हीं का कमाल है। लगता है अभी और कुछ काम कराना चाहते हैं मुझसे। डॉक्टर ने जानना चाहा- कौन हैं ये? मैंने गुरुदेव और गायत्री परिवार के बारे में संक्षेप में बताया। शांतिकुञ्ज के संजीवनी साधना सत्र के विषय में भी बताया। मुझे ऐसा महसूस हो रहा था कि गुरुदेव ने इसीलिए इस समय मुझसे संजीवनी साधना करवाई। यह बात भी मैंने डॉ० साहब को बताई। इसके बाद १० दिन अस्पताल में और रहना हुआ। इस दौरान वहाँ के सभी लोग आत्मीय बंधु हो गए। इस प्रकार मेरी इस बीमारी के जरिए डॉ० बसन्त कुमार सिंह जैसे परिजन गायत्री परिवार से जुड़े।

**प्रस्तुति : दिनकर सिंह**
**चाँदपुर बेला, पटना ( बिहार )**

# कलियुग के सूर को मिले भगवान

तब मेरी उम्र करीब ७ वर्ष की रही होगी। मेरी आँखों में बहुत दर्द शुरू हुआ, इसी दौरान मेरी आँखों की रोशनी बिल्कुल जाती रही और कुछ ही दिनों में मेरे लिए यह दुनिया पूरी तरह अँधेरी हो गई। बचपन से ही शिक्षा के प्रति मेरा रुझान था। माँ सरस्वती की कृपा से मेरे विद्याध्ययन में रोशनी का अभाव कभी बाधक नहीं बना। शिक्षा प्राप्ति के बाद मैं शासकीय माधव संगीत महाविद्यालय ग्वालियर में लेक्चरर नियुक्त हो गया। वहाँ मैं संगीत की क्लास लेता था। क्लास शाम ५ बजे से ८ बजे तक लगती थी।

अगस्त सन् ७८ की बात है। गर्मी का समय था, पर बारिश के कारण मौसम ठण्डा हो चला था। शाम की ठण्डी-ठण्डी हवा और गुनगुनी धूप से तीसरी मंजिल का वह कमरा काफी आरामदायक लग रहा था। थोड़ी देर में बच्चे आ गए। कक्षा आरंभ हुई। अभी ५ मिनट ही हुए होंगे कि सभी लड़कियाँ एकदम से चुप हो गईं। पूरे क्लास में अचानक सन्नाटा छा जाने पर मैंने पूछा क्या हुआ? चुप क्यों हो गईं? पर किसी ने कोई जवाब नहीं दिया। मेरे दुबारा पूछने पर उनमें से एक लड़की ने कहा- सर "उत्तर दिशा की ओर से दो फूल उड़ते हुए चले आ रहे हैं।" मैंने सोचा इसमें देखने की क्या बात है? कोई बड़ा सा पेड़ होगा, उसी पेड़ के फूल टूट कर गिर रहे होंगे। मैंने उनसे कहा भी कि हवा चल ही रही है, जिससे फूल गिर कर उड़ रहे होंगे।

मेरी इन बातों का लड़कियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उनमें से एक लड़की ने कहा कि नहीं सर वे फूल भागते हुए बम के गोले की तरह से इधर ही चले आ रहे हैं। मैंने सोचा कि मुझे दिखाई नहीं पड़ रहा है इसलिए ये लड़कियाँ मुझे बेवकूफ बना रही हैं। उनमें से एक गंभीर लड़की 'कल्पना' ने कहा- हाँ सर सचमुच फूल आ रहे हैं। इतने में फूल अन्दर आकर मेरी गोद में गिर पड़े। मैंने उन फूलों को उठाकर अपनी जेब में रख लिया। कक्षा समाप्त होने के पश्चात् भोजन किया और बिस्तर पर चला गया। तब तक मैं उन फूलों की बात बिल्कुल भूल चुका था। मैं सोने की कोशिश कर रहा था। अचानक मेरी ऐसी इच्छा हुई कि मैं हरिद्वार जाऊँ और गंगा स्नान कर आऊँ। ये बातें उस समय की है जब मैं गुरुदेव एवं मिशन के बारे में कुछ नहीं जानता था। गायत्री मन्त्र का नाम तक नहीं सुना था।

मैंने तीन-चार दिन की छुट्टी ली और हरिद्वार के लिए रवाना हुआ। रात के तीन बज रहे थे। हरिद्वार स्टेशन पहुँच गया। मेरे एक हाथ में अटैची और एक हाथ में डंडा था। मैं डंडे के सहारे स्टेशन के बाहर आया तो एक ऑटो वाला मिला और बोला- भाई साहब शान्तिकुञ्ज चलिए, वहाँ रहने और खाने पीने की व्यवस्था हो जाएगी। मैंने सोचा यह मुझे बेवकूफ बना रहा है। मैंने कहा- मुझे शान्तिकुञ्ज नहीं जाना है। मुझे गंगा स्नान करके ग्वालियर वापस जाना है। मैं जैसे-जैसे मना करता, ऑटो वाला उतना ही पीछे पड़ता गया। अन्ततः मैंने ढाई रुपये किराया तय कर लिया

और शान्तिकुञ्ज पहुँच गये। वहाँ पहुँचकर स्नान-भोजन वगैरह करके विश्राम करने लगा। पहले दिन सफर की थकावट थी इसलिए शाम को जल्दी ही सो गया।

रात को ११ बजे मेरी नींद खुल गई, तो उठकर नहा-धोकर रात १२ बजे ही मैं माला लेकर बैठ गया। उस समय मैं शिव भक्त था। शिव ज़ी के मंत्र के अतिरिक्त मुझे दूसरा कोई मंत्र नहीं आता था। लेकिन मैं जब मंत्र जप करने बैठा तो यह क्या! शिव मंत्र की जगह पर मेरे मुँह से 'ॐ भूः, ॐ भूः, ॐ भूः' निकलने लगा। सवेरे ६ बजे तक माला जपता रहा पर ग्यारह माला ही कर सका! मैंने सोचा- हे भगवान, यह क्या? छः घण्टे में मैं ११ माला ही कैसे कर पाया; जबकि सैकड़ों माला हो जाना चाहिए। दोपहर को भोजन विश्राम के बाद लोगों ने मुझसे कहा कि चलो गुरुजी के प्रवचन में। उस समय गुरुजी के महत्व के बारे में जानता भी नहीं था। सभी लोग जा रहे थे अतः मैं भी चला गया। प्रवचन के दौरान गुरुजी ने टेबल पर अपने हाथ को पटक कर जोर से कहा, ११ माला से क्या होता है, नाश्ता भी नहीं होता। यह बात उन्होंने तीन बार कहीं। मुझे आश्चर्य हो रहा था। कहीं ये शब्द मेरे लिए तो नहीं! लेकिन इन्हें कैसे पता चला! प्रवचन समाप्त होने के बाद भी मैं सोचता रहा। याद आया कोई एक भाई कह रहे थे- गुरुजी महाकाल के अवतार हैं। यहाँ कोई अपनी मर्जी से नहीं आता। जिसे वे बुलाते हैं, वही आता है। मेरे रोम-रोम ने इसकी सच्चाई को स्वीकारा। याद आई वो फूलों वाली घटना, फिर अचानक हरिद्वार आना, स्टेशन पर ऑटो वाले की जिद। मैं अन्तर तक रोमाञ्चित हो उठा।

तीन दिन किस तरह बीत गए, कुछ पता ही नहीं चला। अनमने भाव से मैं वापस भी आ गया। फिर पहले की तरह संगीत की कक्षा लेने लगा। लेकिन सब कुछ पहले जैसा नहीं हुआ। ऐसा लगता जैसे कुछ महत्वपूर्ण चीज छूट गई हो। इसके बाद कई बार शांतिकुञ्ज आया। गुरुदेव और माताजी का स्नेह पाकर मुझे लगता था जैसे जन्म-जन्म के माता पिता मिल गए हों। पर एक प्रश्न हमेशा साथ लगा रहा- गुरुदेव ने मुझे प्रयत्नपूर्वक बुलाया तो आखिर क्यों? इसका जवाब सन् १९८४ में मिला।

मैं नौ दिवसीय संजीवनी साधना सत्र करने शान्तिकुञ्ज आया था। इसी दौरान एक दिन मुझे साँप ने काट लिया, मेरा पैर खूब फूल गया, चलना-फिरना मुश्किल हो गया। ऐसा लग रहा था जैसे चारों ओर अँधेरा छाता जा रहा हो। धीरे-धीरे चेतना लुप्त होती चली गई। साथियों से पता-चला कि मेरे बेहोश होने के बाद डॉक्टर ने होश में लाने के लिए इंजेक्शन दिया था। जब पर्याप्त समय बीत जाने के बाद भी होश नहीं आया तो घबराकर लोगों ने गुरुदेव को जाकर बताया। साथ में डॉक्टर भी थे। गुरुदेव ने डॉक्टरों से कहा- अभी उठ जाएगा। उसे एक इंजेक्शन और लगाओ। और वास्तव में दूसरे इंजेक्शन से मुझे होश आ गया। अब मैं समझा मुझे अपने पास बुलाने का उनका यही उद्देश्य था कि मुझे असमय मृत्यु के हाथ से बचाया जाए; और आगे का मेरा जीवन युग निर्माण के कार्य में लग सके। उनकी असीम कृपा को नमस्कार करता हूँ।

**प्रस्तुति : देवीदयाल वैश्य**
**ग्वालियर ( मध्यप्रदेश )**

# तबादला स्थगित हुआ

सन् १९६५ से मैं अखण्ड ज्योति का सदस्य बना। इसके पश्चात् अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा से पहली बार परम पूज्य गुरुदेव के हाथ का लिखा पत्र मिला, जिसमें गुरुदेव ने "मेरे आत्मस्वरूप" करके सम्बोधन किया था। इस पत्र में इतना अपनापन का भाव था कि मन भीग गया और १८ जून १९७१ को मथुरा में गुरुदेव से दीक्षा ले ली। घटना १९७५ की है। मैं रेलवे में सर्विस कर रहा था। मेरी पोस्टिंग लुधियाना में थी। मैं मेकनिक सिग्नल इन्सपेक्टर के पद पर कार्य कर रहा था। इस सर्विस में तबादला हमेशा ही होता रहता है। इसी क्रम में मेरा तबादला कानपुर में हुआ, जहाँ आधुनिक पावर सिग्नलिंग का काम शुरू करना था। इसके लिए मैं सक्षम नहीं था। इस कार्य का मुझे कोई अनुभव नहीं था। मन बहुत डर रहा था। कहीं कोई गड़बड़ी हो तो नौकरी ही चली जाएगी। मैंने तबादला रुकवाने के लिए काफी प्रयास किया, लेकिन सारे प्रयास बेकार सिद्ध हुए। इसी बीच शान्तिकुञ्ज से जीवन साधना शिविर में सम्मिलित होने के लिए स्वीकृति पत्र मिला, जिसके लिए मैंने पहले ही आवेदन दे रखा था। पत्र मिलते ही निश्चित समय पर शिविर में शामिल होने के लिए मैं शान्तिकुञ्ज पहुँचा।

शिविर शुरू हो गया था। मैं नियमित दिनचर्या में सम्मिलित होता था। उन दिनों गुरुदेव दोपहर में स्वयं सभी परिजनों से मिलते थे। मैं भी गुरुदेव के पास पहुँचा। कमरे में प्रवेश करते ही गुरुदेव ने बुलाकर पास बिठाया और हाल समाचार पूछे। तबादले को लेकर मेरी दुश्चिन्ता उनसे छिपी नहीं रही। शायद उस समय भी मेरे मुख पर चिन्ता के भाव थे। मैंने स्वयं अपनी समस्या के बारे में नहीं बताया। गुरुदेव ने कहा- बेटा "तुम कुछ चिन्तित दिखते हो, क्या बात है?" मैंने बात टालने की कोशिश की। लेकिन गुरुदेव के बार-बार पूछने पर मैंने बताया कि गुरुदेव! मेरा तबादला कानपुर में हो रहा है। नई सिग्नलिंग पूरी तरह इलेक्ट्रिकल है और सुरक्षा की दृष्टि से महत्वपूर्ण भी। इस कार्य को करने का कोई अनुभव भी मेरे पास नहीं है। मेरी बातों को सुनकर गुरुदेव मुस्कुराए और बड़े ही सहज भाव से बोले कि "यदि तुम वहाँ नहीं जाना चाहते हो, तो नहीं जाओगे। चिन्ता न करो। तुम शिविर करने आए हो, उसे मन लगाकर करो।"

शिविर समाप्त कर जब लुधियाना पहुँचा तो देखा, वहाँ तबादले को लेकर काफी चर्चा छिड़ी हुई थी। मेरे ऑफिस पहुँचते ही साथियों ने सूचना दी कि आपका तबादला स्थगित हो गया है। मुझे विश्वास नहीं हुआ। फिर साथियों ने कहा कि स्वयं चीफ सिग्नल इंजीनियर ने तबादले की लिस्ट मँगाकर आपका नाम काट दिया है। ये शब्द सुनते ही मुझे गुरुदेव का सहज भाव से दिया गया आश्वासन याद आया तभी मैंने जाना कि सरकारी मशीनरी भी उनकी इच्छा के ही अधीन है।

**प्रस्तुति : अनिरुद्ध प्र. श्रीवास्तव, लखनऊ (उ.प्र.)**

# महाकाल ने सुनी माता की उलाहना

मुझे शादी के सात वर्षों के बाद चार वर्ष के अंतराल पर दो बेटियाँ बड़े ऑपरेशन से हुई थीं और सामाजिक संरचना को देखते हुए मेरी पत्नी एक पुत्र की चाहत में काफी चिंतित रहती थी; क्योंकि उस समय मान्यता थी कि ऑपरेशन के द्वारा तीन बच्चे ही हो सकते हैं। इसलिये मेरी पत्नी सोच में डूबी रहती थी कि अब तो अंतिम चांस है। पता नहीं मुझे पुत्ररत्न की प्राप्ति होगी भी या नहीं। उन्हीं दिनों वह गर्भवती हुई; और इसी दौरान उन्होंने नवंबर १९८९ में षष्ठी व्रत रखा था। षष्ठी व्रत के दूसरे दिन रात्रि में स्वप्न देखती हैं कि बिल्कुल सादे लिबास में एक बूढ़ी औरत कह रही हैं कि तुम चिंतित मत होओ, तुम्हें पुत्र की प्राप्ति होगी। एक दो महीने के बाद ही उसे मलेरिया बुखार हो गया। स्थानीय डॉक्टर और हाजीपुर की डॉ० सुचिता चौधरी (स्त्री रोग एवं प्रसूति विशेषज्ञ) ने कहा कि मलेरिया की दवा देने पर गर्भपात होने की प्रबल संभावना है; और अगर ऐसा नहीं होगा तो भी बच्चा विकलांग पैदा होगा। ऐसा सुनते ही मैं पत्नी को लेकर डॉ० सुभद्रा (स्त्री रोग विशेषज्ञ) के यहाँ पटना गया। वहाँ भी वही बात कही गई; परन्तु उन्होंने कहा कि पहले मरीज की जान बचाइए, बाद में बच्चे के लिए प्रयास किया जाएगा। उन्होंने जो दवा दी, उसे हमलोगों ने एक दिन तक उसे नहीं दिया, क्योंकि दवा से होने वाले बच्चे को खतरा है, यह जानने के बाद हमें हिम्मत नहीं हो रही थी कि दवा पिला दूँ। एक दिन तक हमने दवा रोके रखी। मगर रोगी को ठीक होने के लिए दवा तो लेनी ही होगी। दूसरे दिन रात्रि में गुरुजी-माताजी पर ध्यान लगाकर मैंने उसे दवा खिला दी। वह धीरे-धीरे स्वस्थ हो गई।

समय पूरा होने पर ८ अप्रैल १९९० को पटना की सुप्रसिद्ध चिकित्सक मंजू गीता मिश्रा के यहाँ ऑपरेशन से पुत्र का जन्म हुआ। बच्चा विकलांग तो नहीं हुआ लेकिन बहुत कमजोर था, जिसका वजन मात्र १.६ किलोग्राम ही था। बच्चे को पटना चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल (पी एम सी एच) के शिशु रोग विशेषज्ञ डॉ० अरुण ठाकुर की देख-रेख में प्रेमतारा नर्सिंग होम में इलाज हेतु भर्ती कराया। उसके नाक के एक छिद्र में ऑक्सीजन का पाइप तथा दूसरे छिद्र में ग्लुकोन-डी देने के लिये पाइप लगा दिया गया। दिन रात देखने वालों का ताँता लगा रहता था। लोग आश्चर्यचकित थे कि इतना छोटा और कमजोर बच्चा जीवित कैसे है। चार-पाँच दिन बीतने के बाद बच्चे को कै (उल्टी) हुई और बच्चे का पूरा शरीर नीला पड़ गया। डॉक्टर ने नर्स को सलाह दी कि उल्टी से पूरी गंदगी निकल नहीं पाई है, उसे मशीन से बाहर निकाल दीजिए। वैसे भी अब मेरे वश में नहीं रह गया इस बच्चे को बचाना। इस बच्चे को अब भगवान ही बचा सकते हैं। इतना सुनते ही मेरी बहन बहुत घबरा गई और दौड़ी-दौड़ी अपनी भाभी के पास गई और उन्हें सब कुछ बता दिया। वह

अभी नर्सिंग होम में स्वयं ही नाजुक स्थिति में थी। डॉक्टरों ने सख्त हिदायत दे रखी थी कि उसे किसी प्रकार का सदमा न पहुँचे। बच्चे की स्थिति के बारे में सुनते ही उसने उसी अवस्था में अपने कलेजे में मुक्का मारकर बेड से छलांग लगा दी और गुरुदेव को कोसने लगी। वह बोली-हे गुरुदेव, जब मुझसे मेरा बच्चा छीन ही लेना था तो बेटा दिया ही क्यों?

इसके तुरंत बाद बच्चे का शरीर नीला से सामान्य होने लगा और बच्चे में एक विशेष स्फूर्ति पैदा हो गई। इसके बाद वह बच्चा अपने नाक का पाइप बार-बार पकड़कर बाहर निकाल देता था। डॉक्टर का कहना था- बच्चे को कम से कम तीन महीने उस शीशे के बॉक्स में रखना पड़ेगा। बच्चे की स्थिति को देखकर मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि गुरुजी की कृपा से बच्चा अब पूर्ण स्वस्थ हो चुका है। जो बच्चा कुछ ही देर पहले बिल्कुल निस्तेज-निर्जीव-सा पड़ा था वह अपने हाथ से पाइप पकड़कर बाहर निकाल दे- यह अनहोनी गुरु कृपा से ही संभव थी। मैं पूरे आत्मविश्वास के साथ जिम्मेवारी लेते हुए बच्चे को घर ले आया। डॉक्टर ने कहा था- ऐसा करना खतरे से खाली नहीं होगा। पर मुझे ऐसा लगा कि जबरन नाक में पाइप लगाए रखना ही खतरनाक होगा; इसलिए डॉक्टर के नाराज होने पर भी मैं उसे घर ले आया। आज वह बिल्कुल स्वस्थ है।

**प्रस्तुतिः- वीरेन्द्र कुमार सिंह**
**वैशाली (बिहार)**

## दृढ़ इच्छा शक्ति

एक राजा जब लड़ाई में १३ बार हार गया और शत्रु के सिपाही उसका पीछा कर रहे थे तब वह अपनी जान बचाए एक खोह में छिपा बैठा था। सब साधन नष्ट हो जाने से उसे निराशा घेरने लगी थी और भविष्य अंधकारमय दीखता था। इतने में उसने सामने की दीवार पर देखा कि एक मकड़ी बार-बार जाला तानती है और वह बार-बार टूट जाता है। फिर भी मकड़ी निराश नहीं होती और हर असफलता के बाद उसी हिम्मत के साथ फिर अपने काम में जुट जाती है। तेरह बार असफल होने के बाद चौदहवीं बार मकड़ी अपना टूटा तागा जोड़ने और जाला बनाने का काम आगे बढ़ाने में सफल हो गई। इस दृश्य का राजा के मन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उसने सोचा छोटी-सी कोड़ी-मकड़ी जब हिम्मत नहीं छोड़ती तो मेरे जैसे बुद्धिमान और क्षमता संपन्न मनुष्य के लिए हिम्मत छोड़ बैठना क्यों कर उचित हो सकता है? राजा ने हिम्मत समेटी और फिर लड़ाई की तैयारी में पूरे उत्साह के साथ लग गया। चौदहवीं बार उसे सफलता मिल गई। हमारे लिए यह उदाहरण मार्गदर्शक का काम दे सकता है।

**(अखंड ज्योति १९६२, जून ४५)**

# बदली हुई दृष्टि ने जीवन बदल दिया

मथुरा में १९५८ में यज्ञ का कार्यक्रम था। मेरी माँ अलीगढ़ जिले के नदरोई गाँव के आसपास की बहुत सारी महिलाओं को साथ ले जाकर प्रचार-प्रसार में जुटी थीं। मैं भोपाल में शिक्षा विभाग में मिडिल स्कूल के हेडमास्टर के पद पर कार्यरत था। यद्यपि मेरे कानों में यह बात जरूर थी कि मथुरा में एक विशाल यज्ञ का आयोजन हो रहा है, पर मैं वहाँ जाने का मन नहीं बना सका। मैंने यही सोचा था कि मथुरा में बहुत से पण्डे हैं और वे खाने कमाने के लिए कुछ न कुछ करते ही रहते हैं। यह भी कुछ ऐसा ही उपक्रम होगा, इसलिए ध्यान नहीं दिया।

जब मैं गर्मियों की छुट्टी में गाँव आया, तो मेरी माता जी ने फटकार भरे शब्दों में मुझसे कहा-यज्ञ में इतने सारे लोग दूर-दूर से आए, तुम क्यों नहीं आ सके। जब उन्होंने यज्ञ का विवरण देना शुरू किया तो सुनकर मैं पश्चात्ताप में डूबता चला गया। उसी समय मैंने यह निर्णय कर लिया कि आचार्य जी से मिलने जरूर जाऊँगा। पहले मैं अपने गाँव से भोपाल, आगरा होकर ही जाता था। इस बार बजाय आगरा के मथुरा होकर जाने का निश्चय किया। जब मैंने प्रथम बार गायत्री तपोभूमि मथुरा में आचार्यश्री के दर्शन किये, तो मैं उनके साधारण से बाह्य व्यक्तित्व के कारण प्रभावित नहीं हुआ और उनसे मिलकर भोपाल चला गया।

लेकिन उस मुलाकात के बाद से ही मन में उथल-पुथल मची रहती थी। इसी दौरान भोपाल में कुछ ऐसे व्यक्ति टकराए, जिन्होंने मुझसे पूज्य गुरुदेव के साहित्य की चर्चाएँ कीं। उसमें से एक व्यक्ति ने दो-तीन किताबें भी भेंट कीं। बस किताबों का पढ़ना था कि ठीक वैसी स्थिति बन गई, जैसी ड्रिल के समय एबाउट टर्न का आदेश होते ही किसी जवान की होती है। मेरे जीवन की पूरी दिशा ही बदल गई। फिर क्या था? तड़पन बढ़ती गई और मथुरा के चक्कर लगते गए।

मैं गुरुदेव के पास बैठा-बैठा उन वार्त्ताओं को सुनता जो वे और लोगों के साथ करते थे। इच्छा तो होती थी कि मैं भी कुछ कहूँ पर मैं कुछ कह नहीं पाता था। उनके पास जो आता, उससे पहला प्रश्न यही करते-बता तेरी कोई समस्या तो नहीं है? और वह जैसे ही अपनी समस्या सुनाता बड़ी सरलता से कह देते-हाँ बेटा, सब ठीक हो जाएगा। तब मेरा शंकालु मन सिर उठाने लगता। ये सभी फालतू की बातें हैं। ऐसा कह देने भर से कहीं समस्याएँ हल हो जाती हैं? समय बीतने के साथ ही लोगों से ये सुनने को मिलता रहा कि उनके जीवन का भारी संकट गुरुदेव की कृपा से टल गया। एक व्यक्ति ने तो यहाँ तक बताया कि जब बड़े-बड़े डॉक्टरों के कई सालों से किए जा रहे उपचार फेल हो गए तब गुरुदेव के कहने मात्र से मेरा असाध्य रोग एक ही दिन में समाप्त हो गया। मुझे पूज्य गुरुदेव ने ही यह नया जीवन दिया है। यह सब सुनकर मेरे विश्वास ने पलटा खाया, और मैं शंकाओं की धूल झाड़कर खड़ा हो गया।

बदली हुई दृष्टि के साथ १९६२ ई. में गायत्री तपोभूमि मथुरा पहुँचा। गर्मियों के दिन थे। सुबह के आठ बजने को थे। पूज्यवर का व्याख्यान शुरू होने वाला था।

श्रोताओं की संख्या बहुत नहीं थी। व्याख्यान का विषय था–अपव्यय। गुरुदेव ने कहा–अपव्यय अनेक समस्याओं की जड़ है। जब आदमी फिज़ूलखर्ची करता है, तो खर्च को पूरा करने के लिए रिश्वत लेता है, बेइमानी करता है, चोरी–ठगी करता है और इन सब के पीछे अनेक कुसंस्कार उसके जीवन में प्रवेश कर जाते हैं। उन्होंने कहा कि अपव्यय एक ओछापन है। इससे मनुष्य का व्यक्तित्व धूमिल हो जाता है। जिन्हें अपने व्यक्तित्व की जरा भी चिंता हो वे ढोंग, दिखावा और अपव्यय से बचें।

प्रवचन क्रम में उनका एक वाक्य था–लोग कमाना तो जानते हैं, पर खर्च करना नहीं जानते। परिणाम यह होता है कि वे जीवन में सुख–शांति के बजाय दुःख और दरिद्रता मोल ले लेते हैं। व्याख्यान समाप्त हो जाने के बाद भी पूज्य गुरुदेव का यह वाक्य मेरे दिमाग पर हथौड़े की तरह चोट करता रहा।

दोपहर को गुरुदेव से व्यक्तिगत भेंट करने चला। रास्ते में फिजूलखर्ची की अपनी हद से ज्यादा बिगड़ी हुई आदत पर ग्लानि से गड़ा जा रहा था। मालदार बाप का बेटा होने के कारण मैं बचपन से ही खर्चीले स्वभाव का था, ऊपर से फैशन–परस्ती का नशा। सुबह एक ड्रेस पहनता था, तो शाम को दूसरी। चार–छह टाइयों से कम में काम नहीं चलता था। शाही जीवन शैली थी। लेकिन अब मुझे लग रहा था कि पिताजी के पैसे पानी की तरह बहाकर मैंने बहुत बड़ा अपराध किया है। झुका हुआ सिर लेकर मैं गुरुदेव के पास पहुँचा। उन्हें प्रणाम किया और बिना कुछ बोले मन ही मन यह संकल्प कर लिया–"अब तक खाई सो खाई। अब की राम दुहाई" अब जीवन में कभी अपव्यय नहीं करूँगा।

नीचे उतरते ही एक किताब पढ़ने को मिल गई 'अपव्यय का ओछापन'। गुरुदेव के प्रवचन ने तो पहले से ही दिमाग में हलचल मचा रखी थी, पुस्तक पढ़ने के बाद मैंने अपव्यय पर अंकुश लगाने के लिए योजनाबद्ध तरीके से आगे बढ़ने का निश्चय किया। इस संदर्भ में पत्नी से बात की। मेरी पत्नी भी मेरे विचार से सहमत हुईं और हम मुट्ठी भर साधन में बड़ी प्रसन्नता और संतोष के साथ जीवनयापन करने लगे।

अगर आत्मश्लाघा न कहें तो मैं यह बताता हूँ कि न कोई सिनेमा न कोई होटलबाजी और न कहीं दिखावा। सब छोड़ दिया। धीरे–धीरे हमने अपने जीवन की आवश्यकताएँ इतनी सीमित कर ली थीं, उसे सामान्य दृष्टि से अविश्वसनीय ठहराया जा सकता है। लेकिन इससे हमें जो लाभ हुआ, उसका लेखा–जोखा करना कठिन है। बच्चों के शादी–ब्याह, व्यापार, धन्धा, भोपाल में आलीशान घर ये सब बिना किसी से कोई कर्ज लिए ही बन गया। यह सब अपव्यय न करने का ही परिणाम है। यदि गुरुदेव की वह धारदार प्रेरणा न रही होती, तो सांसारिक दृष्टि से इस सफलता की कल्पना भी नहीं कर सकता था।

**प्रस्तुतिः डॉ. आर.पी. कर्मयोगी**
**देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)**

# दीपयज्ञ ने दिया बेटी को जीवन दान

यह मेरे जीवन की ऐसी घटना है, जिसके स्मरण मात्र से मन ही मन सिहर उठता हूँ। किसी को शायद विश्वास हो या न हो किन्तु मैं उसे परम पूज्य गुरुदेव का प्रत्यक्ष आशीर्वाद मानता हूँ। घटना २ जुलाई १९९९ की है। उस दिन हमारे घर में दीपयज्ञ था। कार्यक्रम शाम के समय था, मगर सुबह से ही हम सभी तैयारी में लगे थे। घर बर्तन सब धोये जा रहे थे। उस समय सुबह के करीब ६ बजे होंगे। मेरी ९ साल की बेटी अणिमा दौड़-दौड़ कर माँ के काम में हाथ बँटा रही थी। किसी काम से उसकी माँ ने उसे पड़ोसी के यहाँ भेजा। घर के सामने बिजली का एक खम्भा था। उस दिन उसमें करण्ट आ रहा था। बच्ची इस बात से अनजान थी। असावधानीवश खम्भा उसे छू गया। छूते ही बच्ची करण्ट के चपेट में आ गई।

अचानक पड़ोसी ललऊ सिंह गौर और उनकी पत्नी की पुकार सुनी। वे चिल्लाकर कह रहे थे- बच्ची को करण्ट लग गया, जल्दी दौड़ो। हम जल्दी से निकल आए। देखा घर के सामने बिजली के खम्भे के साथ चिपककर वह खड़ी है। आँखें फटी की फटी रह गईं। उसे उस अर्ध मृत अवस्था में देखकर हम जल्दी से उसके पास गए। संयोग से मैंने प्लास्टिक की चप्पल पहन रखी थी। एक चप्पल निकालकर उसी के सहारे खम्भे से बच्ची को अलग किया।

तब तक मेरी धर्मपत्नी भी आ गईं। बच्ची को इस तरह अचेत अवस्था में देख वह रोने लगी। यह सब देख मैं घबरा गया। पत्नी को सँभालूँ या बच्ची को लेकर डॉक्टर के पास जाऊँ। मन में सोचा गुरुजी भी अजीब परीक्षा लेते हैं। आज शाम को घर में पूजा है और इधर यह परिस्थिति आन पड़ी। फिर अचानक न जाने कहाँ से मेरे अन्दर स्फूर्ति आई। पूरे विश्वास के साथ मैंने धर्मपत्नी से कहा 'गुरुजी को याद करो, गायत्री मंत्र का जप करो। सब अच्छा होगा।'

पत्नी को शांत कराकर मैं बच्ची के उपचार में लग गया। करण्ट लगने के जो भी उपचार होते हैं वह सब पड़ोसियों की मदद से कर रहा था। कोई प्रभाव न होता देख मेरी प्रार्थना और आकुल होती गई। करीब दस-पन्द्रह मिनट बाद उसे होश आया। वह जोर से चिल्लाई। उसे होश में आई देख जल्दी से डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ला जी के पास ले गया। वहाँ दो-तीन घण्टे के उपचार के बाद वह स्वस्थ हो गई। उसे लेकर घर वापस आया तो देखा धर्मपत्नी सब काम छोड़कर प्रार्थना में तल्लीन है। बच्ची को स्वस्थ देखकर उसने सजल नयनों से गुरुदेव का धन्यवाद किया और फिर शाम के कार्यक्रम की व्यवस्था में लग गई।

हमारे घर की नन्हीं सी वह दीया उस दिन बुझने से बच गई। इसे मैं गुरुदेव का दिया उपहार ही मानता हूँ। हमारा दीपयज्ञ वास्तव में सफल हो गया।

**प्रास्तुति :- रामसेवक पाल, रमाबाई नगर ( उ.प्र. )**

# बच्चे को मिली ऑपरेशन से मुक्ति

आज से सात साल पहले की बात है। गर्मियों के दिन थे। एक दिन मेरे बेटे कृष्ण कुमार के पेट में अचानक दर्द शुरू हुआ। रविवार होने के कारण मैं घर पर ही था। दोपहर के बारह बजे थे। कड़ी धूप थी, लेकिन उसकी हालत देखकर तुरन्त उसे साइकिल पर बिठाया और डॉक्टर के पास लेकर गया।

डॉक्टर का नाम था जी.एल. कुशवाहा। वे उस इलाके में नये-नये आए थे। इस तरह का दर्द मेरे बेटे को चार महीने पहले शुरू हो चुका था, लेकिन उसे चेकअप के लिए डॉक्टर के पास उसी दिन लेकर आया था।

मैं चाहता था कि अच्छे से चेकअप हो, लेकिन डॉक्टर ने उसे एक नजर देखकर दवा दे दी। जब बच्चा दवाई खाता तो, दर्द कम हो जाता और थोड़ी देर के बाद फिर पहले जैसी हालत हो जाती। एक महीने तक ऐसा ही चलता रहा। फिर एक दिन डॉक्टर ने कहा इसे नर्सिंग होम ले जाना पड़ेगा। वहाँ के बड़े डाक्टर इसकी जाँच करेंगे तभी रोग के बारे में कुछ पता चल पाएगा। वहाँ भी कई प्रकार की जाँच के बाद एक महीने तक इलाज चला, लेकिन बच्चे के स्वास्थ्य में किसी प्रकार का कोई सुधार नहीं हुआ।

इसके बाद डॉ. रोहित गुप्ता ने जाँच करने के बाद किसी घातक बीमारी के होने का संदेह व्यक्त किया। शंका निवारण के लिए उन्होंने इन्डोस्कोपी कराने की सलाह दी। हमने बच्चे का इन्डोस्कोपी कराया। उसकी रिपोर्ट हमें १५ दिन बाद प्राप्त हुई। लेकिन उस रिपोर्ट से भी बीमारी पकड़ में नहीं आई।

तब तक ऐसा होता रहा कि कभी बच्चे के पेट में दर्द हो जाता कभी सिर में। लगातार की इस पीड़ा से वह सूखकर कंकाल बनता जा रहा था और इधर हम बच्चे का दर्द देखकर बहुत परेशान हो रहे थे। अब तक बच्चे के इलाज में इतने रुपये खर्च हो चुके थे कि मेरी आर्थिक स्थिति बुरी तरह से खराब हो चुकी थी। मैं अन्दर से टूटता जा रहा था। इसी तरह से ढाई महीने और बीत गए; लेकिन बच्चे के स्वास्थ्य में कोई परिवर्त्तन नहीं आया।

तभी मुझे एक दिन 'गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार' नामक पुस्तक मिली। उस पुस्तक में ऐसे बहुत से लोगों का उल्लेख था, जिन्होंने पूज्य गुरुदेव के अजस्र अनुदान पाए थे। इसे पढ़कर मैंने सोचा कि इतने सारे लोगों को गायत्री मंत्र के अनुष्ठान से आश्चर्यजनक रूप से लाभ हुआ है, तो शायद इसका अनुष्ठान करने से माँ गायत्री थोड़ी कृपा हम पर भी कर दें।

यह सोचकर मैंने निश्चय किया कि मैं एक महीने का गायत्री मंत्र का अनुष्ठान करूँगा। अगले ही दिन मैंने संकल्प लेकर अनुष्ठान प्रारम्भ कर दिया। अनुष्ठान अभी चल ही रहा था कि एक दिन डॉक्टर ने मुझे बुलाकर कहा-बच्चे का स्वास्थ्य थोड़ा बहुत ठीक होने लगा है। एक और जाँच करनी पड़ेगी। जाँच से पता

चला कि उसकी आँत में एक छोटा-सा छेद हो गया है, जो इलाज से ठीक किया जा सकता है। डॉक्टर की बातें सुनकर मेरा हौसला बढ़ा। मेरे मन में प्रेरणा जगी कि मैं अपने बच्चे को एक बार शान्तिकुञ्ज ले जाऊँ। वहाँ जाते ही मेरा बच्चा बिल्कुल ठीक हो जाएगा।

मैं बच्चे को लेकर शान्तिकुञ्ज के लिए चल पड़ा। लेकिन वहाँ पहुँचते-पहुँचते बच्चे की तबियत बहुत ज्यादा खराब हो गए। तुरन्त डॉक्टर को दिखाया गया। डॉक्टर ने कहा तुरन्त ऑपरेशन करना पड़ेगा। आप कल सुबह ठीक ९.३० बजे बच्चे को ऑपरेशन के लिए ले आइए।

हम रात में शान्तिकुञ्ज में ही रुके। देर रात तक मैं पूज्य गुरुदेव की समाधि पर रो-रोकर प्रार्थना करता रहा-गुरुदेव! मेरे बच्चे को बचा लीजिए। यह नहीं रहा तो इसकी माँ भी रो-रोकर अपनी जान दे देगी। अब तो बस आपका ही सहारा है, गुरुदेव! सुबह ऑपरेशन के लिए हॉस्पिटल पहुँचे तो बच्चे की हालत देखकर डॉक्टर ने कहा-बच्चा ऑपरेशन के लायक बिल्कुल भी नहीं है। ऑपरेशन से पहले इसे खून चढ़ाना पड़ेगा।

मैंने कहा-मेरा खून ले लीजिए। खून की जाँच हुई। संयोग से दोनों का ब्लडग्रुप एक ही निकला। उसी समय मेरा खून निकालकर बच्चे को चढ़ाया जाने लगा। खून चढ़ते ही बच्चे को अचानक से तेज बुखार आ गया। आखिरकार उस दिन ऑपरेशन रोकना पड़ा।

रात भर असमंजस की स्थिति बनी रही। अगले दिन सुबह डॉक्टर आए। उन्होंने बच्चे का चेक-अप किया और चकित स्वर में बोले कि बच्चा अब तेजी से स्वस्थ हो रहा है। अगर इसी तरह सुधार होता रहा, तो ऑपरेशन की जरूरत नहीं रह जाएगी। फिलहाल आप बच्चे को साथ ले जा सकते हैं।

मैं बच्चे को वापस ले आया। अगले दो-तीन दिनों में बिना किसी दवा के ही बच्चा पूरी तरह से स्वस्थ दिखने लगा। फिर से जाँच की गई तो पता चला कि आँत का घाव बिल्कुल भर चुका है।

यह गुरुदेव की कृपा थी, कि बच्चे की बीमारी बिना ऑपरेशन के ही ठीक हो गई और हम एक बहुत बड़े आर्थिक संकट में भी पड़ने से बच गए। शान्तिकुञ्ज से वापस जाते समय मैं बहुत देर तक पूज्य गुरुदेव तथा वन्दनीया माताजी की समाधि के आगे हाथ जोड़कर चुपचाप खड़ा रहा, क्योंकि उनके अनुदान के लिए कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं थे।

**प्रस्तुतिः रामबाबू पटेल**
**बादलपुर, इलाहाबाद ( उ.प्र. )**

# ...तब भी मैं अकेली नहीं थी

सन् २००१ की बात है। हम सोलह-सत्रह महिलाओं की टोली टाटानगर से शान्तिकुञ्ज के लिए चली। हमें नौ दिवसीय सत्र में भाग लेना था। साथ में एक-दो भाई भी थे।

सभी यह सोचकर बहुत खुश थे कि पहली बार लगातार कई दिनों तक सेवा दान का अवसर मिलेगा। हम बहिनों को भोजनालय में खाना बनाने का काम मिल गया। सभी ने मिल-जुलकर बड़े प्रसन्न मन से खाना बनाया। वैसे तो, मैंने गुरुदेव को कभी देखा नहीं था, पर ऐसा लगता था, मानो उन्हीं के लिए खाना बना रही हूँ। पूरे प्रवासकाल में बड़ा आनन्द आया।

नौ दिनों के बाद सभी भरे मन से विदा हुए। चूँकि हम टोली में थे, इसलिए सब की टिकट एक साथ ही बनी थी। नियत समय पर गाड़ी आई और हम सभी चढ़ भी गए। लेकिन आपा धापी में मैं जिस डिब्बे में चढ़ी थी, उसमें मेरे ग्रुप के कोई नहीं थे। घबराहट में उस डिब्बे से उतरकर दूसरे डिब्बों में जा-जाकर उन्हें ढूँढने लगी-क्योंकि मेरे पास न तो टिकट था, न पैसे थे। मैं उन्हें ढूँढ ही रही थी कि इतने में गाड़ी खुल गई।

मैं डर गई कि कहीं बिना टिकट के पकड़ी जाऊँगी, तो मुसीबत आ जाएगी। उतर कर स्टेशन पर आ गई। गाड़ी की रफ्तार तेज होती जा रही थी। ट्रेन के डिब्बे एक-एक करके आँखों के आगे से गुजरते जा रहे थे। अपनी टोली की बहिनों को खोजने के क्रम में मैं डिब्बे के भीतर झाँकती हुई उनके नाम ले-लेकर जोर-जोर से पुकार रही थी। एक-एक कर सभी डिब्बे मेरी आँखों के सामने से गुजर गए।

मैं प्लेटफार्म पर ही खड़ी रह गई, किंकर्त्तव्यविमूढ़ता की स्थिति में। तभी तेज़ी से जा रहे किसी व्यक्ति के टकरा जाने से मेरी तन्द्रा भंग हुई। थके-हारे कदमों से चलकर सामने के खाली बैंच पर जा बैठी। बैठी-बैठी यही सोच रही थी कि अब क्या किया जाए।

सोचते-सोचते थक गई, लेकिन कोई उपाय नहीं सूझा। समय तेजी से आगे बढ़ रहा था। धीरे-धीरे आने-जाने वालों की संख्या घटती जा रही थी।

थोड़ी ही देर में चारों ओर सन्नाटा छा गया। एक अनजाना-सा भय मुझे बेचैन किये जा रहा था। इक्का-दुक्का लोग दिख रहे थे। उन अपरिचितों से अपनी समस्या नहीं कह सकती थी, पता नहीं इनमें कौन कैसा है। कहीं किसी गलत आदमी से कह बैठी, तो बजाय घटने के मेरी परेशानियाँ और बढ़ जाएँगी।

इसी उधेड़-बुन में डूबी थी कि इतने में एक वृद्ध सज्जन आए। उन्होंने मुझसे पूछा-बेटी कहाँ जाना है ? मैंने कहा-टाटानगर जाना है। उन्होंने बताया टाटानगर की गाड़ी तो अब कल रात में आएगी। फिर थोड़ा रुककर अपनेपन से कहने लगे, सारी रात अकेले प्लेटफार्म पर गुजारना तो तुम्हारे लिए ठीक नहीं हैं। इस समय कहीं जाना चाहती हो, तो बताओ ?

मैं सोचने लगी, एक तो ये भी अकेले हैं, ऊपर से बूढ़े - इनसे क्या कहूँ। फिर मन में आया कि कहीं पू. गुरुदेव ने मुझे मुसीबत में देख इन्हें मेरी सहायता के लिए प्रेरित किया हो। मैंने कहा-शांतिकुंज जाती, पर मेरे पास पैसे नहीं हैं।

वे बोले, चलो मैं तुम्हें शान्तिकुञ्ज पहुँचा देता हूँ। मैंने पूछा-आप कौन हैं? तो उन्होंने बताया मैं बलिया का हूँ।

मैं फिर डरी-अकेले आदमी हैं, पता नहीं कैसे हों। वे मेरे हाव-भाव से मेरे मन की बात समझ गए, बोले-डरो नहीं बेटी, मेरे साथ मेरी पत्नी और बच्चे भी हैं। उन्होंने अँधेरे में एक ओर हाथ उठाकर दिखाया, थोड़ी दूर पर दो-तीन औरतें और कुछ बच्चे खड़े थे। वृद्ध ने एक टेम्पो बुलाया। हम सभी उसमें जा बैठे।

उन्होंने कहा- अच्छा ही हुआ कि तुम छूट गईं, नहीं तो उस ट्रेन से जाकर रास्ते भर बेकार परेशान होती।

उनकी बातों का अर्थ मेरी समझ में नहीं आया। २० मिनट के बाद गाड़ी शांतिकुंज के गेट पर पहुँची। तब तक काफी रात हो चुकी थी। सुरक्षा कर्मी ने गेट खोलने से मना कर दिया।

दो-तीन बार अनुरोध करने के बाद भी जब प्रहरी ने गेट नहीं खोला, तो वृद्ध ने ऊँची आवाज में डाँटकर कहा-मैं बाहर खड़ा हूँ और तुम कहते हो, गेट नहीं खुलेगा। बूढ़े बाबा की आवाज में ऐसा कुछ था कि सुरक्षाकर्मी ने तुरंत गेट खोल दिया। मैं तेजी से अंदर आ गई। आगे दाहिमी तरफ कुर्सी पर बैठे सुरक्षा अधिकारी ने मुझसे पूछा- कहाँ से आईं हैं? मैंने अपनी परिस्थिति और समस्या संक्षेप में बताई। जब मैंने बताया कि ये बाबा मुझे यहाँ ले आए, तो पूछने लगे-कौन बाबा?

मैंने पीछे मुड़कर देखा, तो वहाँ न तो वे वृद्ध पुरुष थे, न ही उनकी पत्नी और न उनके बच्चे। टेम्पो तक का पता नहीं था। सब कुछ खड़े-खड़े ही गायब हो चुका था। मैं हतप्रभ होकर सुरक्षाकर्मी की ओर पलटी। बहुत कोशिश करने पर भी मेरे मुँह से बोल नहीं फूट पा रहे थे।

सुरक्षा कर्मियों ने मेरी स्थिति को संदिग्ध समझकर पहले तो अन्दर जाने देने से साफ मना कर दिया, पर उनमें से एक ने मेरी दशा देखकर कुछ सोचते हुए कहा- आप यहाँ शांतिकुंज में किसी को जानती हैं? मुझे भास्कर भाई साहब याद आए। उत्साहित होकर मैंने उनका नाम लिया। उन लोगों ने तुरन्त उन्हें फोन पर सारी बातें बताईं।

कुछ ही देर में मेन गेट पर उन्होंने एक महिला को भेजा, जो टाटानगर की थीं। वो मुझे अच्छी तरह से पहचानती थीं। उन्होंने सुरक्षाकर्मियों को सन्तुष्ट किया और मुझे अपने साथ ले गई। रात काफी हो चुकी थी, इसलिए अधिक कुछ बातचीत नहीं हुई। हम सभी सो गए।

अगले दिन रसोई में गई, तो वह कोई विशेष दिन था इसलिए कई प्रकार के विशेष व्यंजन बन रहे थे। मैं भी उसमें शामिल हो गई। श्रद्धेया जीजी ने मेरी आपबीती सुनीं तो बोलीं तुम्हें एक दिन और यहाँ प्रसाद पाना था, इसीलिए नहीं जा सकी।

टिकट के पैसे की व्यवस्था में एक दिन और रुकना पड़ा। तीसरे दिन भास्कर भाईसाहब से पैसे लेकर मैं टाटानगर के लिए रवाना हुई। टाटानगर पहुँची, तो मालूम हुआ कि तीन दिन पहले की चली वह गाड़ी, जो मुझसे छूट गई थी, अभी दो घंटे पहले पहुँची है। उस ट्रेन से आने वाली बहिनों से पता चला कि रेल की पटरियों में पैदा की गई गड़बड़ी के कारण वह गाड़ी दो दिन तक रास्ते में ही खड़ी रही। अब तक मैं इस बात को अच्छी तरह से समझ चुकी थी कि ट्रेन छूट जाने के बाद मेरी असहाय अवस्था में बूढ़े के रूप में मेरी मदद करने वाले स्वयं परम पूज्य गुरुदेव ही थे।

वे पहले से ही जानते थे कि जो ट्रेन मुझसे छूट गई, वह रास्ते में धक्के खाती हुई दो दिनों बाद पहुँचेगी। तभी तो वे मुझे दिलासा देकर कह रहे थे कि ट्रेन का छूट जाना मेरे भले के लिए हुआ है।

सचमुच अगर मैं इस ट्रेन से जाती तो मुझे भी टोली के दूसरे लोगों की तरह ही दो दिनों तक की यात्रा के दौरान विभिन्न प्रकार की असुविधाओं का सामना करना पड़ता। यह मेरा सौभाग्य ही था कि शांतिकुंज वापस जाकर मैंने स्वादिष्ट पकवान भी खाए और टोली के सभी परिजनों के पीछे-पीछे ही वापस टाटानगर पहुँच भी गई।

**प्रस्तुतिः आशा शर्मा**
**आदर्शनगर (झारखण्ड)**

## हम बदलेंगे, युग बदलेगा

अपने को बदले बिना दूसरों का बदला जा सकना सम्भव नहीं है। युग निर्माण का शुभारम्भ अपने आप का निर्माण करने की प्रक्रिया के साथ होना चाहिए। वाणी और लेखनी की शक्ति अब धीरे-धीरे घटती चली जा रही है, क्योंकि वक्ता और लेखक स्वयं वैसा आचरण नहीं करते, जैसा कि दूसरों से कराना चाहते हैं। चारित्रिक शिक्षा के लिए यह आवश्यक है कि उपदेशक दूसरों के सामने अपना आदर्श उपस्थित करें, यदि सद्भावनाओं की सम्पत्ति का संसार में बढ़ाया जाना उचित और आवश्यक है, तो उसका प्रथम प्रयोग अपने आप से ही आरम्भ करना चाहिए। जो वस्तु लाभदायक है, उसका उपभोग सबसे पहले हम स्वयं ही क्यों न करें?

# सूक्ष्म शरीर से दिया आश्वासन

पति के रेल सेवा से मुक्त होने के बाद हमने अपना मकान लखनऊ में बनाया। गुरुदेव की कृपा से मकान बहुत शीघ्र ही बन गया। अपने द्वारा बनाए घर में रहने की इच्छा पूर्ण हुई। हम सब बहुत खुश थे। सारी व्यवस्था बन जाने के बाद गृह प्रवेश का कार्यक्रम गायत्री जयंती के दिन तय किया गया। गर्मी का मौसम था। तपिश काफी हो रही थी। दोपहर में लू भी काफी चल रही थी, लेकिन गायत्री जयंती का पर्व नजदीक था। इसलिए हम लोगों ने दिन रात मेहनत कर दिनांक २ जून १९९० को गृहप्रवेश का कार्यक्रम रखा। हम सभी लोग बहुत उत्साहित थे। गायत्री जयंती पर्व और गृहप्रवेश दोनों एक साथ होने से खुशी दोगुनी हो गई थी। कार्यक्रम यज्ञ संस्कार द्वारा बहुत ही अच्छे ढंग से हो गया था। आने जाने वाले परिचित व आस-पड़ोस के लोग जा चुके थे। सभी कार्य अच्छी तरह सम्पन्न होने के कारण हम बहुत प्रसन्न थे। गर्मी बहुत थी, किन्तु सभी के मन में खुशियों की ठण्डी-ठण्डी लहर दौड़ रही थी। शाम होते-होते हल्की-हल्की हवा भी बहने लगी। यज्ञीय उर्जा से वातावरण अभी भी सुगन्धित हो रहा था।

शाम के समाचार का समय था। रेडियो खोला गया। सभी लोग समाचार सुनने लगे। मुख्य समाचार में ही गुरुदेव के ब्रह्मलीन होने का समाचार मिला। आनन्द का वह अवसर पलभर में शोक पूर्ण हो उठा। सभी के मन बहुत व्यथित और व्याकुल थे। मन में न जाने कितनी आशंकाएँ उठ रही थीं। आज गृहप्रवेश किया और हमारे गुरुदेव नहीं रहे। पता नहीं यह घर भविष्य में क्या-क्या दिन दिखाएगा। दूसरी बात यह भी मन को रह-रह कर परेशान करती थी कि अब हमारी दुःख तकलीफ परेशानी कौन सुनेगा? जब-जब हमारे ऊपर मुसीबत आती थी, गुरुदेव हम सबकी समस्या का समाधान करते थे। अब कहाँ जाएँगे समाधान के लिए? हजारों सवाल मन में उठ रहे थे। परेशान तो सभी लोग थे, लेकिन कोई भी किसी से बात नहीं कर रहा था। सभी शोक में डूबे थे। नींद नहीं आ रही थी। रात भी हो चुकी थी। सोचते-सोचते मुझे हल्की-सी झपकी आ गई।

मैंने स्वप्न देखा कि घर में जिस जगह पर यज्ञ हुआ था, उसी जगह पर यज्ञाग्नि प्रज्ज्वलित हो रही है। यज्ञ की लपटें ऊँची-ऊँची उठ रही हैं। परम पूज्य गुरुदेव यज्ञ कुण्ड के चारों ओर धीरे-धीरे चक्कर लगा रहे हैं और मुझे समझा रहे हैं "तू इतनी चिन्ता क्यों कर रही है। मैं हूँ न तुम्हारे पास। मैं यहाँ हमेशा रहूँगा तू चिन्ता करना छोड़।" अचानक मेरी आँखें खुल गईं। आँखों के आगे बार-बार वही दृश्य आता रहा। मन में बहुत ग्लानि हुई कि मैं तो गुरुदेव को केवल शरीर तक ही जानती थी। उसी दिन उनके विराट् स्वरूप का ज्ञान हुआ कि गुरुदेव हर समय हर क्षण अपने बच्चों के साथ रहते हैं।

तब से अब तक कुछ भी परेशानी होती है तो गुरुदेव का आश्वासन याद आता है कि कुछ अनिष्ट नहीं होगा। गुरुदेव की सूक्ष्म सत्ता हमारी रक्षा कर रही है।

**प्रस्तुति : सरस्वती श्रीवास्तव, लखनऊ, ( उत्तर प्रदेश )**

# करोगे याद हमको
# पास अपने शीघ्र पाओगे

वर्ष १९९९ की बात है। फरवरी का महीना था। पहला सप्ताह रहा होगा। बाहर से अन्दर तक जमा देने वाली ठण्ड में हिम प्रदेश हिमाचल की देवभूमि पर जाने का मौका गुरुकाज से मिला था। हिमाचल के कांगड़ा जिले में पालमपुर तहसील के गाँव दरगील-देवगाँव के निवासी डॉ. अश्विनी कुमार शर्मा, जो इन दिनों लखनऊ स्थित भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान में प्रधान वैज्ञानिक हैं; और उनकी धर्मपत्नी, बहिन श्रीमती कंचनबाला शर्मा, संजय गाँधी पी.जी.आई. लखनऊ में कार्यरत हैं के दो सुपुत्रों चि. अर्णव और प्रणव का यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न कराने हम चार गायत्री परिजन लखनऊ से हिमाचल पहुँचे थे।

हम लोगों का तीन दिनों का हिमाचल प्रवास था। कुल चार बटुकों के यज्ञोपवीत संस्कार, पंचकुण्डीय गायत्री यज्ञ, दीपयज्ञ और विचार संगोष्ठी आदि के त्रिदिवसीय कार्यक्रम सम्पन्न कराकर चौथे दिन प्रातःकाल हम लोगों को पठानकोट के लिए जीप से नीचे आना था। जाड़ा बहुत होता था, हाड़ कँपा देने वाली ठण्ड में सूर्योदय के पहले स्नानादि करके बन्द कमरे में हम लोग जप-ध्यान-प्रार्थना का क्रम पूरा कर लेते थे। विदाई वाले दिन हम चारों ने सोचा कि आज की प्रार्थना बर्फ से लदे पर्वत देवात्मा हिमालय के सामने खुले आकाश के नीचे की जाए।

हमारे टोलीनायक अग्रज श्री राम महेश मिश्र, भाई श्री राधेश्याम गिरि, श्री रामनाथ यादव और हम गाँव के उत्तरी छोर पर खड़े होकर सामूहिक स्वर में विविध प्रार्थनाएँ कर रहे थे। भावातिरेक में कुछ समय के लिए हमारी आँखें बन्द हो गई थीं। अचानक भाई मिश्र जी ऊँची आवाज में बोले-भाई! सब लोग सामने पहाड़ के ऊपर देखिये। उनके स्वर में अजीब सी उत्तेजना थी।

हम तीनों ने एक साथ आँखें खोलकर पूछा। क्या-कहाँ? उन्होंने दाहिने हाथ की तर्जनी से पर्वत की ऊँची चोटी की ओर इशारा किया। हमने देखा, ट्रेन की हेडलाइट जैसे दो प्रकाशपुंज पर्वत शिखर पर चमक रहे हैं। हम चारों परिजन उन प्रकाशपुंजों को परम पूज्य गुरुदेव और परम वंदनीया माताजी की प्रत्यक्ष उपस्थिति मानकर श्रद्धावनत हो गए।

हम चारों हर्ष-मिश्रित आँसुओं के साथ गुरुसत्ता की स्तुतियाँ गाए जा रहे थे। लगभग छः मिनट तक वे दोनों प्रकाश पुंज चमकते रहे, फिर धीरे-धीरे मध्यम होते हुए विलीन हो गए।

हुआ यह था कि श्री राम महेश जी के मन में प्रार्थना के समय अचानक एक भाव आया। भाव के उसी प्रवाह में उन्होंने पूज्य गुरुदेव से कहा- गुरुवर! ०२ जून, १९९० को आप हम लोगों से बहुत दूर चले गए। तब आपने कहा था कि आप सूक्ष्म व कारण शरीर में हिमालय पर रहेंगे। अब तो हम हिमालय के पास ही हैं, गुरुवर!

क्या यहाँ भी अदृश्य ही बने रहेंगे? यह सब सोचते हुए उन्होंने आँखें खोलकर हिमालय की ओर देखा। पूरी तरह बर्फ से ढके हिमालय पर्वत की सबसे ऊँची चोटी के समीप की चोटी पर दो प्रकाशपुंज उन्हें दिखे। प्रकाशपुंज देखते ही मिश्र जी ने हम सबका ध्यान उस ओर आकृष्ट कराया था।

उस समय सूर्यदेव नहीं निकले थे। ऊषाकाल था, पर्वत की उस ऊँचाई पर न तो कोई रिहायश थी और न ही कृत्रिम प्रकाश व्यवस्था की कोई संभावना। प्रार्थना शुरू करते समय उस शिखर पर ऐसा कुछ भी नहीं दिखा था। कोई ऐसा निशान नहीं था, जिसे भ्रम कहा जा सके। हम चारों आज भी पूरे विश्वास के साथ यह कह सकते हैं कि प्रकाश पुंज के रूप में प्रकट होकर हमारे आराध्य, हमारे गुरुदेव-माताजी ने अपने उस आश्वासन को पूरा किया, जिसमें उन्होंने कहा था-'करोगे याद हमको पास अपने शीघ्र पाओगे'।

आज जब चिरंजीवी अर्णव शर्मा अमेरिका में एम.एस. कर चुके हैं और प्रणव शर्मा इञ्जीनियर बन चुके हैं, देवभूमि हिमाचल में उनके दादा पुण्यात्मा साधक श्री विशनदास शर्मा जी के पुरखों के घर के पास की वे यादें हम चारों भाइयों के जेहन में ठीक वैसी ही बनी हुई हैं।

प्रात:काल की आत्मबोध साधना में जब भी हम उस हिमक्षेत्र की मानसिक यात्रा करते हैं, क्षण मात्र में हमें अपने आस-पास गुरुसत्ता की पावन उपस्थिति की सहज अनुभूति होने लगती है।

**प्रस्तुति: देवनाथ त्रिपाठी,**
**वरिष्ठ आरक्षी, जिला कारागार,**
**सीतापुर-(उ.प्र.)**

## विश्व कल्याण के लिए ऋषियों का जीवन

आत्मा और परमात्मा का मध्यवर्ती एक मिलन बिन्दु है, जिसे देवमानव कहते हैं। इसके और भी कई नाम हैं-महापुरुष, संत, सुधारक आदि। पुरातन काल में इन्हें ऋषि कहते थे। ऋषि, अर्थात् वे- जिनका निर्वाह न्यूनतम में चलता हो और बची हुई सामर्थ्य-सम्पदा को ऐसे कामों में नियोजित किए रहते हों, जो समय की आवश्यकता पूरी करें, वातावरण में सत्प्रवृत्तियों का अनुपात बढ़ाएँ।

# विनम्रता से विगलित हुआ अहंकार

घटना १९६७ ई. की है । पूज्य गुरुदेव का दो दिवसीय कार्यक्रम कराया। कार्यक्रम गोण्डा, उत्तर प्रदेश में आयोजित किया गया था। आयोजक थे श्री रामबाबू माहेश्वरी।

गोण्डा में सन्त पथिक जी महाराज को सभी जानते-मानते थे, इसलिए कार्यक्रम में उन्हें भी आमन्त्रित किया गया, यह सोच कर कि उनके रहने से लोगों की उपस्थिति अच्छी रहेगी।

पहले दिन का कार्यक्रम आरम्भ हुआ। क्षेत्रीय परिजनों की दृष्टि में श्रद्धेय पथिक ही अधिक वरिष्ठ थे। इसलिए, आरम्भ परम पूज्य गुरुदेव के उद्‌बोधन से हुआ। मिशन से जुड़े लोगों की संख्या वहाँ बहुत कम थी। अधिकांश लोग पथिक जी के शिष्य या प्रशंसक थे। पूज्य गुरुदेव ने गायत्री और यज्ञ पर अपना विवेचन प्रस्तुत किया। उन्होंने बताया-भारतीय संस्कृति की जननी गायत्री है और जनक यज्ञ। उन्होंने विवेक, करुणा और भाव संवेदना को ऋषि परम्परा का आधार बाताते हुए मानवमात्र के सर्वतोमुखी विकास के लिए इन मूल्यों को जीवन में स्थान दिए जाने की आवश्यकता पर बल दिया ।

इसके बाद पथिक जी का उद्‌बोधन आरंभ हुआ। उन्होंने कहा कि अभी तक आचार्य जी ने जो कुछ भी कहा है, वह सब सनातन धर्म को, हिन्दू धर्म को भ्रष्ट करने वाला है। गायत्री मंत्र जोर से नहीं बोला जाता है। स्त्रियों को गायत्री मंत्र जपने का अधिकार नहीं है। यह शास्त्रों के प्रतिकूल है, इससे समाज भ्रष्ट हो जाएगा। पूज्य गुरुदेव मंच पर बैठे चुपचाप सुनते रहे। सभा समाप्त हुई सभी लोग पथिक जी के विचार प्रवाह में बहते हुए अपने-अपने घर की ओर चल पड़े।

पूज्य गुरुदेव ने विदा होने से पहले पथिक जी से बातचीत के लिए समय निर्धारित किया। अगले दिन सुबह निर्धारित समय पर श्री रामबाबू माहेश्वरी जी को साथ लेकर गुरुदेव पथिक जी से मिलने उनके निवास पर गए। पू. गुरुदेव के कहने पर माहेश्वरी जी ने वेदों-पुराणों के कुछ खण्ड अपने साथ रख लिए थे।

पथिक जी ने पू. गुरुदेव से अपने आसन पर ही बैठने का आग्रह किया, पर गुरुदेव ने विनम्रतापूर्वक मना करते हुए कहा कि आप विरक्त हैं। मैं गृहस्थ हूँ। बराबर कैसे बैठ सकता हूँ? पूज्य गुरुदेव ने बातचीत शुरू करते हुए कहा- सनातन धर्म को भ्रष्ट करने का मेरा कोई इरादा नहीं है। हमारे पूर्वजों-ऋषियों ने जो कुछ अपने शास्त्रों, वेदों-पुराणों में कहा है, मैं वही कह रहा हूँ, एक शब्द भी मैंने अलग से नहीं कहा है।

पू. गुरुदेव वेद के मण्डल-सूक्त-श्लोक संख्या, पुराणों के अध्याय धारा प्रवाह बोलते रहे और माहेश्वरी जी उसी क्रम में सब कुछ वेदों-पुराणों के पन्ने पलट कर दिखाते चले गये।

अन्त में श्रद्धेय पथिक जी ने पश्चात्ताप भरे स्वर में कहा- अज्ञानता में मुझसे बड़ा भारी अपराध हुआ है। मैंने तो कल संतों से सुनी-सुनाई बातें कही थीं। मैंने शास्त्र-पुराण पढ़े ही नहीं हैं। विद्वज्जनों के शास्त्रीय विवेचन से भी मेरा वास्ता नहीं के बराबर रहा है। आपकी बातों से मुझे इसका ज्ञान हुआ है कि अब तक सामाजिक रूढ़ियों को ही मैं शास्त्र सम्मत मानता रहा। आपने अपनी बातों की पुष्टि में जिस प्रकार वेद की ऋचाओं को प्रस्तुत किया है, उसके आधार पर यह सिद्ध होता है कि आप तो वेदमूर्ति हैं।

अगले दिन के प्रवचन में पहले दिन से काफी अधिक संख्या में लोग आए। उस दिन पथिक जी ने सभा आरम्भ होते ही आगे बढ़कर माइक पकड़ लिया और कहने लगे- पहले मैं बोलूँगा।

पथिक जी के इस प्रस्ताव का स्वागत लोगों ने करतल ध्वनि से किया। पथिक जी कहने लगे- कल जो कुछ मैंने कहा था, वह सब सच नहीं है। मैंने तो संतों से सुनी-सुनाई बातें ही कही थीं। आचार्यश्री ने जो भी कहा है वह सब अक्षरशः शास्त्र-सम्मत है और सभी के लिए कल्याणकारी है।

इस तरह बिना विवाद-शास्त्रार्थ किए विनम्रता के अमोघ अस्त्र से पूज्य गुरुदेव ने पथिक जी का हृदय जीत लिया।

**प्रस्तुतिः भारत प्रसाद शुक्ला**
**बहराइच ( उ.प्र. )**

## गायत्री उपासना का महत्व

गायत्री उपासना का मूल उद्गम गायत्री महामंत्र है। उसमें जीवन उत्कर्ष की समस्त शिक्षाएँ बीज रूप में मौजूद हैं। उपासना का मूल उद्देश्य भावनाओं और प्रवृत्तियों का सन्मार्ग की ओर जाने की प्रेरणा प्राप्त करना ही तो होता है। यह आधार गायत्री में है और उसकी उपासना में वह शक्ति भी है कि अन्तःकरण को इसी दिशा में मोड़े। इस दृष्टि से गायत्री सर्वांगपूर्ण एवं सार्वभौम मानवीय उपासना कही जा सकती है। उसके लिए हमें नित्य-नियमित रूप से कुछ समय निकालना चाहिए, चाहे वह समय पाँच मिनट का क्यों न हो।

# गंगा में डूबने से बचाया एक बालक ने

१९८२ से मैं गुरुदेव की शरण में हूँ। मेरा पूरा परिवार ही उनके विचारों से प्रभावित है। इसलिए मेरे विवाह में दान-दहेज की कोई बात नहीं रही। दुर्भाग्य से एक साल गुजरते ही पत्नी का स्वर्गवास हो गया।

ससुराल पक्ष वालों ने मेरे अंदर की पीड़ा नहीं देखी। उन्हें मुझ पर शक था। अतः उन्होंने पुलिस थाने में इस आशय की एक अर्जी दी कि सम्भव है, यह मृत्यु अस्वाभाविक रही हो।

थाने से दारोगा आए, पूछताछ हुई। फिर दिवंगत पत्नी के माता-पिता भी आए। देख-सुनकर चले गए। चूँकि हममें कोई खोट नहीं थी, एक चिकित्सक के नाते काफी लोग जानते पहचानते भी थे, इसलिए पास-पड़ोस के लोगों की बातें सुनकर आखिरकार वे संतुष्ट हो गए कि इसमें हमारा कोई दोष नहीं। केस तो खत्म हो गया। लेकिन इन घटनाओं से मैं अन्दर से टूट गया। जीने की कोई इच्छा शेष नहीं बची थी।

ऐसी विषम परिस्थितियों में पूज्य गुरुदेव के सत्साहित्य का स्वाध्याय करने से धीरे-धीरे मेरा मनोबल बढ़ता गया और जैसे-तैसे मैं अपने आप को सहज करने में काफी हद तक सफल हुआ।

कुछ ही दिनों बाद पूज्य गुरुदेव के सूक्ष्म संरक्षण से सबल होकर मैंने अपनी दिनचर्या को नियमित कर लिया। चिकित्सा कार्य के साथ ही मैंने अपना एक क्लीनिक भी खोल लिया, ताकि अधिक से अधिक व्यस्त रहा जा सके।

सन् १९९२ की बात है। उन दिनों मैं दोपहर के समय एक से पाँच बजे तक चिकित्सा कार्य से समय निकाल कर प्रत्येक दिन गायत्री परिवार का एक कार्यक्रम कर लेता था। इस तरह गुरुदेव का काम करने का संतोष भी मिल जाता और पूरे दिन व्यस्त रहने के कारण किसी प्रकार की चिन्ता भी नहीं घेर पाती।

वह शनिवार का दिन था। थोड़ा समय मिला, तो गंगा स्नान करने चला गया। कई सालों के अनाभ्यास के कारण तैरने की आदत छूट चुकी थी। इसलिए मैं सावधानीपूर्वक किनारे ही डुबकी लगा रहा था।

नहाते-नहाते अचानक फिसलकर प्रवाह में आ गया। मैंने बचाव के लिए चिल्लाना और हाथ-पाँव मारना शुरू किया। मेरे एक साथी के पिता कुछ दूर तक तैर कर पीछे-पीछे आए, पर फिर लौट गए।

मैंने स्काउट की किताब में डूबने से बचाव के कुछ उपाय पढ़ रखे थे। उन्हें भी आजमाया, लेकिन सब बेकार। मन ने कहा-अब अंतिम समय आ गया। दूसरी दुनिया में जाने के लिए तैयार हो जाओ।

मेरे मुँह से अचानक निकला-हे माँ! और मैं अचेत हो गया।

कुछ समय बाद चेतना लौटी, तो देखा बहुत दूर एक पुल के पास दो-तीन

लड़के खेल रहे हैं। वहाँ एक नाव भी लगी है। हालाँकि वहाँ पर किसी लड़के या नाव का होना एक अप्रत्याशित बात थी।

उस अर्धचेतना की अवस्था में मुझे जो दिखा और जिस प्रकार घटित हुआ, ठीक वही लिख रहा हूँ। उस लड़के ने मेरी तरफ अपनी उँगली बढ़ाई। मैं उसकी उँगली पकड़ किनारे की ओर आने लगा। तभी नाव वाला पास आया। उसने मुझे अपनी नाव पर बिठाकर किनारे तक पहुँचा दिया।

मैं कुछ देर तक अचेत-सा होकर वहाँ पड़ा रहा। थोड़ी देर बाद सहज होने पर मैंने इधर-उधर देखा।

जिसने अपनी उँगली पकड़ाकर मेरी जान बचायी थी, वह लड़का मुझे कहीं भी नजर नहीं आया। नाव वाला भी बिना किराया लिए वापस जा चुका था।

आज भी मेरा मन यही कहता है कि परम पूज्य गुरुदेव ने ही बालरूप धारण करके अपनी उँगली पकड़ाकर मुझे जीवनदान दिया था। मौके पर नाव लेकर मल्लाह का आ जाना भी उन्हीं की लीला थी।

**प्रस्तुतिः अशोक कुमार तिवारी**
**इलाहाबाद ( उ.प्र. )**

## दुःखों से निवृत्ति

समस्त सद्गुणों का केन्द्र परमात्मा है। जिस प्रकार पृथ्वी पर ताप और प्रकाश सूर्य से ही आता है, उसी प्रकार मनुष्य की आध्यात्मिक श्रेष्ठताएँ और विभूतियाँ परमात्मा से ही प्राप्त होती हैं। इस संसार में समस्त दुःख पापों के ही परिणाम हैं। मनुष्य अपने किए पापों का दण्ड भुगतता है या फिर दूसरों के पापों की लपेट में आ जाता है। दोनों प्रकार के दुःखों का कारण पाप ही होते हैं। यदि पापों को मिटाया जा सके, तो समस्त दुःख दूर हो सकते हैं। यदि पापों को घटाया जा सके, तो मानव जाति के दुःखों में निश्चय ही कमी हो सकती है। कुविचारों और कुकर्मों पर नियंत्रण धर्म-बुद्धि के विकसित होने से ही सम्भव होता है और यह धर्म-बुद्धि परमात्मा पर सच्चे मन से विश्वास रखने से उत्पन्न होती है। जो निष्पक्ष, न्यायकारी परमात्मा को घट-घटवासी और सर्वव्यापी समझेगा, उसे सर्वत्र ईश्वर ही उपस्थित दिखाई पड़ेगा, ऐसी दशा में पाप करने का साहस ही उसे कैसे होगा?

# गुरुर्वाक्यं ब्रह्मवाक्यं

मैं बचपन से ही बहुत तार्किक स्वभाव का था। ज्यादा पूजा पाठ या साधू बाबा आदि के आडम्बरों से बहुत दूर रहता था। मुझे समाज निर्माणसे जुड़े नैतिक और सामाजिक कार्यों में रुचि थी।

मुझे आर्यसमाज से जुड़ी हुई कुछ चीजें पसन्द थीं, विशेषकर गायत्री मंत्र। १९७६ की बात है। उन्हीं दिनों मैं पहली बार इस मिशन से परिचित हुआ। मेरे बड़े भाई के समान श्री मंगल प्रसाद लोहिया जी एक दिन मेरे पास आए और बोले कि आपको सोनी माता जी के यहाँ गायत्री यज्ञ में चलना है। चूँकि मेरी गायत्री मंत्र में श्रद्धा पूर्व से ही थी, मैं सहर्ष तैयार हो गया।

मैं सोनी माता जी के यहाँ यज्ञ में पहुँचा। यज्ञ श्री कोलेश्वर तिवारी जी करा रहे थे। मैंने प्रसन्नतापूर्वक यज्ञ किया। यज्ञ के बाद तिवारी जी बोले अब कुछ दक्षिणा दो। मैं दक्षिणा का अर्थ ठीक से नहीं समझ पाया, तो उन्होंने बताया कि अपने अन्दर की कुछ बुराई यज्ञ भगवान की साक्षी में छोड़ दो। मैंने पान, नॉनवेज तथा आलस्य आदि छोड़ दिया और प्रतिदिन गायत्री मंत्र की उपासना करने लगा। लगभग १५ दिन के अन्दर ही मुझे हरिद्वार जाने की प्रेरणा हुई।

संयोग से मंगल जी शान्तिकुञ्ज जा रहे थे, मैं भी उनके साथ हो लिया। ट्रेन से सुबह ही पहुँच गया था। स्नान आदि के बाद मैं गुरुजी के प्रवचन में पहुँच गया। मुझे शान्तिकुञ्ज के वातावरण से लगा मैं स्वर्ग में पहुँच गया हूँ। उसके बाद जब गुरुदेव का प्रवचन सुना तो लगा मैं बहुत सौभाग्यशाली हूँ, जो ऐसे भगवान स्वरूप गुरु के दर्शन हुए।

प्रवचन समाप्त होने के बाद मंगल जी ने मंच के पीछे मुझे गुरुदेव से मिलाया और मेरा परिचय दिया। गुरुदेव ने कुशल क्षेम पूछा। उनके सरल व्यक्तित्व से मैं बहुत प्रभावित हुआ। वे ऐसे बात कर रहे थे जैसे मुझे बहुत पहले से जानते हों। उनका अपनापन देखकर मेरे हृदय में उनके प्रति अटूट श्रद्धा हो गई।

उसके पश्चात् मैं गुरुदेव से उनके कमरे में मिला। गुरुदेव ने मुझे अपने पास बिठाया। घर परिवार का हाल पूछा। मैं असमंजस में पड़ गया कि क्या उत्तर दूँ। मुझे निरुत्तर देख वे बोले '**तुम हमारा काम करो, हम तुम्हारा काम करेंगे।**' तुम्हारी दुकानदारी, बीमारी, परेशानी सबकी जिम्मेदारी मेरी है। बस तुम मन लगाकर कार्य करना। इतना बड़ा आश्वासन पाकर मैं कृतार्थ हो गया। उस समय तो दो-तीन दिन वहाँ रहकर मैं घर वापस आ गया। लेकिन शान्तिकुञ्ज का आकर्षण बराबर अनुभव होता रहता। मैंने उस समय ३ शिविर १-१ महीने के कर डाले। इस तरह से मैं किसी न किसी रूप में शान्तिकुञ्ज हमेशा महीने-दूसरे महीने पहुँच ही जाता।

सन् १९८६ की घटना है। मुझे हार्ट में कुछ परेशानी मालूम पड़ने लगी। इधर-उधर कुछ दिखाया, लेकिन आराम नहीं मिला। मेरे मित्र अरविन्द निगम जी को इस बात का पता चला। वे तुरन्त मुझे लखनऊ मेडिकल कालेज लेकर गए। वहाँ डॉक्टरों

ने बताया कि हार्ट में प्रॉबलम है। चूँकि इसमें दवा काम नहीं करेगी इसलिए एक छोटा सा ऑपरेशन करेंगे। ऑपरेशन का खर्च लगभग ७० हजार रुपए बताया गया।

खर्च की राशि सुनते ही जैसे लगा कि पैरों के तले की धरती ही खिसक गई। मेरे पास ५ हजार रुपये भी नहीं हैं। ७० हजार कहाँ से लाऊँगा। मैं घर वापस चला गया। मैं मानसिक रूप से बहुत परेशान था। मेरी इतनी बड़ी हैसियत भी नहीं थी कि उधार लेकर ऑपरेशन कराता। वापस करता भी तो कैसे? यह मेरे लिए उस समय असंभव ही था। मुझे कुछ भी समझ नहीं आ रहा था। अचानक मुझे गुरुदेव के वे शब्द याद आये कि बेटा **'तुम हमारा काम करो, हम तुम्हारा काम करेंगे।'**

तुरन्त मैंने हरिद्वार जाने की व्यवस्था बनाई। शान्तिकुञ्ज पहुँचकर डॉ० प्रणव पण्ड्या जी भाई साहब को अपनी रिपोर्ट दिखाई। दवा आदि का पर्चा भी दिखाया। डॉ० साहब भी बोले, स्थिति तो ऑपरेशन की ही बन रही है। फिर मैं गुरुदेव के पास गया। उनसे सारी बातें बताईं। रिपोर्ट और सारे पर्चे भी दिखाए। गुरुदेव बोले- तुम्हें कुछ नहीं होगा। तुम्हें कोई बीमारी नहीं है। जाओ मन लगाकर काम करो। खूब साईकिल चलाना। तुम्हें कुछ नहीं होगा।

कहते हैं, गुरु का वाक्य ब्रह्मवाक्य होता है। गुरुदेव का वह वाक्य सचमुच मेरे लिए ब्रह्मवाक्य बन गया। मैं आज तक पूरी तरह स्वस्थ हूँ। मुझे किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं है। गुरुदेव की कृपा से मेरा जीवन संकट बड़ी आसानी से टल गया। मैं उस परमसत्ता का बहुत ऋणी हूँ, जिन्होंने मुझ अकिंचन पर अहैतुक कृपा की। मैं आज भी तन-मन से गुरु कार्य में संलग्न हूँ।

**प्रस्तुति : बिजलेश्वरी प्रसाद कसेरा**
**चौक बाजार, बलरामपुर ( उ.प्र. )**

## हम कौन हैं?

"हमारी कितनी रातें सिसकते बीती हैं, कितनी बार हम बालकों की तरह बिलख-बिलख कर, फूट-फूट कर रोए हैं। इसे कोई कहाँ जानता है? लोग हमें संत, सिद्ध, ज्ञानी मानते हैं। कोई लेखक, वक्ता, विद्वान और नेता समझते हैं, पर किसने हमारा अन्तःकरण खोलकर पढ़ा, समझा है? कोई उसे देख सका होता, तो उसे मानवीय व्यथा-वेदना की अनुभूतियों की करुण कराह से हाहाकार करती एक उद्विग्न आत्मा भर इन हड्डियों के ढाँचे में बैठी-बिलखती दिखाई पड़ती।"

- आचार्य श्रीराम शर्मा

# आँखें फट पड़ीं आँखों के डाक्टर की

वर्ष १९६३ की घटना है। अचानक ही मेरी आँखें दुखने लग गई थीं। शुरू में मैंने इस पर कोई खास ध्यान नहीं दिया। अध्ययन-अध्यापन से जुड़े होने के कारण मेरी आँखों की परेशानी दिन ब दिन कम होती चली गई। पढ़ना शुरू करते ही आँखों में जलन सी महसूस होती और पानी गिरने लगता था। इसी कारण हमेशा सिरदर्द भी बना रहता था।

आखिरकार मैंने स्थानीय डॉक्टर से आँखों की जाँच कराई। डाक्टर ने बताया कि आँखों से ज्यादा काम लेने के कारण ही ऐसी स्थिति बनी है। आँखों को अधिक से अधिक आराम देने की सलाह के साथ उन्होंने कुछ दवायें लिख दीं। लेकिन उन दवाओं से कुछ लाभ नहीं हुआ। धीरे-धीरे देखने में भी दिक्कत महसूस होने लगी। तब जाकर मैं अलीगढ़ आई हॉस्पिटल पहुँचा। वहाँ आधुनिकतम मशीनों से कई प्रकार की जाँच की गई। जाँच की रिपोर्ट देखकर मुझे तुरंत हॉस्पीटल में भर्ती कर लिया गया। लगातार इलाज चलता रहा।

महीनों अस्पताल में भर्ती रहना पड़ा, लेकिन रोग था कि ठीक होने का नाम ही नहीं लेता। धीरे-धीरे एक आँख की रोशनी समाप्त सी हो चली। इलाज करने वाले डाक्टर भी हिम्मत हार चुके थे। जाँच की प्रक्रिया फिर से शुरू हुई। एक दिन नेत्र विभाग के मुख्य चिकित्सक प्रो. बी. आर. शुक्ला ने कहा कि वैसे तो हम अपनी पूरी कोशिश कर रहे हैं, लेकिन रिपोर्ट कहती है कि आपकी दूसरी आँख भी खराब हो सकती है। उनके ये शब्द सुनकर मुझे काठ मार गया। बहुत कुछ कहना चाहकर भी मैं कुछ बोल नहीं सका। डॉ. शुक्ला मेरा कन्धा थपथपाते हुए आगे बढ़ गए।

मैं अन्दर ही अन्दर इस चिन्ता से घुला जा रहा था कि अगर मैं अन्धा हो गया तो मेरा शेष जीवन कैसे बीतेगा, मेरे परिवार का भरण-पोषण कौन करेगा। तभी मुझे पता चला कि आचार्यश्री उज्जैन आए हुए हैं। मैं तुरंत उनके दर्शन करने चल पड़ा। उनके सामने पहुँचा, तो उन्हें प्रणाम करके मैंने अपनी व्यथा सुनाई। सारा वृत्तांत सुनकर गरुदेव ने मेरी ओर गहरी नजर से देखा और कहा-तेरा डॉक्टर क्या कहता है, यह मैं नहीं जानता। पर मैं कहता हूँ कि तेरी दूसरी आँख खराब नहीं हो सकती।

पूज्य गुरुदेव के इस आश्वासन से मेरी आँखें डबडबा गईं। मैंने उन्हें डॉक्टर का पर्चा दिखाया। दवाएँ भी हाथ में ही लिए था। मैंने कहा-गुरुदेव, ये सब.....। गुरुदेव ने मेरा आशय समझकर कहा-तेरी मरजी। रखे रख, फेंके फेंक दे। उनकी बातों पर विश्वास न करने का कोई प्रश्न ही नहीं था। मैंने उसी वक्त डॉक्टर का पर्चा फाड़कर फेंक दिया।

तब से लेकर आज तक मैंने कोई दवा नहीं खाई। आज भी मेरी आँख की रोशनी बनी हुई है। आश्चर्य तो यह है कि युगऋषि के उस आश्वासन के बाद मैंने दिन-रात एक करके पीएच.डी. तक पूरा किया।

इस बीच मैं अलीगढ़ जाकर प्रो. शुक्ला से मिला। आँख की हालत सुधरती देखकर उन्होंने मुझसे पूछा–भाई, तुम कौन–सी दवा ले रहे हो, किस डॉक्टर का इलाज चल रहा है? मैंने कहा–दवा लेना तो मैंने कब का छोड़ दिया है। भगवान सरीखे मेरे गुरुदेव ने मेरी आँख की जाती हुई रोशनी वापस लौटा दी है। अब मैं पढ़ाई–लिखाई ही नहीं, बारीक से बारीक काम भी बड़े मजे में कर लेता हूँ। पूज्य गुरुदेव के इस अद्‌भुत, अविस्मरणीय अनुदान की बात सुनकर डॉ. शुक्ला आश्चर्यचकित रह गए।

कुछ दिनों बाद जब मैं गुरुदेव के दर्शन करने शांतिकुंज आया तो वे सूक्ष्मीकरण साधना में थे। इस दौरान आचार्यश्री से सामान्यतया परिजनों का मिलना संभव नहीं रह गया था, किन्तु फिर भी वन्दनीया माता जी ने मुझ पर विशेष कृपा करते हुए मुझे पूज्य गुरुदेव से मिलने भेज दिया। उन्हें प्रणाम करने के बाद मैं कुछ कह पाता, उसके पहले ही वे बोल पड़े–कैसे हो कर्मयोगी? तुम्हारी आँख ठीक है न? मैंने कहा–गुरुदेव यह रोशनी तो आप ही की दी हुई है। मेरे ऐसा कहने पर उन्होंने अपनी छाती ठोककर कहा– हाँ, मैंने इसकी जिम्मेदारी ले रखी है। आँख की रोशनी जीवन के अन्तिम क्षण तक बनी रहेगी।

पूज्य गुरुदेव की वह बात आज भी सच साबित हो रही है। आज मैं ८० वर्ष आयु पार कर रहा हूँ, लेकिन घण्टों लिखने–पढ़ने का काम करने के बाद भी मेरी आँखें कभी नहीं थकती हैं।

**प्रस्तुति : डॉ. आर.पी. कर्मयोगी,**
**देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )**

## शालीनताः एक सरल योग साधन

शालीनता अन्तरात्मा के गहन स्तरों तक प्रवेश कर जाती है और वह जन्म–जन्मान्तरों तक साथ जाती है। पुण्यात्मा का भविष्य अन्धकारमय नहीं बन सकता, उसे दुर्गति वाली परिस्थितियों में नहीं गिरना पड़ता। मनुष्य जीवन की सार्थकता ऐसी विधा अपनाने में ही है। यह आवश्यक नहीं है कि ऐसी उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए कोई बहुत बड़े जप–तप किए जाए। सज्जनता भरा जीवन यापन कर सकना भी एक योग साधन ही है, जो सबके लिए सरल भी है और सुयोग भी।

**–पं. श्रीराम शर्मा अचार्य**

# जहर की पुड़िया रखी रह गई

मेरे दादा जी की गिनती इलाके के खानदानी अमीरों में होती थी। वे सोने-चाँदी की एक बड़ी दुकान के मालिक थे। एक बार किसी लेन-देन को लेकर दादाजी और पिताजी में ऐसा विवाद हुआ कि हमारे पिताजी हम चार भाई बहनों को छोड़कर घर से निकल गए। उनका आज सन् २०११ तक कुछ पता नहीं है। पिताजी के चले जाने के बाद माँ की घर में बहुत उपेक्षा होने लगी। एक समय स्थिति ऐसी आई कि हमारे नाना जी हम बच्चों के साथ माँ को विदिशा लेकर चले गए। उनका अपना भी परिवार था, अतः हम सबके भरण-पोषण में काफी दिक्कत होने लगी। अन्त में माँ को हम बच्चों की परवरिश के लिए दूसरों के घर बर्तन धोना व झाड़ू-पोछा का काम करना पड़ा।

सन् १९८९ई. में हमारी बुआ रामकली सोनी कलेक्ट्रेट में काम करती थीं। उनके माध्यम से गायत्री परिजन श्री रमेश अभिलाषी व रागिनी आन्टी के घर झाड़ू-पोछा का काम माँ को मिला। रागिनी आन्टी देवकन्या के रूप में शान्तिकुंज में रह चुकी थीं। उनसे प्रभावित होकर हम लोग भी गायत्री मन्दिर के यज्ञों में भाग लेने लगे। तब मैं पाँचवीं कक्षा में था। मैं यज्ञ में स्वाहा शब्द का जोर से उच्चारण करता। भाई श्री रमेश जी उस उच्चारण से मेरी ओर आकर्षित हुए। उन्होंने मुझे रोज मंदिर आने की प्रेरणा दी। मैंने नियमित रूप से मंदिर जाना शुरू कर दिया। बाद में तो मैं मंदिर में ही रहने लगा। वहाँ का जो काम मुझे बताया जाता, उसे मन लगाकर पूरा करता।

समय बीतता गया। मैं पढ़ाई और मंदिर में काम के साथ पेपर बाँटने का काम करने लगा। कुछ और बड़ा होकर मजदूरी की, बाइंडिंग का काम किया, किराना दुकान, कपड़े की दुकान में काम किया और अपने घर की जिम्मेदारी यथासाध्य पूरी करने की कोशिश करता रहा।

बहनें बड़ी हुईं। सबसे बड़ी बहन की शादी राजस्थान के श्री मुरली मनोहर सोनी जी के साथ तय हुई। सगाई सम्पन्न हुई। सुसंस्कृत परिवार था इसलिए उन्होंने कुछ माँगा नहीं, पर शादी तो शादी होती है। कई तरह के छोटे-बड़े खर्च करने ही होते हैं। मेहनत मजदूरी करके घर के खर्चे ही बड़ी मुश्किल से पूरे हो पाते थे। बहन की शादी के लिए कभी कुछ जोड़ ही नहीं सका। अब कैसे क्या व्यवस्था होगी, इन्हीं चिन्ताओं को लेकर शादी के कार्ड छपवाये।

सभी रिश्तेदार चाचा, ताऊ, फूफा पिताजी के घनिष्ठ मित्रों के यहाँ कार्ड दिया और सहायता माँगी। सभी ने आश्वासन दिए। उनके भरोसे मैं आगे बढ़ता रहा। दिन बीतते गए, पर कहीं से कोई सहायता नहीं मिली। नाना जी हमेशा से ही हमारे दुःख-सुःख के साथी थे। उन्होंने आंशिक सहयोग किया, किन्तु वह शादी हेतु अपर्याप्त था।

जब शादी के एक दिन पहले एक-एक करके सभी ने सहायता हेतु हाथ खड़े कर दिए तो मेरे हाथ पैर ठण्डे होने लगे। समझ में नहीं आ रहा था कि अब क्या होगा।

अगले दिन बारात आने वाली थी और अभी तक उनके ठहरने, खाने का कोई इन्तजाम नहीं हो सका। यहाँ तक कि बहिन के लिए एक जोड़ी साड़ी तक नहीं खरीदी जा सकी। ऐसे में तो निश्चित ही दरवाजे से बारात वापस लौट जाएगी। यही सब सोचते हुए मैं पूज्य गुरुदेव के चित्र के सामने बैठकर खूब रोया।

मैं लड़का ही था अप्रैल सन् २००० में। एक कागज पर लिखा-मैं मेरी माँ व बहन तीनों आत्महत्या कर रहे हैं। हमने उसे गुरुदेव की पूजा चौकी पर पीछे की ओर रख दिया और बाजार से जहर ले आया। तय कर चुका था कि रात को सबके खाने में मिला दूँगा। रात के आठ बजे मैंने माँ से कहा- भूख लग रही है माँ! खाना निकालो। आज हम सब साथ बैठकर खाएँगे।

माँ खाना निकालने ही जा रही थी कि एक ही साथ पूरा गायत्री परिवार घर पर आ गया। मैंने सबको बाहर बिछी हुई दरी पर बिठाया। रमेश भाई साहब ने मुझसे पूछा-पैसे की क्या व्यवस्था है? मैं उदास-उदास आँखों से उनकी ओर देखता रहा। मुझसे कुछ भी बोलते नहीं बन रहा था। मेरी हालत देखकर वे बोले- इस तरह टककी लगाकर क्या देख रहा है, कुछ बोलता क्यों नहीं?

उनका इतना कहना था कि मैं उनसे चिपक कर जोर-जोर से रोने लगा। उन्होंने बड़ी मुश्किल से मुझे चुप कराते हुए कहा-हमें यहाँ गुरुजी ने भेजा है। हम सबके मन में अचानक ऐसी प्रेरणा हुई कि लड़का परेशान है तुरंत जाकर देखो। सही-सही बताओ, सारा इन्तजाम करने में बताओ तुम्हें कितना पैसा चाहिए?

मैंने अटकते हुए कहा-मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। रिश्तेदारों के भरोसे शादी तय कर दी लेकिन कल सभी ने हाथ खड़े कर दिए। बाजार से जहर लेकर आया था कि खाकर चैन से सो जाऊँगा।

इतना सुनते ही वे आग-बबूला हो उठे। देर तक मुझे लताड़ते रहे। फिर शान्त होकर कहा-फिर कभी भूलकर भी ऐसा नहीं सोचना, हम सब हैं किस दिन के लिए। ज्योति केवल तुम्हारी बहन ही नहीं, हमारी बेटी भी है। कितने लाख रुपये चाहिए अभी बोलो? मैंने कहा-सिर्फ इतना ही, जिससे बारात का स्वागत-सत्कार हो जाए और मैं अपनी बहिन को सम्मानजनक ढंग से विदा कर सकूँ।

उसी पल सभी परिजनों ने कुर्ते की जेब में हाथ डालकर रुपये निकालने शुरू किए और कुछ ही क्षणों में मेरे सामने नोटों का ढेर लग गया। जान-पहचान की दुकान खुलवाई गई और रातों-रात सारा इन्तजाम हो गया। ज्योति की विदाई शानदार ढंग से हुई।

मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि गुरुदेव अपने शिष्यों का कष्ट इस प्रकार भाँप लेते हैं और तत्काल निवारण के उपाय भी कर देते हैं।

**प्रस्तुतिः मनोज सोनी**
**राँची ( झारखण्ड )**

# दो माह में दूर हुआ अल्सरेटिव कोलाइटिस

एक बार मुझे बड़ी अजीब सी बीमारी ने घेर लिया। सन् २००१ ई. की बात है। पहले तो पेट में दर्द हुआ और इसकी दवा लेते ही दस्त शुरू हो गए।

दस्त की दवा ली, तो रोग ने और भी गंभीर रूप ले लिया। यहाँ तक कि मल के रास्ते से खून के थक्के निकलने लगे। शरीर के सभी जोड़ों में असहनीय दर्द होने लगा। कमजोरी इतनी बढ़ गई थी कि चलने-फिरने तो क्या, साँस तक लेने में दिक्कत होने लगी थी।

जब देखा कि इधर-उधर की दवाओं से रोग ठीक होने के बजाय बढ़ता ही जा रहा है, तो गम्भीरता से इलाज कराने की बात सोची गई।

शहर के एक बड़े नर्सिंग होम में इलाज शुरू हुआ। कई तरह की जाँच के बाद डॉक्टर ने बताया कि अल्सरेटिव कोलाइटिस हो गया है।

यह एक अमेरिकन बीमारी है, जो करोड़ों में किसी एक आदमी को होती है। इस रोग के लिये कोई कारगर दवा नहीं निकल पाई है। रोग का कारण क्या है, यह भी आज तक मालूम नहीं किया जा सका है।

लक्षणों के आधार पर जो भी दवाएँ इसमें प्रयुक्त होती हैं, उनके साइड इफेक्ट बहुत ही खतरनाक हैं। इन दवाओं के प्रयोग से हड्डियाँ कमजोर होने लगती हैं और धीरे धीरे जीवनी शक्ति कम हो जाती है।

लेकिन मरता क्या न करता? जब ऐसी बीमारी हो गई, तो इलाज तो कराना ही पड़ेगा। डॉक्टर के परामर्श से उन्हीं दवाओं का सेवन शुरू किया। जब तक दवा लेती रहती तभी तक रोग कुछ हद तक नियंत्रण में रहता और दवा छोड़ते ही फिर से बढ़ना शुरू हो जाता।

इसी तरह आठ वर्षों तक दवा चलती रही। इतने वर्षों तक काफी महँगे इलाज के बाद भी स्वस्थ होना तो दूर रहा, उल्टे शरीर की नस-नस कमजोर होती गई। हड्डियाँ तो इतनी कमजोर हो गई थीं कि हल्के से दबाव से भी असहनीय दर्द होने लगता।

जीवन भार-सा लगने लगा। मेरी बीमारी ठीक हो जाए, इस कामना से मेरे पिता जी टाटानगर में महामृत्युंजय मंत्र का जप-अनुष्ठान आदि भी करते-कराते रहे। इन प्रयासों से मैं जीवित तो रही, पर हमेशा यही सोचती रहती कि ऐसा जीना भी किस काम का।

एक दिन पेट में इतना असहनीय दर्द होने लगा कि मैं बुरी तरह छटपटाने और चीखने-चिल्लाने लगी। सभी ऐसा सोचने लगे कि अब अंतिम समय आ गया है। घर में रोना-धोना शुरू हो गया।

माता-पिता पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना करने लगे, रो-रोकर उनसे मेरे जीवन की भीख माँगने लगे। पर मुझे लगता था कि ऐसी मौत से बदतर जिन्दगी के लिए

क्या रोना। यह जितनी जल्दी समाप्त हो जाए, उतना अच्छा है। लेकिन आश्चर्य की बात है कि गुरुदेव से की गई दिन भर की प्रार्थना के बाद उस रात मुझे बहुत अच्छी नींद आई।

अगले ही दिन हमारे एक पारिवारिक मित्र घर आये। वे गायत्री परिवार के परिजन हैं, जो हाल में ही शान्तिकुञ्ज से वापस आए थे। उन्हें मेरी बीमारी के बारे में जानकारी थी।

शान्तिकुञ्ज में उन्होंने मेरे स्वास्थ्य लाभ के लिए सामूहिक जप करवाया, और कुछ जड़ी-बूटियाँ भी ले आए। उन्होंने कहा कि माँ गायत्री का नाम लेकर जड़ी-बूटियों की यह दवा खा लीजिए। परम पूज्य गुरुदेव जरूर आपकी रक्षा करेंगे।

सचमुच ही उस दवा के सेवन से मुझे काफी राहत मिली। पहली बार ऐसा महसूस हुआ कि मैं पूर्ण स्वस्थ भी हो सकती हूँ। कुछ आशान्वित होकर माता पिता के साथ मैं नवम्बर २०१० में शान्तिकुञ्ज गई।

शांतिकुंज में आदरणीय डॉक्टर साहब से मिली। रोग के बारे में सुनकर उन्होंने भी कहा कि इसका सही इलाज एलोपैथी में है ही नहीं। पर निराश होने की जरूरत नहीं है। इसका आध्यात्मिक उपचार संभव है। उन्होंने मुझे देव संस्कृति विश्वविद्यालय में जाकर डॉ. वन्दना से मिलने की सलाह दी।

डॉ. वन्दना ने कहा कि एकमात्र यज्ञोपैथी से ही इसका इलाज सम्भव है। उन्होंने विशेष रूप से तैयार की गई हवन सामग्री से नित्य हवन करने के लिये कहा और निर्गुण्डी तथा गिलोय सेवन करने के लिये दिया।

नित्य हवन तथा इन दवाओं के सेवन से एक महीने में ही इतनी राहत मिली कि मैं दंग रह गई। पेट का दर्द बिल्कुल ठीक हो गया। शारीरिक कमजोरी काफी हद तक कम हो गई। फिर से जीने की इच्छा जाग उठी। ऐसा अनुभव होने लगा कि नया जीवन मिला हो।

अंग्रेजी दवा लेना छोड़ चुकी थी। एक पखवाड़े के अन्दर ही न केवल शारीरिक कमजोरी दूर हो गई, अपितु मानसिक स्तर पर भी मैं अपने-आपको काफी मजबूत महसूस करने लगी।

मानसिक अवसाद का नामो-निशान नहीं रह गया था। इस प्रकार आध्यात्मिक शक्तियों के अनुदान से तीन महीने बीतते-बीतते मैं पूरी तरह से स्वस्थ हो गई।

परम पूज्य गुरुदेव ने मुझ अकिंचन पर असीम कृपा करके यह जो नई जिन्दगी दी है, अब इसे उन्हीं के काम में लगाने का संकल्प ले चुकी हूँ।

**प्रस्तुतिः डॉ. अनीता शरण**
**चैम्बूर, मुम्बई ( महाराष्ट्र )**

# गुरु गायत्री दोऊ खड़े प्रारब्ध करै पार

यह उस समय की घटना है, जब मैं लखीमपुर में रहता था। मेरा पुश्तैनी मकान पलिया कला, लखीमपुर खीरी (उत्तर प्रदेश) में है। क्षत्रिय परिवार में जन्म लेने के कारण मेरा खान-पान सब उसी हिसाब से था। सन् १९७५ में मैंने जगद्गुरु शंकराचार्य स्वरूपानन्द जी महाराज से शिव मंत्र की दीक्षा ले ली थी। वे उस समय बहुत प्रसिद्ध थे। श्री रामजन्मभूमि का शिलान्यास उन्होंने ही किया था। मैं दीक्षा लेकर नियमित शिव मंत्र का जाप किया करता था। लेकिन मुझे अपने में कोई परिवर्तन महसूस नहीं हुआ था।

मेरे जीवन का स्वर्णिम समय तब आया जब लखनऊ अश्वमेध यज्ञ होने वाला था। रजवन्दन का कार्यक्रम चल रहा था। गाँव में प्रचार-प्रसार हो रहा था। मेरे परिचित एक डाक्टर साहब थे, उन्हीं के द्वारा मुझे इस कार्यक्रम की जानकारी मिली। मैंने पुनः गायत्री मंत्र से दीक्षा ली और घर में देव स्थापना भी कराई। इस प्रकार नियमित गायत्री मंत्र का जप करने लगा। धीरे-धीरे खुद-ब-खुद मेरा खान-पान सात्विक हो गया। अब मैंने धर्म के असली स्वरूप को देखा, धीरे-धीरे साधना की ओर रुचि बढ़ी। मगर पिछले दुष्कृत्यों का फल भोगना शेष था, जो शारीरिक रोग के रूप में प्रकट हुआ। मेरे पेट में पथरी जमा हो गयी थी, जिसका ऑपरेशन आवश्यक था। लखनऊ के डॉ० सन्दीप अग्रवाल से चेकअप कराने गया था। घर में किसी को नहीं बताया था, मगर डाक्टर की सलाह पर मैंने उसी समय ऑपरेशन कराना तय कर लिया और अगले दिन २ दिसम्बर १९९२ को वहाँ एडमिट हो गया।

ऑपरेशन तय हो जाने के बाद से मैं निरंतर पूज्य गुरुदेव का ध्यान करते हुए मानसिक गायत्री जप करता रहा। ऑपरेशन के पहले रोगी को बेहोश किया जाता है। मुझे भी बेहोशी की सूई दी गई, पर मैं बेहोश नहीं हुआ। चुपचाप आँखें बंद कर पड़ा रहा और सब कुछ सुनकर अनुभव करता रहा।

ऑपरेशन की प्रक्रिया शुरू हुई पर आश्चर्य की बात है कि मुझे दर्द का अहसास बिल्कुल नहीं हो रहा था। डॉ० सन्दीप नर्स से कुछ बातें करने लगे। उनके हाथ ऑपरेशन की प्रक्रिया में संलग्न थे। ध्यान बँट जाने से अचानक हाथ गलत दिशा में चल गया। ज़िसके कारण मेरी आर्टरी (खून की नस) बीच में कट गई। वे बोल उठे- अरे! बहुत गलत हो गया, आर्टरी कट गई। नस कटने से खून का फव्वारा डॉ० संदीप के मुँह पर पड़ने लगा। उन्होंने जल्दी में कहा- ग्लुकोज की पूरी बोतल खोल दो। सभी अपनी-अपनी तरह से उपाय करने लगे। इतने में डॉ० संदीप बोले- "डॉ० राना हैड गॉन"।

इसके बाद मैंने अपने आपको बिल्कुल दूसरी ही दुनिया में पाया। न अस्पताल, न चिकित्सक, न मुझे ऑपरेशन की कोई सुध। हरिद्वार के प्रसिद्ध चंडी मंदिर के नजदीक गंगा नदी में, एक छोटे से शिवालय के पास अथाह जल राशि का स्रोत फूट

रहा था। चक्र सा भँवर बना हुआ था। उस भँवर से एक प्रकाशपुँज निकलकर आसमान में दृष्टि सीमा से परे तक गया हुआ था। मैं उस प्रकाश के रास्ते आकाश की ओर चला जा रहा था। उस समय मुझे चिन्ता, शोक, दु:ख कुछ भी अनुभव नहीं हो रहा था। मैं बहुत प्रसन्नचित्त था। इसी बीच अचानक मैंने देखा कि उसी रोशनी के रास्ते ऊपर से परम पूज्य गुरुदेव आ रहे हैं। वे पीले खद्दर का कुर्ता एव सफेद रंग की धोती पहने हुए हैं। उस प्रकाश मार्ग के बीच मुझे देख गुरुदेव आश्चर्य से बोले "अरे! डॉ० राना, तुम यहाँ कैसे? जाओ, अभी तुम्हें बहुत काम करने हैं। उनके इतना कहते ही मैं पुन: लखनऊ के उस ऑपरेशन रूम में पहुँच गया।

शरीर में ऑपरेशन वाले स्थान पर बिजली के झटके सा अनुभव हुआ और पूरी तरह चेतना लौट आयी। पुन: ऑपरेशन रूम की सारी हलचलें स्पष्ट रूप से अनुभव होने लगीं। वहाँ असिस्टेंट और नर्स से डॉ० संदीप की बातचीत से ही पता चला कि मैं अचेत हो गया था। शायद उन्हें मेरे जीवित होने में भी संदेह था; और अभी-अभी वे आश्वस्त हुए कि मैं जीवित हूँ। ऑपरेशन की प्रक्रिया फिर से शुरू हुई। अन्त में जब टाँका लगाकर पट्टी बाँधी गई तब तक मैं गायत्री मंत्र का मानसिक जप करता रहा।

ऑपरेशन के तीसरे दिन टाँका कटा। उस दिन बाबरी मस्जिद प्रकरण के कारण सभी जगह कर्फ्यू लगा हुआ था। मैं अपनी गाड़ी खुद चलाकर मन में गायत्री मंत्र जपता हुआ सकुशल अपने घर बलरामपुर पहुँच गया था।

अपनी पिछली करनी का फल तो असमय मौत ही थी, पर गुरुदेव ने कृपा कर हमें अपनाया और वह मार्ग दिखाया जिससे इस जीवन का सदुपयोग जान सकूँ। उनकी इस अहैतुकी कृपा से मैं आजीवन कृतार्थ हूँ।

**प्रस्तुति : डॉ० कृष्ण कुमार राना**
**पहलवारा ( उत्तरप्रदेश )**

## गायत्री ही कामधेनु है

गायत्री ब्राह्मणों की कामधेनु है। अत: जप करने से पहले ब्राह्मण बन। नहीं साहब, ब्राह्मण नहीं बनेंगे, रहेंगे तो हम डाकू और रहेंगे तो हम हत्यारे-कसाई ही, पर २४ हजार का जप करेंगे। तब बेटे इससे क्या हो जायेगा? गन्दे नाले में गंगाजल डालते रहे तो क्या बनेगा? गंगा जी में तू गन्दे नाले को डाल दे तो गंगा जल हो भी सकता है, पर गंदे नाले में लाकर के एक किलो गंगा जल डाल देगा तो क्या सारा का सारा गंदा नाला शुद्ध हो जायेगा?

– आचार्य श्रीराम शर्मा

# याद करते ही आ पहुँचे शान्तिकुञ्ज के देवदूत

सन् २००१ई. की बात है। मुझे कुछ ऐसी बीमारी हो गई कि मैं अन्दर ही अन्दर कमजोर होती जा रही थी। कुछ ही दिनों में चलना-फिरना कठिन हो गया। कई जगहों पर इलाज करवाया, मगर बीमारी ठीक होने का नाम नहीं ले रही थी। स्थिति जब असहाय-सी हो गई, तो दिल्ली के अपोलो अस्पताल में दिखाया गया। वहाँ काफी दिनों तक इलाज चला मगर वहाँ भी अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाया। उतने महँगे इलाज से भी जब स्वस्थ न हो सकी, तो घर के लोग काफी निराश हो गए। तभी किसी ने उड़ीसा से आए हुए एक डाक्टर के बारे में बताया। काफी नाम था उनका। उन्हीं के पास इलाज शुरू हुआ। वहाँ भी एक साल बीत गया, पर कुछ भी आराम नहीं मिला। कई-कई डाक्टरों से इलाज कराकर थक गई।

सभी डाक्टर अंतिम रूप में जवाब दे चुके थे। सभी डॉक्टर यही कह रहे थे कितना भी इलाज कर लिया जाए, चलना-फिरना सम्भव न हो सकेगा। इलाज से केवल इतना ही किया जा सकता है कि आगे तकलीफ न बढ़े। उनका कहना था कि स्पाइनल कॉर्ड और मस्तिष्क के बीच का सम्बन्ध ठीक से स्थापित नहीं हो पा रहा है, जिससे हाथ पैर की पेशियों को मस्तिष्क से आदेश प्राप्त नहीं हो रहा। इसी वजह से उनमें गति नियंत्रण नहीं हो पा रहा है। सारे कामकाज, सारी सामाजिक गतिविधियाँ स्थगित पड़ी थीं।

घर में पड़े-पड़े दिन भर समय काटना मुझे बोझ-सा लगने लगा। कोई इष्ट मित्र मिलने आते तो लगता उन्हें जाने न दूँ, पकड़ कर अपने पास बैठाए रखूँ। अब तो मिलने के लिए भी कोई कभी कभी ही आते थे।

अक्सर मन में यह प्रश्न उठता रहता कि क्या इसी तरह पूरी जिन्दगी कटेगी। निराशा की इसी स्थिति में एक दिन पूजास्थल पर गुरुदेव के चित्र के सामने बैठकर फूट-फूट कर रोने लगी। रोते-रोते दुःख और हताशा के आवेग में मैं फट पड़ी। पिता होकर बेटी का यह दुःख साल भर से देख रहे हैं। आपको दया नहीं आती, क्या मैं इसी तरह अकेली पड़ी रहूँगी? इतने दिन हो गए मैं बीमार पड़ी हूँ और शान्तिकुञ्ज से कोई देखने तक नहीं आया। रोते-रोते मैं यहाँ तक कह गई कि मैं अपकी बेटी हूँ। इस तरह निकम्मी बनकर पड़ी नहीं रह सकती। या तो उठा ही लीजिए, नहीं तो पूरी तरह से ठीक कर दीजिये। अगर मैं ठीक हो गई, तो दूने उत्साह से आपका काम करूँगी।

इसी तरह रोते-रोते मन का गुबार निकालती हुई कब शांत होकर सो गई, मुझे पता ही नहीं चला। शाम को समाचार मिला कि शांतिकुंज से दो प्रतिनिधि आए हुए हैं। कुछ ही देर में वे शक्तिपीठ से लड्डा जी और दो अन्य प्रतिनिधियों को साथ लेकर मेरे आवास पर आए। वे आते ही मुझ पर बुरी तरह बरस पड़े कि पिछले तीन माह

से कोई हिसाब नहीं मिला है। न ही कोई प्रगति रिपोर्ट मिली। मैंने अपनी स्थिति बताई और कहा कि ये सारी सूचनाएँ और हिसाब-किताब श्रीमती पूर्णिमा के पास है, क्योंकि मेरी अनुपस्थिति में सब काम-काज वही देख रही हैं। लड्डा जी ने जोर देकर कहा कि इसी वक्त चलिये पूर्णिमा जी के पास। मैंने अपनी असमर्थता जताई-मैं चल नहीं सकती। उन्होंने अनसुना करते हुए कहा- चलो उठो तैयार हो जाओ, जल्दी।

मैं स्लीपिंग गाउन पहने लेटी थी। उनके आने पर बिस्तर पर बैठकर बातें कर रही थी। मैंने कहा- कपड़े बदल लेती हूँ। लड्डा जी ने कहा कपड़े बदलने की कोई जरूरत नहीं। इसी तरह चलो, मुझे ये सारी जानकारियाँ अभी, इसी वक्त चाहिए। शायद उन्हें लग रहा था कि मैं बहाना बना रही हूँ। मुझे अपनी स्थिति पर रोना आ गया। मुझे तो बिस्तर से उठने में, घर के अन्दर चलने-फिरने में भी तकलीफ़ होती है। कैसे समझाऊँ इन्हें ? किसी तरह संयत स्वर में मैंने कहा-थोड़ी देर बैठिए, मैं चलती हूँ आपके साथ।

लड्डा जी क्रोध से तमतमा उठे। उन्होंने एक-एक शब्द पर जोर देते हुए कहा-चलना तो तुमको अभी पड़ेगा। सहसा मुझे ऐसा लगा जैसे उनके भीतर सूक्ष्म रूप से पूज्य गुरुदेव ही प्रविष्ट हो गए हैं। मैं अचम्भे से उनके चेहरे की ओर देखने लगी। ऐसा आभास हुआ, जैसे सामने लड्डा जी नहीं स्वयं गुरुदेव ही खड़े हैं। उन्होंने मुझे बाँह पकड़ कर उठाया और बिस्तर से उठाकर लगभग घसीटते हुए पूजा घर में ले गए। उन्होंने मेरे माथे पर तिलक लगाकर शान्तिपाठ के साथ अभिसिंचन किया।

मेरे पूरे शरीर में जैसे बिजली की एक लहर दौड़ गई। उन्होंने कहा-अब चलो। मैंने जल्दी में शरीर पर एक शाल डाला और उनके साथ चल पड़ी। मैं आगे-आगे जा रही थी, मेरे ठीक पीछे लड्डा जी थे। और पीछे वे सारे परिजन, जो साथ आए थे। हम सभी पूर्णिमा के घर पहुँचे। उसने सारी रिपोर्ट लाकर दी। फिर बात-चीत के क्रम में उन्होंने मुझसे पूछा-तुम इतने दिनों से शक्तिपीठ क्यों नहीं आती हो ? मैंने बताया-साल भर से मैं बीमार थी। चलना-फिरना मुश्किल हो गया है।

इतना कहते ही मुझे ध्यान आया कि अभी पूर्णिमा के घर तक तो बड़े आराम से चलकर आ गई हूँ और प्राण ऊर्जा से भरी हुई हूँ। अपने-आपको काफी स्वस्थ महसूस कर रही हूँ। इस आकस्मिक परिवर्त्तन को लक्ष्य करते हुए मैंने कहा- कल मैं जरूर आऊँगी।

अगले दिन सुबह पाँच बजे शक्तिपीठ जाकर मैंने हवन किया और उसी समय मेरी लम्बी बीमारी की इतिश्री हो गई। आदरणीय लड्डा जी को माध्यम बनाकर मुझे पल भर में नया जीवन देने वाली गुरुसत्ता के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए मेरे पास कोई शब्द नहीं हैं।

**प्रस्तुतिः श्रीमती रेखा थम्मन**
**सोनारी, जमशेदपुर ( झारखण्ड )**

# परीक्षा के दिन हुआ बीमारी से बचाव

बचपन से ही मैं अपने परिवार में गायत्री साधना का क्रम देखता रहा हूँ। उस वातावरण में पले होने के कारण एक स्वाभाविक विश्वास तो बना हुआ था ही, पर उसमें वह तासीर तो तब आई, जब मैंने खुद अपने जीवन में उस साधना के चमत्कार को प्रत्यक्ष किया।

एक साधारण किसान परिवार में मेरा जन्म हुआ। सन् १९९६ में हमारे गाँव में पंचकुण्डीय गायत्री यज्ञ का अनुष्ठान हुआ। अनुष्ठान तीन दिनों का था, जिसका आयोजन मेरे पिताजी ने ही किया था। इस अनुष्ठान में कई तरह के संस्कार भी सम्पन्न कराए गए। जिनमें विद्यारम्भ संस्कार और दीक्षा संस्कार कराने वालों की संख्या ही अधिक थी। मुझे भी उसी समय दीक्षा मिली। तब मैं छठी कक्षा में पढ़ता था।

तब मैं दीक्षा का मतलब समझने लायक तो नहीं था पर इतना याद है कि उस दिन मैं बहुत खुश था, ऐसा लग रहा था, जैसे मैं महत्वपूर्ण हो गया हूँ। सच बताऊँ, तो मैं भी कोई हूँ, इसका आभास पहली बार मिला। दीक्षा में मुझे गायत्री मंत्र दिया गया। मंत्र तो मैं पहले भी जानता था लेकिन बताई गई विधि के अनुसार साधना उसी समय से आरंभ हुई।

यह घटना उन दिनों की है जब, मैं आठवीं कक्षा में था। एक दिन अचानक मेरी तबियत खराब हुई। पेट में जोरों का दर्द होने लगा। इसके बाद दो-चार दिन बाद नाक से खून गिरने लगा। धीरे-धीरे यह एक सिलसिला बन गया।

अक्सर ही नाक से खून गिरने लगता और मैं पकड़कर चित लिटा दिया जाता। जब उठकर कुछ इधर-उधर चलने फिरने का प्रयास करता, तो सिर में चक्कर आने लगता और मैं गिर पड़ता। कई डॉक्टरों को दिखाया गया, तीन साल तक इलाज चलता रहा, पर बीमारी ज्यों की त्यों बरकरार रही। कई तरह की जाँच के बाद भी डॉक्टर यह समझ नहीं पाए कि हुआ क्या है।

इस बीच पढ़ाई जैसे-तैसे चलती रही। आठवीं से दसवीं में आ गया। बोर्ड की परीक्षा नजदीक आ गई। लेटे-लेटे ही पढ़ाई करता था। बैठकर पढ़ने का प्रयास करता तो नाक से खून आने लगता।

चिंता थी कि बोर्ड की परीक्षा कैसे दूँगा। यहाँ स्कूल में तो सारे ही शिक्षक अपने थे। उन्हें मेरे साथ हमदर्दी थी, इसलिए किसी तरह निभ गया। लेटे-लेटे ही परीक्षा देता रहा। लेकिन यहाँ बोर्ड परीक्षा में मेरी कौन सुनेगा? पिताजी को अपनी चिन्ता बताई। उन्होंने जैसे पहले से ही कुछ सोच रखा हो, वह बोले- देखता हूँ, कुछ तो रास्ता निकलेगा ही।

एडमिट कार्ड आ गया, तो पिताजी को दिखाया। वे उसे लेकर परीक्षा केंद्र में गए। प्रधानाध्यापक से मिलकर पूरी परिस्थिति बताई। उन्होंने सहयोग का आश्वासन

दिया। बोले-मैं ऑफिस में उसके लिए ऐसी व्यवस्था कर दे सकता हूँ कि अकेले बैठकर या लेटे-लेटे ही परीक्षा दे सके। मैं खुश था चलो बोर्ड की परीक्षा छूटेगी नहीं।

१४ मार्च २००१ को परीक्षा आरंभ होने वाली थी। ठीक उसके एक दिन पहले ऐसा आभास हुआ कि गुरुदेव कह रहे हैं-तुम साधारण तरीके से सबके साथ बैठकर परीक्षा दोगे। डरो मत! हम तुम्हारे साथ हैं। परीक्षा के कुछ दिनों बाद तुम पूर्ण रूप से स्वस्थ हो जाओगे।

मैंने देखा कि मेरे सामने गुरुदेव और माताजी अभय मुद्रा में हाथ उठाए मुस्करा रहे हैं। अगले ही पल मैं आत्मविश्वास से भर गया और तय कर लिया कि सबके साथ बैठकर परीक्षा दूँगा।

आश्चर्य की बात है कि परीक्षा के सारे ही पेपर मैंने साधारण तरीके से सब लड़कों के साथ बैठकर दिए। एक दिन भी कुछ नहीं हुआ। इससे भी बड़े आश्चर्य की बात यह है कि जैसे-तैसे अध्ययन की प्रक्रिया चलते रहने के बावजूद इस परीक्षा में मुझे ७० प्रतिशत अंक मिले, जिसकी मुझे कल्पना तक नहीं थी। घर के सभी लोग आश्चर्यचकित थे।

परीक्षा के बाद दिल्ली अस्पताल में मेरा इलाज हुआ। इलाज करने वाले चिकित्सक थे डॉक्टर खक्कड़ साहब, वे भी गायत्री साधक हैं।

उन्होंने मुझसे कहा- गुरुदेव पर भरोसा रखो, सब ठीक होगा। नियमित गायत्री का जप करना। उन्होंने दवा दी, जिसे ६० दिनों तक खाना था। एक टिकिया की कीमत मात्र २५ पैसे थी।

जैसा पूज्य गुरुदेव ने कहा था ठीक वैसा ही हुआ। नवम्बर तक मैं पूर्ण स्वस्थ हो गया। अब मैंने अपना जीवन पूज्य गुरुदेव को समर्पित कर दिया। आज मैं इक्कीस साल का हूँ और पटना प्रज्ञा युवा प्रकोष्ठ के सक्रिय सदस्यों में गिना जाता हूँ।

**- प्रस्तुतिः निशांत रंजन, सीवान (बिहार)**

## पात्रता से प्राप्ति का सुनिश्चित विधान

संकल्प, धैर्य और श्रद्धा का त्रिविध सुयोग अपनाए रहने पर मनोभूमि ऐसी बनती है कि अध्यात्म के दिव्य अवतरण को धारण कर सकें। यह पात्रता ही शिष्यत्व है, जिसकी पूर्ति कहीं से भी हो जाती है। समय पात्रता विकसित करने में लगता है, गुरु मिलने में नहीं। एकलव्य के मिट्टी के द्रोणाचार्य असली की तुलना में कहीं अधिक कारगर सिद्ध होने लगे थे।

# गुरुकार्य में साधनों की कमी नहीं रहती

आँवलखेड़ा में अर्ध महापूर्णाहुति का कार्यक्रम शुरू होनेवाला था। निर्धारित समय से दो सप्ताह पूर्व हम आँवलखेड़ा गुरुग्राम पहुँचे। कबीर नगर में आवास मिला। अगले दिन जितेन्द्र रघुवंशी भाई साहब ने उस आवास में ठहरे हुए सभी भाई बहिनों की गोष्ठी ली। वहाँ जौनपुर (उ.प्र.) के चौदह भाई एक साथ बैठे थे। मुझे जौनपुर के भाइयों के साथ टोलीनायक बनाकर आगरा से पन्द्रह-बीस किलोमीटर दक्षिण उस स्थान पर जाने के लिए कहा गया, जहाँ से आँवलखेड़ा मार्ग जाता है। दिल्ली, हरियाणा, राजस्थान से आने वाली बसें उसी स्थान से होकर गुजरती हैं।

हम सभी को वहाँ जाने हेतु एक जीप मिली थी। आगरा के भाई प्रमोद अग्रवाल जी के यहाँ से नाश्ते का पैकेट प्राप्त कर वहाँ जाना था। जिसमें हरियाणा, राजस्थान से आने वाले भाइयों-बहिनों को नास्ता कराकर आँवलखेड़ा के लिए मार्गदर्शन करना था। हम सभी भाई आगरा के अग्रवाल जी से एक दूसरी गाड़ी में ३५००० नाश्ते का पैकेट प्राप्त कर गन्तव्य स्थान में पहुँचे। दो पक्के कमरे सड़क के बगल में बने हुए थे। एक कमरे में नाश्ते के पैकेट रखे और एक में हम सभी ने अपने ठहरने विश्राम करने का स्थान बनाया। ४ बजे संध्या से अपना-अपना दायित्व सम्भाल लिया। चार भाइयों को नाश्ता हेतु बैठाने, चार को आने वाली बसों, गाड़ियों को रुकवाने, चार को नाश्ता लाने और दो भाइयों को यज्ञ स्थल जाने वालों के मार्गदर्शन का कार्य सौंपा गया। आने वाले भाइयों की संख्या और बस (गाड़ी) नं० रजिस्टर में दर्ज करने की जिम्मेवारी मैंने ली। तीसरे दिन शाम ४ बजे तक नाश्ते के पैकेट समाप्त होने लगा। एक भाई ने भण्डार गृह से आकर मुझे बतलाया-भाई साहब अब नाश्ते का लगभग दो ढाई हजार पैकेट बचे हुए हैं। मैंने राम प्रसाद गुप्ता जी को भेजकर अग्रवाल जी के यहां से ३५ हजार पैकेट और मँगवा लिए।

अगले दिन पुन: पैकेट घटने की सूचना पाकर मैंने गुप्ता जी को आगरा भेज दिया। लगभग ६ बजे शाम भण्डार गृह से दो भाइयों ने आकर बताया कि सौ डेढ़ सौ और पैकेट बचे हैं। उधर गुप्ता जी खाली हाथ लौट आए और बताया कि अग्रवाल भाई साहब ने हमें आगरा बुलाया है। हम ऐसी परिस्थिति के लिए कतई तैयार नहीं थे। नाश्ता समाप्त हो चला है। इतने लोगों को भूखे रखना पड़ेगा, सोचते ही खून सूखने लगा। इतने में भण्डार गृह के दोनों भाई मुझे और राम प्रसाद जी को बुलाकर ले गए ताकि परिस्थिति को हम सही रूप में जान सकें। भण्डार गृह पहुँचे तो वहाँ का दृश्य देखकर हम अवाक रह गए। कमरे में पैकेटों का अंबार लगा था। हम सभी की आँखों में आँसू आ गए। हे गुरुदेव! आपने समय पर लाज रख ली। उसी दिन हमने इस बात को अनुभव किया कि गुरुदेव के काम में कभी साधनों की कमी नहीं रहती।

**प्रस्तुति : परशुराम गुप्ता, पूर्वी जोन, शांतिकुंज ( उत्तराखण्ड )**

# पूरा हुआ
# शक्तिपीठ की स्थापना का संकल्प

पहले मैं विभिन्न आध्यात्मिक विचारों में मत भिन्नता के कारण समझ नहीं पाता था कि किसे सही माना जाए। चमत्कारों की कहानियाँ अलग दुविधा में डालतीं, वैज्ञानिक दृष्टिकोण कहता, ऐसा कैसे संभव है।

द्विविधा से घिरा अंतर्मन किसी गहरे में ऐसा कोई विश्वसनीय आधार खोज रहा था, जिसका आलम्बन लेकर आध्यात्मिक मार्ग पर आगे बढ़ा जा सके। ऐसे में जब अखण्ड ज्योति पत्रिका में वैज्ञानिक अध्यात्म की विलक्षण व्याख्या मिली तो मैं सहज ही आकृष्ट होता चला गया।

पहली बार ९ दिनों का सत्र करने शान्तिकुञ्ज पहुँचा तो ऐसा प्रभावित हुआ कि जीवन दिशा ही पलट गई। फिर तो मैं गुरुदेव का ऐसा भक्त हो गया, लगता कि अपना सब कुछ उनको दे डालूँ, तो भी कम ही है। गुरुदेव को आज तक कितने ही रूपों में देखा- सभी अविस्मरणीय, सभी प्रेरक।

बात उन दिनों की है, जब पटना में शक्तिपीठ बनाने की तैयारियाँ चल रही थीं। संकल्प लिया जाना था। मथुरा से आदरणीय लीलापत शर्मा जी का लिखा हुआ पत्र देकर चित्तरंजन जी को हरिद्वार भेजा गया।

वे शान्तिकुञ्ज पहुँचकर गुरुदेव से मिले। संकल्प की बात सुनते ही गुरुदेव आग बबूला हो उठे। उन्होंने डाटकर कहा- किसने भेजा? डरते हुए चित्तरंजन जी ने मथुरा से लाया हुआ पत्र दिखाया। गुरुदेव उसी तरह फिर बोले- लीलापत कौन है? भाग जा। शक्तिपीठ क्या उसके बाप का है?

उसने लौटकर सारी घटना बताई। मैंने सोचा, मैं ही जाकर देखूँ, हो सकता है उस समय कुछ वैसा कारण हो गया हो। इस बार मैं स्वयं शान्तिकुञ्ज पहुँचा। सबसे पहले जाकर आद. वीरेश्वर उपाध्याय जी से मिला। उनसे सब बातें बताईं और आग्रह किया कि संकल्प के लिए समय निर्धारित कराएँ।

उन्होंने गुरुदेव से भेंट कर संकल्प का समय ले लिया। अगले ही दिन का समय मिला था। सुबह-सुबह तैयार होकर मैं गया। लेकिन गुरुदेव ने मेरी तरफ देखा तक नहीं। मेरे साथ उपाध्याय जी भी थे। मैंने उनकी तरफ देखा। वे भी हैरान थे। काफी समय बीत गया, तो उन्होंने गुरुदेव का ध्यान आकृष्ट कराया-ये संकल्प के लिए आए हैं। गुरुजी ने बिना मेरी ओर देखे ही दो-टूक जवाब दिया-संकल्प नहीं होगा। इतना कहकर वे मौन हो गए।

असमंजस की मन:स्थिति में वापस लौटा। मैंने उपाध्याय जी से पूछा- कैसा टाइम लिया था आपने? वे कहते तो क्या कहते। वे खुद ही हैरत में थे।

मैं समझ नहीं पा रहा था कि अब आगे क्या करूँ। लौट जाऊँ या एक बार फिर प्रयास करके देखूँ। अगर बिना संकल्प किए लौटना पड़ा, तो लौटकर लोगों को

क्या जवाब दूँगा? सच-सच बता भी दूँ, तो जब संकल्प के लिए मना करने का कारण पूछा जाएगा तो क्या कहूँगा? लोग तो यही सोचेंगे कि मेरी ही तरफ से कोई लापरवाही बरती गई होगी।

पूज्य गुरुदेव द्वारा शक्तिपीठ स्थापना के लिए इस कठोरता से मना करने के कारणों तक पहुँचने के लिए मैं बेचैन हो उठा। शुरू से आखिर तक के सभी प्रयासों की समीक्षा की, फिर आत्मविश्लेषण की दृष्टि से अपने आपको टटोला कि शायद मुझ में ही संकल्प की पात्रता न हो, जिसके कारण कार्य में बाधा आ रही हो।

गुरुदेव के क्रोध का कारण मैं हो सकता हूँ। यह सोचकर मेरा अन्तर्मन विचलित हो उठा। मन ही मन उनसे अनुनय विनय करने लगा कि कोई गलती हुई हो तो बता दीजिए। मुझे तो कुछ समझ में नहीं आ रहा है। मुझे बहुत दुःखी देखकर उपाध्याय जी ने समझाया-निराश मत होइए। अभी संकल्प का समय नहीं आया है, बाद में देखा जाएगा। अगले दिन मैं उदास मन से वापस पटना लौट आया।

करीब डेढ़ महीने बाद माताजी की बात से पूज्य गुरुदेव द्वारा संकल्प को कठोरतापूर्वक रोके जाने का रहस्य खुला। मेरे वापस जाने के बाद गुरुदेव ने कहा था कि उस समय संकल्प लेने से मेरे जीवन पर और शक्तिपीठ पर खतरा आ जाता।

मैं समझता हूँ, उस समय विरोध भाव रखने वाले कुछ व्यक्ति स्थानीय स्तर पर इतने अधिक प्रभावशाली थे कि भिड़ने की स्थिति भी बन सकती थी। आधिभौतिक दृष्टि से तो मैं इतना ही देख सका। इसके अलावा जो आधिदैविक और आध्यात्मिक अड़चनें रही होंगी, उनको तो गुरुदेव ही जानें।

**प्रस्तुति : मथेश्वर प्रसाद सिंह**
**आई.ए.एस से.नि. पटना ( बिहार )**

## यज्ञों में सर्वोपरि है ज्ञानयज्ञ

जिस प्रकार स्थूल शरीर की अपेक्षा सूक्ष्म प्राण की शक्ति अधिक मानी जाती है, उसी प्रकार स्थूल यज्ञों की अपेक्षा सूक्ष्म यज्ञ की महत्ता असंख्य गुनी होती है। घी, हवन-सामग्री, समिधा आदि के द्वारा संपन्न होने वाले यज्ञ स्थूल कहलाते हैं और ज्ञानयज्ञ को सूक्ष्म कहा गया है। यों, स्थूल यज्ञों की महिमा भी कम नहीं है, पर ज्ञानयज्ञ तो सर्वोपरि है। गीता में भगवान ने कहा है कि ज्ञान से बढ़कर इस संसार में पवित्र और कुछ नहीं है। निःसंदेह आत्मा को प्रकाश से परिपूर्ण बनाने के लिए ज्ञान ही एकमात्र आधार होता है।

# योगक्षेमं वहाम्यहम्

सन् १९८१ की बात है। हम पतरातु में रह रहे थे। उन दिनों विचार क्रांति अभियान हेतु पदयात्रा व साइकिल यात्रा का दौर चल रहा था। पिताजी ने तय किया हिमालय की ओर साइकिल यात्रा पर जाएँगे। तीन सदस्यों की टोली तैयार हुई। योजना बनी कि पहले हरिद्वार जाकर गुरुजी से आशीर्वाद प्राप्त किया जाए। फिर हिमालय की ओर बढ़ा जाए। यहाँ साइकिल यात्रा के लिए सरकारी अनुमति आवश्यक होती है। तीनों ने एक साथ आवेदन किया, मगर अनुमति मिलने के बाद टोली के अन्य दो सदस्यों ने किन्हीं निजी कारणों से यात्रा स्थगित कर दी। पिताजी की उम्र एवं स्वास्थ्य का विचार कर हमने उनसे आग्रह किया कि वे भी अपनी यात्रा की योजना त्याग दें, पर वे नहीं माने। हमने उन्हें यात्रा स्थगित करने; ट्रेन/कार द्वारा हरिद्वार तक चले जाने आदि अनेक प्रकार के विकल्प सुझाए; पर पिताजी जिद्दी स्वभाव के थे। वे संकल्प कर चुके थे इसलिए रुके नहीं, अकेले ही रवाना हो गए।

यात्रा के आरम्भिक दिनों में वे हर दिन एक पत्र लिखा करते थे जिससे यात्रा का विवरण मिलता रहता था। कहाँ तक पहुँचे इसकी जानकारी रहती थी। कानपुर पहुँचने तक का समाचार मिलता रहा। इसके बाद पत्र आने बंद हो गए। आगे का रास्ता खतरों से भरा हुआ है इसका हमें पता था। पत्र न आने से दुश्चिंता बढ़ने लगी। एक-एक कर ८ दिन बीत गए। रविवार के दिन हम बैठकर बातें कर रहे थे। पत्नी से इसी विषय पर चर्चा हो रही थी। मैंने कहा- जाकर देखना चाहिए। कानपुर से आगे सड़क मार्ग में जाकर आस-पास के लोगों से पूछा जाए, इस तरह के कोई व्यक्ति साइकिल यात्रा करते हुए आए थे क्या विचार क्रांति अभियान के तहत? अगर उधर से गुज़रे होंगे तो वहाँ के लोगों को अवश्य ही पता होगा।

इस विषय पर पत्नी से बातचीत चल रही थी कि अचानक मेरी आँखें बंद हो गईं। कोई ४५ सेकण्ड का समय रहा होगा, जिसमें मैं ध्यान की उस गहराई में पहुँच गया; जहाँ घर, आस-पास की वस्तुएँ, सारे लोग एकबारगी अनुभव की सीमा से परे चले गए। देखा- सामने गुरुदेव खड़े हैं। वे कह रहे हैं- बेटा, श्रीकांत (पिताजी का नाम) हरिद्वार पहुँच गया है वह सुरक्षित है। चिन्ता मत करो। वह यहाँ ८ दिन एकान्त में रहेगा, फिर हिमालय की ओर रवाना होगा। आँखें खुलीं तो फिर से पहले का परिवेश सामने था, मगर पहले की वह दुश्चिंता जाती रही।

अगले दिन पिताजी का पत्र मिला। पत्र में वही बातें लिखी थीं- 'गुरुजी ने कहा है कि ८ दिन हरिद्वार में रहकर फिर आगे की यात्रा पर निकलना'। मेरे ध्यान में आकर दुश्चिंतामुक्त करना गुरुदेव ने क्यों आवश्यक समझा होगा- सोचने लगा तो समझ में आया, भावावेश में आकर यदि मैं पिताजी को ढूँढ़ने के लिए निकल पड़ा होता तो स्वयं के लिए ही खतरे मोल लेता।

**प्रस्तुति : ए.पी. सिंह, विकास पुरी ( दिल्ली )**

# प्रसाद में छिपा था पोलियो का इलाज

मैं निजी कार्य से हजारीबाग गया था। रात्रि विश्राम के लिए किसी जगह की तलाश कर रहा था। इसी बीच एक भाई ने कहा कि यहाँ से थोड़ी ही दूर अन्नदा विद्यालय में गायत्री यज्ञ चल रहा है, वहीं पर आप चले जाइए। वहाँ पर आपके रहने, खाने-पीने की व्यवस्था भी हो जाएगी। मेरे पास और कोई चारा भी नहीं था। यह बात मुझे जँच गई। सोचा धार्मिक कार्यक्रम है, रहने खाने के साथ सत्संग का भी लाभ अनायास मिल जाएगा।

यही सोच कर मैं यज्ञ स्थल पर गया। मुझे वहाँ की व्यवस्था देखकर बड़ी हैरत हुई। मैं, सामान्य क्रम में जो आज तक होता रहा है, उसी हिसाब से सोच रहा था। किन्तु वहाँ का अनुशासित कार्यक्रम देखकर काफी प्रभावित हुआ। धर्म की गूढ़ बातें बड़े ही सहज ढंग से हमारे हृदय में उतरती चली गईं। सत्संग से लगा मेरी वर्षों की प्यास बुझ गई। गुरु का जीवन में क्या स्थान है, मुझे इसका ज्ञान नहीं था। इस सत्संग में मैंने गुरु के महत्व को जाना।

इसका प्रभाव यह हुआ कि दूसरे दिन ही दिनांक ११ मई १९८७ को मैंने दीक्षा ले ली। इस प्रकार धीरे-धीरे गायत्री मिशन से जुड़ता चला गया। मेरी श्रद्धा दिनोंदिन मिशन एवं गुरु जी के प्रति बढ़ती रही। मेरा छोटा पुत्र नरेश का ढाई वर्ष की उम्र से ही बायाँ पैर पोलियो ग्रस्त हो गया था। अपनी स्थिति के अनुरूप मैंने उसका बहुत इलाज कराया, किन्तु कोई लाभ नहीं मिला। मैंने राँची के डॉक्टर श्री टी० बी० प्रसाद को दिखाया तो उन्होंने मुझे समझाया कि मैं इसकी नस काट कर जोड़ सकता हूँ, परन्तु ठीक होगा कि नहीं यह गारण्टी नहीं है। आप आर्थिक दृष्टि से बहुत कमजोर दिखते हैं इसलिए इसे ईश्वर पर ही छोड़ दीजिए।

इस तरह धीरे-धीरे उसकी उम्र १३-१४ वर्ष की हो गई और उसका पैर बेकार होता चला गया। अब तो उसे बिना सहारा के चलना भी दूभर होने लगा। उसे मुझे खुद साइकिल से विद्यालय पहुँचाना तथा ले आना पड़ता था, जो बहुत मुश्किल काम था। इसी बीच करीब १९९० में गायत्री परिवार के एक परिजन मुझे मिले। उन्होंने मुझे सलाह दी कि चूँकि आप वंदनीया माताजी से दीक्षित हैं इसलिए अपने बच्चे को उन्हीं के पास ले जाएँ। उनके आशीर्वाद से सब कुछ ठीक हो जाएगा। उनकी यह बात मुझे बहुत अच्छी लगी।

इसके बाद मैंने शान्तिकुञ्ज पत्र लिखकर स्वीकृति मँगाकर जून १९९१ में एक माह का सत्र करने अपने परिवार तथा कुछ अन्य लोगों के साथ शान्तिकुञ्ज पहुँच गया। माताजी से मिलने के क्रम में मैं, परिवार के लोग तथा अन्य लोग भी थे। माताजी को इस बच्चे को दिखाया तथा प्रार्थना की कि माता जी इस बच्चे का जीवन कैसे बीतेगा? माताजी ने बच्चे को बड़ी गौर से देखा तथा प्रसाद के

रूप में हलवा दिया और आश्वासन दिया कि जा तेरा बेटा ठीक हो जाएगा। इसके पश्चात् सत्र समाप्त हो गया। सभी लोग अपने-अपने घर चले गए। वापस आने के बाद एक दिन उमेश ने नरेश से कहा चलो नरेश तुम्हें साइकिल सिखाएँगे। दोनों भाई साइकिल सीखने गए। कुछ देर बाद हम सबने देखा कि नरेश खुद चलाकर आ रहा है। अचानक देखने पर विश्वास नहीं हुआ कि यह वही बच्चा है जो अभी कुछ दिन पहले तक बैठने को तरसता था, जो बड़ी मुश्किल से साइकिल पर बैठकर स्कूल जाता था आज स्वयं साइकिल चलाकर आ रहा है। हम लोग खुशी से फूले नहीं समा रहे थे। सभी की आँखें खुशी से गीली हो गई थीं। यह घटना क्षेत्र में चर्चा का विषय बन गई।

माँ के इस दैवीय अनुदान को पाकर हम सपरिवार मिशन से पूर्ण रूप से जुड़ गए। इस तरह से हमने उमेश को सदा के लिए शांतिकुंज को समर्पित कर दिया। मैं गुरुदेव को भगवान शिव एवं माताजी को आद्यशक्ति पार्वती मानता हूँ। घर में सिर्फ पूज्य गुरुदेव, माताजी एवं गायत्री की ही पूजा होती है।

**- प्रस्तुति : हरि यादव, गिरीडीह ( झारखण्ड )**

## अध्यात्म का मर्म

**( प.पूज्य गुरुदेव से शिष्यों की वार्ता का एक अंश )**

"आध्यात्मिक जीवन-पथ पर आगे बढ़ना और बढ़ते रहना दुःसाहसिक लोगों का काम है। लोग बातें करते हैं, परंतु जिंदगी जीने की बारी आती है तो बहानेबाजी के भोंडे नाटक करने लगते हैं।"

"भगवान तो तुम्हारे भीतर उतरने के लिए तैयार है, परंतु तुम्हारा अहं उसे घुसने दे तब न!" अंतस् की करुणा आँसू बनकर आँखों से छलक उठी और भर्राए गले से पूज्य गुरुदेव कहने लगे-"तुम लोग मेरे बच्चे हो। मैं तुम सबको बहुत-बहुत-बहुत ज्यादा प्यार करता हूँ। मैं तो बस, केवल इतना चाहता हूँ कि तुममें से किसी का यह मनुष्य जीवन बरबाद न होने पाए। तुम सब वहाँ तक पहुँच सको, जहाँ तक मैं पहुँच पाया हूँ। मेरी चाहत है कि विगत अनेक जन्मों से चले आ रहे इस काफिले का कोई भी सदस्य बिछड़ने न पाए।" पाँच-सात मिनट इधर-उधर टहलकर वे फिर से उस चारपाई पर बैठ गए और अपने ही दाएँ हाथ से बाएँ हाथ की त्वचा पकड़ते हुए बोले-"जानते हो कि माया क्या है? जानना चाहते हो कि भ्रम कहाँ से पैदा होते हैं? जानना चाहोगे कि वासनाएँ कहाँ वास करती हैं? तो सुनो! सब कुछ इस चौथाई मिलीमीटर की खाल का कमाल है। यही है माया, यही है भ्रमों का पिटारा, इसी में है वासनाओं का विष।"

# जाँच रिपोर्ट से चिकित्सक भी चकित

मुझे सन् १९८४ में शांतिकुञ्ज हरिद्वार में विशेष सत्र के आयोजन में भाग लेने का मौका मिला और उसी दौरान शांतिकुञ्ज परिसर में ही गुरुजी एवं माताजी के दर्शनोपरांत गुरुदीक्षा ग्रहण की। तब से मैं और मेरी धर्मपत्नी गुरुदेव के सत्साहित्य का निरंतर अध्ययन करते रहे और उनके बताए मार्ग पर बिल्कुल निश्छल भाव से, श्रद्धापूर्वक यथासंभव चलने का प्रयत्न करते रहे हैं। उस असीम सत्ता से जुड़ने के बाद जीवन में छोटी-बड़ी कई ऐसी घटनाएँ घटीं, जहाँ हम लोगों ने स्पष्टतः गुरुजी-माताजी की कृपा को महसूस किया। हमारी श्रद्धा और भी प्रगाढ़ होती चली गई। चार भाइयों के परिवार से बना हमारा बड़ा परिवार भी इष्ट सत्ता से जुड़ता चला गया। इस बड़े परिवार की ही एक घटना है, जिसे यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ :-

बात अप्रैल १९८९ की है। मेरे बड़े भाई की एक लड़की विनीता, जो उस समय मात्र ग्यारह वर्ष की थी। उसे घुटने के नीचे असह्य दर्द प्रारंभ हुआ और उस दर्द का आवेग बढ़ता ही चला गया। स्थानीय हड्डी रोग विशेषज्ञ को दिखाया गया, तो उन्होंने अस्थि कैंसर की संभावना बताई। पूरा परिवार यह बात सुनकर त्राहिमाम कर उठा। हमलोग उसे लेकर पटना के प्रसिद्ध हड्डी रोग विशेषज्ञ को यहाँ पहुँचे। उन्होंने ऑपरेशन कर उसकी हड्डी का कुछ हिस्सा दो अलग-अलग जाँच घरों में जाँच के लिए भेज दिया। उन्होंने भी कह दिया कि यह कैंसर ही है; और अगर इसकी जान बचानी है तो टाटा कैंसर इंस्टीट्यूट में ले जाकर इसका पैर कटवा दीजिए।

उसकी देख-रेख मैं और मेरी पत्नी ही कर रहे थे। हम लोग बिल्कुल निराश हो गए और गुरुजी-माताजी का स्मरण करने लगे। हम दोनों में से एक गायत्री शक्तिपीठ, पटना में गायत्री मंत्र तथा महामृत्युंजय मंत्र का जप करता तो दूसरा उसकी देखरेख करता। यह सिलसिला बारी-बारी से जाँच रिपोर्ट आने तक निरंतर चलता रहा। इस बीच डॉक्टर लगातार कहते रहे कि आप पैसा बर्बाद न करें इसका पैर कटवा दें। क्योंकि इलाज से रोग दूर होने की संभावना कम ही है पर जो समय उसमें लगाना है उससे रोग के फैल जाने का डर है। मैं सोचने लगा कि गुरुजी सर्वज्ञ और अन्तर्यामी हैं, हमारी पुकार जरूर सुनेंगे। मैंने निर्णय कर लिया कि अगर इसके पैर काटने की बारी आएगी तो इसका जीवन बर्बाद करने के बजाय इसे शान्तिकुञ्ज में गुरुजी की शरण में रखकर चले आएँगे। हम लोग काफी शोकमग्न और विचलित थे। दिन-रात पूरा परिवार गुरुजी-माताजी पर ध्यान लगाए हुए था।

इसी दौरान आश्चर्यजनक तरीके से उसका दर्द धीरे-धीरे कम होने लगा और वह काफी राहत महसूस करने लगी। कुछ दिनों के बाद एक जगह से जाँच रिपोर्ट आ गई। यह रिपोर्ट भी आश्चर्यजनक थी। रिपोर्ट में कैंसर का नामोनिशान तक नहीं था। अन्य किसी बीमारी का भी उल्लेख नहीं था। डॉक्टर रिपोर्ट पढ़ते ही

पूरे गुस्से में आ गए और रिपोर्ट को जमीन पर फेंक दिया यह बोलते हुए कि ऐसा असंभव है। कहीं न कहीं जाँच में गलती हुई है, दूसरे रिपोर्ट का इंतजार कीजिए। एक दिन बाद दूसरी रिपोर्ट आने पर चिकित्सक उसे काफी उत्सुकता के साथ पढ़ने लगे पर यह क्या! यहाँ भी कैंसर या किसी अन्य बीमारी का भी उल्लेख नहीं किया गया था। डॉक्टर आश्चर्य में पड़ गए। इसके बावजूद उन्होंने कहा कि मेरा अनुभव झूठा हो नहीं सकता, उसे कैंसर ही है। परन्तु मुझे विश्वास हो चला था कि यह हमारे गुरुदेव की कृपा है। हमारी प्रार्थना सुन ली गई है। यह सोचते हुए मैं उसे घर ले आया। धीरे-धीरे वह स्वस्थ हो गई और आज वह एक खुशहाल जीवन व्यतीत कर रही है तथा एक सरकारी विद्यालय में शिक्षिका के पद पर कार्यरत है।

**प्रस्तुति : वीरेन्द्र कुमार सिंह, वैशाली ( बिहार )**

## कुछ सीखें

समय का प्रवाह वैज्ञानिक प्रगति के साथ प्रत्यक्षवाद का समर्थक होता जा रहा है। सच तो यह है कि जो लोग धर्म और अध्यात्म को चर्चा-प्रसंगों में मान्यता देते हैं, वे भी निजी जीवन में प्रायः वैसा ही आचरण करते देखे जाते हैं जैसे कि अधर्मी और नास्तिक करते हैं। धर्मोपदेशक से लेकर धर्मध्वजियों के निजी जीवन का निरीक्षण-परीक्षण करने पर प्रतीत होता है कि अधिकांश लोग उस स्वार्थपरता को ही अपनाए रहते हैं जो अधार्मिकता की परिधि में आती है। आडम्बर, पाखण्ड और प्रपंच एक प्रकार से प्रच्छन्न नास्तिकता ही है, अन्यथा जो आस्तिकता और धार्मिकता की महत्ता भी बखानते हैं, उन्हें स्वयं भी भीतर और बाहर से एकरस होना ही चाहिए था। जब उनकी स्थिति आडम्बर भरी होती दीखती है, तो प्रतीत होता है कि प्रत्यक्षवादी नास्तिकता ही नहीं, प्रच्छन्न धर्माडम्बर भी लगभग उसी मान्यता को अपनाए हुए हैं। लोगों की आँखों में धूल झोंकने या उनसे अनुचित लाभ उठाने के लिए ही धर्म का ढकोसला गले से बाँधा जा रहा है। ईश्वर को भी वे न्यायकारी-सर्वव्यापी नहीं मानते। यदि ऐसा होता तो धार्मिकता की वकालत करने वालों में से कोई भी परोक्ष रूप से अवांछनीयता अपनाए रहने के लिए तैयार नहीं होता। तथाकथित धार्मिक और खुलकर इंकार करने वाले नास्तिक लगभग एक ही स्तर के बन जाते हैं।

- परिवर्तन के महान् क्षण (अन्तिम पुस्तक) पृष्ठ-६

# गायत्री महाविज्ञान है अवसाद की औषधि

१९७० के दशक में हमारा परिवार गाँव का एक आदर्श परिवार था। पढ़ लिखकर मैं सन् १९७९ ई. में सरकारी सर्विस में आया। पढ़ाई के दिनों से ही मैं अपनी कमाई परिवार के सभी सदस्यों पर खर्च करने के मीठे सपने देखता रहा था, इसलिए मामूली जेब खर्च को छोड़कर अपना पूरा वेतन घर भेजने लगा। उन दिनों मेरी खूब आवभगत होती, कमाऊ पूत जो था। मैं स्वयं को धन्य मानता कि मैंने अपने परिवार का सारा कर्ज उतार दिया है और सभी सदस्यों की छोटी-बड़ी जरूरतें पूरी करता जा रहा हूँ।

धीरे-धीरे परिवार बढ़ता गया। पहले पत्नी आयी, फिर एक-एक कर तीन बच्चियों की किलकारियों से घर चहक उठा। किन्तु फिर भी मैं पहले की तरह ही परिवार वालों के काम आता रहा।

पत्नी कभी कभार इस बात को लेकर शंका व्यक्त करती रहती थी कि जब बेटियाँ बड़ी हो जाएँगी, तो उनका घर बसाने में कोई भी हमारा साथ न देगा। तब मैं उन्हें झिड़क देता था। कुछ वर्षों बाद बड़ी बेटी की शादी तय हुई, तो शादी के खर्च की बात को लेकर घर में हंगामा खड़ा हो गया। सभी ने एक-दूसरे के सुर में सुर मिलाते हुए कहा-इतना खर्च हम कहाँ से करेंगे, जमा पूँजी तो कुछ भी नहीं है।

जैसे-तैसे बिटिया का विवाह तो संपन्न हो गया लेकिन बाहर से आए मेहमानों के एक-एक कर चले जाने के बाद घर में बैठक हुई और भाइयों ने कहा कि हमने आपके हिस्से की जमीन बेचकर यह विवाह सम्पन्न कराया है अतः आपका अब गाँव में कुछ नहीं बचा। भाइयों की बात सुनकर मैं सकते में आ गया। मैंने तो सपने में भी नहीं सोचा था कि जिस परिवार की बेहतरी के लिये हमने पत्नी तक की बात नहीं सुनी, उसी परिवार के सदस्य हमें हिस्सेदारी से वंचित कर देंगे। किससे क्या कहा जाए, कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

पत्नी का सामना करना मेरे लिए कठिन हो गया था। उसने तो कई बार टोका था-सम्भल कर खर्च कीजिए न, तीन-तीन बेटियों की भी जिम्मेदारियाँ आपके ऊपर हैं। उनका भी तो आप पर कुछ अधिकार है आदि-आदि। उसकी इन बातों को मैंने कभी महत्त्व नहीं दिया। पर आज जब उसकी बातें सच साबित हुईं तो मेरे पास सिवाय पछताने के और बचा ही क्या था?

इसी बीच बड़ी बेटी ससुराल में न जाने किन परिस्थितियों का शिकार हुई कि आखिरकार दुनिया ही छोड़कर चली गई। बदली हुई विषम परिस्थितियों पर दिन-रात सोच-सोच कर मैं डिप्रेशन में चला गया। खाना-पीना-सोना सब कुछ अनियमित हो गया। इसका स्वास्थ्य पर असर तो पड़ना ही था। पत्नी बार-बार समझाती रही कि जो हो गया, उसे भूल जाएँ। नए सिरे से जिन्दगी को सम्भालें, सब ठीक हो जाएगा,

पर मैं अन्दर से इतना टूट चुका था कि उसकी इन बातों का मुझ पर कोई असर नहीं होता। मेरे दिमाग में तो दिन-रात एक ही बात चक्कर काटती रहती कि काश हमने परिवार पर अपनी समस्त पूँजी न लुटाई होती? अवसाद इस सीमा तक पहुँच गया कि नौकरी से छुट्टी लेनी पड़ी। किसी प्रकार समय बीतने लगा, और धीरे-धीरे पूरा साल निकल गया। गृहस्थी का खर्च कैसे चलता था, मुझे कुछ नहीं मालूम।

सहधर्मिणी ने खूब साथ निभाया। कैसे भी, सिलाई बुनाई कर, बच्चों की परवरिश की। साथ ही दिन-रात मुझे अपने पहरे में रखती। बाद के दिनों में तो मैं दिन-रात कभी भी घर से निकल कर कहीं भी चला जाता। मुझे संसार से, स्वयं अपने जीवन से वितृष्णा हो गई थी। लगता था संसार के सारे व्यक्ति स्वार्थी, लोभी, लालची हैं। इनके साथ क्या जीना?

मैं विचारों से इतना संकीर्ण हो गया था कि बच्चों की ममता में भी मुझे स्वार्थ की बू आने लगी थी। सबको पराया मान कर स्वयं को समाप्त कर देने की मन:स्थिति आ गई थी कि इसी दौरान एक चमत्कार हुआ।

कहीं से मुझे गायत्री यज्ञ का एक पर्चा मिला। उसमें लिखा था-जीवन से निराश, हताश व्यक्ति भी दुगुने उत्साह से जीवन जीने हेतु घीयामंडी, मथुरा से सम्पर्क कर नवजीवन पाएँ व यहाँ से जीवनोपयोगी पुस्तकें मँगा कर पढ़ें।

इसे पढ़कर मेरे मन में आशा की नई किरण फूट पड़ी। मैंने वहाँ से एक पुस्तक मँगाई। उसमें लिखा था-महान व्यक्ति सदैव अकेले ही चले हैं। जो किसी दूसरे के आधार पर खड़ा होता है, वह तो निश्चित रूप से गिरता है, भला कभी नींव रहित मकान भी स्थाई हो सकता है? आदि-आदि।

इन बातों से मेरा अवसाद मिटने लगा। थोड़ा बहुत आत्मविश्वास लौटा तो लगा कि जीने की कोशिश तो कर ही सकता हूँ। अगले दो दिनों में मैंने गायत्री महाविज्ञान के तीनों भाग पढ़े तो मन विश्वास से भर उठा। शान्तिकुञ्ज जाने की व्याकुलता बढ़ी। पड़ोस के लोगों से गिड़गिड़ाकर कहने लगा कि कोई कृपा करके मुझे शान्तिकुञ्ज पहुँचा दे, पर सभी मुझे पागल समझकर मेरी बात टाल दिया करते थे।

अन्त में एक भोले पड़ोसी को मुझ पर तरस आया और उसने मुझे पास के गाँव से शांतिकुंज जा रहे एक व्यक्ति के साथ लगा दिया। शान्तिकुञ्ज पहुँचकर कुछ समझ में नहीं आया कि मैं क्या करूँ। किसी से कुछ पूछने का साहस भी नहीं हो रहा था। आत्मबल नाम की कोई चीज तो रह ही नहीं गई थी।

अन्तत: मैं माताजी व पूज्य गुरुदेव की समाधि के आगे बैठ गया और खूब देर तक रोता रहा। अपने हृदय में विराजमान ईश्वर से मन की व्यथा सुनाकर उनसे प्रार्थना करता रहा कि मुसीबतों के इस दौर से मुझे उबार लें। रो-रोकर मेरा मन बहुत हल्का हो चुका था। वहाँ का सुरम्य वातावरण मुझे भाने लगा। तीन दिन कैसे कट गए मुझे पता ही नहीं चला।

घर वापस आने पर नहा धोकर पूजा कक्ष में गया और पूज्य गुरुदेव का ध्यान करने लगा। अचानक पूरे कमरे में रोशनी की बाढ़ सी आ गई। मैंने देखा

कि पूज्य गुरुदेव सामने खड़े मुस्करा रहे हैं। मुझे उनकी आवाज साफ-साफ सुनाई पड़ी।

गुरुदेव कह रहे थे-चिन्ता क्यों करता है- तेरी सभी समस्याओं का निवारण धीरे-धीरे होगा, प्रयत्न कर। मैं हमेशा तुम्हारा साथ दूँगा। पूज्य गुरुदेव के इस आश्वासन से मेरा खोया हुआ मनोबल लौट आया। जिन परिस्थितियों से मैं दूर भागना चाहता था, अब मैंने उन्हीं से लड़ना शुरू कर दिया था। पत्नी और बच्चों का जो प्रेमपूर्ण व्यवहार मुझे मोह माया का बंधन लगने लगा था, वही मुझे ईश्वर का अनुदान लगने लगा।

घर के लोगों द्वारा उपकार के बदले में मुझे जो तिरस्कार मिला, उसे मैं अब ईश्वर द्वारा ली गई परीक्षा मानने लगा था। यह बात मेरी समझ में आ चुकी थी कि परिवार के लोगों के लिए इतना कुछ करके मैंने उन पर कोई उपकार नहीं किया, बल्कि अपना ही ऋण चुकाया है। धीरे-धीरे मेरे परिवार की गाड़ी पुनः पटरी पर आ गई। वैसे तो मेरी समस्याओं के निदान में कुछ वक्त लग गया, लेकिन उन समस्याओं से लड़ने में मैं जहाँ भी लड़खड़ाने लगता था, किसी न किसी रूप में पूज्य गुरुदेव पास आकर मुझे संभाल ही लेते थे।

आज मैं समृद्धि की जिस सीढ़ी पर हूँ, वहाँ पहुँचना गुरुसत्ता के अनुदान के बिना कतई संभव नहीं था।

**प्रस्तुतिः पारस नाथ तिवारी, राँची ( झारखण्ड )**

## श्रद्धा का तत्वदर्शन

मानव जीवन को किसी निर्दिष्ट ढाँचे में ढाल देने वाली सबसे प्रबल एवं उच्च स्तरीय शक्ति का नाम श्रद्धा है। यह अन्तःकरण की दिव्यभूमि में उत्पन्न होकर समस्त जीवन को हरियाली से सजा देती है। श्रेष्ठता के प्रति अटूट आस्था का नाम ही श्रद्धा है। यह जब सिद्धान्त एवं व्यवहार में उतरती है, तो उसे निष्ठा कहते हैं। जब वही आत्मा के स्वरूप, जीवन-दर्शन एवं ईश्वर-भक्ति के क्षेत्र में प्रवेश करती है, तो श्रद्धा कहलाती है। ईश्वर प्राप्ति के लिए, आत्मकल्याण के लिए इस शक्ति का आलम्बन एवं उभार आवश्यक है। रामायण में श्रद्धा को भवानी और विश्वास को शंकर की उपमा देते हुए कहा गया है कि इनकी सहायता के बिना अन्तरात्मा में बैठा हुआ परमात्मा किसी को मिल नहीं सकता।

# तुम मेरा काम करो, हम तुम्हारा काम करेंगे

मेरी पत्नी को प्राय: पेट में दर्द बना रहता था। उस समय मैं बिहार में सरकारी नौकरी कर रहा था। घटना सन् १९९० की है। एक दिन अचानक पत्नी के पेट में दर्द उठा, दर्द इतना असहनीय था कि घर के सभी लोग परेशान हो उठे। मैं उस समय ऑफिस में था। मेरा नाती घबराया हुआ मेरे पास आया और मुझसे बताया कि नानी की तबीयत अचानक बहुत खराब हो गई है। आप जल्दी चलिए। मैं तुरन्त भागकर घर पहुँचा। पत्नी को लाकर अस्पताल में भर्ती करवा दिया। अस्पताल में दवा इलाज बराबर चलता रहा, लेकिन कोई राहत नहीं मिल रही थी। तीन दिन के बाद मैंने डॉक्टर से पत्नी को डिस्चार्ज करने की पेशकश की।

चूँकि सन् १९९० के श्रद्धांजलि समारोह में मुझे हरिद्वार जाना था। रिजर्वेशन पहले से ही करवा रखा था। इस वजह से मैं बहुत परेशान था कि पत्नी का इलाज कराऊँ या हरिद्वार जाऊँ। पशोपेश की स्थिति में दिन बीतते रहे और अन्तत: वह दिन भी आ पहुँचा, जिस दिन मेरी ट्रेन जालियांवाला बाग से हरिद्वार के लिए थी। मैं बहुत सोच में पड़ गया था कि क्या करूँ। तभी याद आया, गुरुदेव माता जी के आश्वासन तुम्हारे घर-परिवार के कुशलक्षेम का हम ध्यान रखेंगे, तुम मेरा काम करो, हम तुम्हारा काम करेंगे। मैं जिनकी शरण में हूँ वे सर्वसमर्थ हैं इस बात का संज्ञान था फिर भी असमंजस की स्थिति ऐसी थी कि कुछ निर्णय नहीं कर पा रहा था।

अन्तत: निर्णय भवितव्य पर छोड़कर मैं वंदनीया माता जी का ध्यान करने बैठ गया। द्रौपदी, ग्राह-गजराज, ध्रुव-प्रह्लाद, सुदामा जैसे अनेकों उदाहरण चलचित्र की भाँति मस्तिष्क में उभरते रहे। ध्यान से उठा, तो हमारी बुद्धि निश्चयात्मक हो चुकी थी। मैंने अपनी पत्नी से बड़े विश्वास भरे शब्दों में कहा कि अब तुम्हारा सब रोग सामान्य हो जायेगा। मैं माताजी से तुम्हारे लिये प्रार्थना करूँगा। उन्होंने सहर्ष स्वीकृति प्रदान की। मैंने तुरन्त सामान उठाया तथा स्टेशन की ओर चल दिया।

दूसरे दिन हरिद्वार पहुँचकर जब माताजी से मिला तो पत्नी के बारे में सारी बातें बताईं। माताजी ने पत्नी का नाम तथा रोग के बारे में लिखकर देने को कहा और बोलीं सब ठीक हो जाएगा। इसके बाद मैं श्रद्धांजलि समारोह के कार्यक्रमों में इस तरह तन-मन से रम गया कि घर परिवार का फिर ध्यान ही नहीं आया। कार्यक्रम समाप्त हुआ तो मैं घर वापस आने पर पत्नी से दर्द के बारे में पूछा तो वह बोली कि आपके जाने के बाद से न जाने दर्द कहाँ चला गया। आज लगभग २१ वर्ष बीत गए लेकिन अब तक वह बिल्कुल ठीक है, दर्द की कोई शिकायत नहीं है। इस घटना से मैं इस तरह प्रभावित हुआ कि मिशन के प्रति समर्पित हो गया तथा पूज्यवर की अपेक्षाओं के अनुरूप आत्म निर्माण और लोक कल्याण के कार्यों में निरंतर लगा रहता हूँ। आज भी इसी सेवा में समर्पित हूँ।

**प्रस्तुति : बालेश्वर प्रसाद, पूर्वी सिंहभूम ( झारखण्ड )**

# आकाश में खड़ा था अदृश्य गोवर्धन?

घटना २४ दिसम्बर २०१० से २ जनवरी २०११ के बीच की है। अहमदाबाद के सोला रोड पर पारस नगर के पास के ग्राउण्ड में गायत्री शक्तिपीठ शाहीबाग द्वारा एक विशाल पुस्तक मेले का आयोजन किया गया।

देव संस्कृति विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्रद्धेय डॉ. साहब ने मेले की भव्यता देख कर कहा कि उन्होंने अपने जीवन में ऐसा विशाल पुस्तक मेला दूसरा नहीं देखा।

इस मेले में परम पूज्य गुरुदेव की ३२०० पुस्तकों में से २८०० पुस्तकों की प्रदर्शनी लगी थी। इसके अतिरिक्त १३२ स्टॉलों पर सवा करोड़ रुपये मूल्य की पुस्तकें विक्रय के लिए लगी थीं। इन स्टॉलों पर दस हजार व्यक्ति एक साथ खड़े होकर साहित्य खरीद सकते थे। पुस्तक मेला के मण्डप के विस्तार का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता था कि इसमें १५,००० व्यक्तियों के एक साथ बैठने की व्यवस्था भी की गई थी। साथ ही, विशिष्ट अतिथियों के लिए सभागार तथा वाचनालय भी बनाए गए थे। पूरा मण्डप बारीक चमकीले कपड़े से बना था, जिससे उसकी सुन्दरता अवर्णनीय हो गई थी।

प्रतिदिन सुबह नौ बजे से रात के दस बजे तक मेले में प्रतिनिधियों का ताँता लगा रहता था। एक स्टॉल पर दस कार्यकर्त्ता पुस्तक विक्रय के कार्य में संलग्न रहते थे। इस प्रकार व्यवस्था सम्बन्धी अन्य कार्यों में संलग्न व्यक्तियों को लेकर लगभग १,५०० कार्यकर्त्ता दो अलग-अलग पालियों में आते थे।

बात २८ दिसम्बर की रात की है। रोज की भाँति दूसरी पाली के १,५०० कार्यकर्त्ताओं ने रात के दस बजे अपना-अपना काम समेटा और भोजनोपरांत घर को चले। दूर-दराज से आने वाले कार्यकर्त्ताओं के लिए वाहन की व्यवस्था की गई थी। फिर भी पंडाल की किताबों को व्यवस्थित करने के बाद घर पहुँचते-पहुँचते उन्हें रात के बारह बज जाया करते थे। उस रात भी दिन भर के थके-माँदे ये सभी कार्यकर्त्ता घर पहुँचते ही गहरी नींद में सो गए।

मेला आयोजकों में मैं भी शामिल था। इसलिए सभी कुछ व्यवस्थित कर अंतिम टोली के साथ मैं घर के लिए चला। दिनभर की थकावट के कारण बिस्तर पर जाते ही गहरी नींद में सो गया। अचानक रात के डेढ़ बजे मेरी नींद टूटी। बाहर जाकर देखा- आसमान में गहरे बादल छाए हुए थे। मौसम का मिजाज देख मुझे काठ मार गया। मैं जडवत खड़ा था। अचानक बारिश की कुछ बूदें मेरी हथेली पर आ गिरीं। घबराकर जैसे चेतना पूरी तरह सजग हो उठी। तेज बारिश हुई, तो झीने कपड़े की छत

के नीचे रखी हुई सवा करोड़ मूल्य की अनूठी पुस्तकों का क्या होगा। मैं तेजी से घर के अन्दर आया और पुस्तक मेला के पास में रह रहे परिजन, ट्रस्टी श्री वी.पी. सिन्हा को फोन करके जगाया।

वस्तुस्थिति जानकर सिन्हा जी काँप उठे। उन्होंने समर्पित युवा कार्यकर्त्ता श्री हेमराज त्रिवेदी को फोन मिलाया। सुबह से देर रात तक की भाग दौड़ से थक कर त्रिवेदी जी बेसुध सोए पड़े थे। बार-बार फोन मिलाने पर आखिरकार फोन की घंटी ने उन्हें जगा ही दिया। स्थिति की विकटता को समझते ही वे तेजी से हरकत में आए। आसपास के सौ से अधिक लोगों को फोन मिलाकर कहा कि वे सभी तुरंत पुस्तक मेला कम्पाउण्ड में पहुँचें।

अब तक मूसलाधार वर्षा होने लगी थी। वर्षा में भागे-भागे आसपास के आठ-दस युवकों को लेकर अपने वाहन से मेला स्थल पर पहुँचे। गाड़ी रोक कर हम सभी तेजी से भाग कर पंडाल में आये और भोजनालय तथा इधर-उधर से प्लास्टिक शीट उठा कर पुस्तकों को ढकने लगे। वहाँ पर उपलब्ध प्लास्टिक की चादरों से किसी तरह आधी पुस्तकें ढकी जा सकीं। शेष आधी पुस्तकों के लिए क्या किया जाय-इस चिंता में जब हमने इधर-उधर नजर दौड़ाई, देखा कि जिस पंडाल के नीचे हम खड़े हैं उस पंडाल पर पानी की एक बूँद भी नहीं पड़ी है।

सामने की सड़क के उस पार मूसलाधार वर्षा हो रही है। मुख्य ट्रस्टी बहिन दीना को भी फोन करके वस्तुस्थिति की जानकारी दी गई थी। जब उन्हें इस प्राकृतिक प्रकोप से बचने का कोई उपाय नहीं सूझा, तब वह परम पूज्य गुरुदेव का ध्यान करके इन्द्रदेव के प्रकोप से रक्षा करने की प्रार्थना करने लगीं।

गुरुसत्ता ने उनकी प्रार्थना सुनी। उनके द्वारा अनमोल पुस्तकों के भंडार को बचाया गया, ठीक वैसे ही जैसे गोवर्द्धन की आड़ में गोकुल की रक्षा हुई थी। पंडाल के पीछे की ओर इंजीनियरिंग कॉलेज के पास के पूरे क्षेत्र में बादल गरज-गरज कर बरस रहा है। उधर पुस्तक मेला के नीचे पण्डाल के नीचे सारी देव प्रतिमाएँ पूरी तरह सुरक्षित हैं। एक-एक कर सौ से अधिक युवा कार्यकर्त्ता एकत्र हो चुके थे। पंडाल को पूरी तरह सुरक्षित देखकर भी उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। वे अंधों की तरह टटोल-टटोल कर काउन्टर पर सजी हुई किताबों को देख रहे थे।

सारी की सारी किताबें पूरी तरह से सूखी और सुरक्षित थीं। महाकाल के अवतार की इस अनिर्वचनीय अनुकम्पा से हम सभी अभिभूत थे। एक करोड़ से भी अधिक के निश्चित नुकसान से बच जाने की खुशी हमसे सम्हाले नहीं सम्हल रही थी। सभी की आँखों में खुशी के आँसू तैरने लगे थे।

**- प्रस्तुतिः एस. के. पाण्डेय, आरा ( बिहार )**

# टूटे हुए हाथ से दी गई परीक्षा

१३ दिसम्बर २०१०ई. की बात है। बी.एससी. के प्रथम सेमेस्टर की मेरी परीक्षा चल रही थी। सभी पेपर अच्छे जा रहे थे। बस अंतिम तीन पेपर बचे थे। अगले दिन के पेपर की तैयारी चल रही थी। कुछ साथी तो सो गए थे, पर मैं कुछ साथियों के साथ देर रात तक पढ़ाई करता रहा।

हम अपनी पढ़ाई समाप्त करने की सोच ही रहे थे कि मेरा एक मित्र किसी और का मोबाइल लेकर आ पहुँचा। हम लोग पढ़ाई की थकान को मिटाने के लिए उसके मोबाइल से गाना सुनने लगे।

गाना सुनते-सुनते मैंने वह मोबाइल अपने हाथ में ले लिया। थोड़ी देर बाद उस मित्र ने मोबाइल लेकर वापस जाने की बात कही। गाना रुचिकर लग रहा था, इसलिए मैंने उससे कुछ देर और रुकने का आग्रह किया। लेकिन वह मेरी बात नहीं मानकर मेरे हाथ से मोबाइल छीनने लगा।

छीना-झपटी कुछ ही देर में हाथापाई में बदल गई। उस हाथापाई में मेरा हाथ डोरमेटरी की दीवार से जोर से जा लगा। मेरे अँगूठे और कलाई के बीच के ज्वाइंट पर गहरी चोट लगी। उस समय तो आवेश में मुझे जरा भी महसूस नहीं हुआ, परन्तु झगड़ा समाप्त होने के बाद मेरे हाथ में दर्द शुरू हुआ। कुछ ही पलों में पीड़ा असहनीय हो गई। कराहते हुए मैंने यह बात अपने मित्र प्रणव को बतायी। उसने देखा कि मेरे हाथ में सूजन आ गई है।

जैसे ही उसने मेरा हाथ छुआ, मेरी चीख निकल गयी। पीड़ा की अधिकता से मुझ पर बेहोशी छाने लगी थी। उसने मुझे अपने हाथ से पानी पिलाया, फिर बिस्तर पर लिटाकर मेरे हाथ में एक क्रेप बैन्डेज बाँध दिया और कहा- सो जाओ।

रात का लगभग एक बज रहा था। उस वक्त कहीं, किसी डॉक्टर के पास भी नहीं जा सकते थे। प्रणव मेरी बिगड़ती हुई हालत को देखकर गुरुदेव से मेरे लिए प्रार्थना करने लगा। मैंने सोने की कोशिश की, लेकिन पीड़ा के कारण सो नहीं सका।

रात भर यही सोचता रहा कि अब क्या होगा, सुबह मैं इम्तहान कैसे दूँगा? जैसे-तैसे सुबह हुई, रात भर में ही मेरा हाथ फूलकर तुम्बा बन गया था। मुझे लग रहा था कि अब मैं परीक्षा नहीं दे पाऊँगा।

मैंने पूज्य गुरुदेव से मन ही मन कहा- गुरुदेव, जब आपने मुझे रात में बार-बार बेहोश होने से बचाया है, तो अब परीक्षा देने की भी शक्ति दे दीजिए। कुछ ही पलों में मेरा आत्मविश्वास वापस लौट आया। मैंने दृढ़ निश्चय किया कि चाहे कुछ भी हो जाए, मैं परीक्षा अवश्य दूँगा।

परीक्षा भवन में जब प्रश्न पत्र बाँटे जा चुके, तो मैंने एक बार फिर पूज्य गुरुदेव को याद किया और दाँत भींचकर कलम को बैंडेज के अन्दर घुसा दिया। जब मैंने तीन उँगलियों से कलम को पकड़ा, तो दर्द से बिलबिला उठा, लिखने की कोशिश की तो

जान निकलने लगी। दो-तीन कोशिशों के बाद मैं लिखने में कामयाब हो गया। लिखते-लिखते तीन घण्टे कैसे बीत गए, मुझे पता तक नहीं चला।

परीक्षा भवन से बाहर आने के बाद मेरा ध्यान हाथ की तरफ गया। मैंने महसूस किया कि तीन घण्टे तक तेजी से लिखने के बाद भी दर्द बढ़ने के बजाय कुछ हद तक घट ही गया है। बाकी के बचे दो पेपर्स की परीक्षाएँ भी गुरुदेव की अनुकम्पा से पूरी हो गईं।

परीक्षा खत्म होने के बाद मैंने राम कृष्णपरमहंस हॉस्पिटल, कनखल में अपना हाथ डॉक्टर को दिखाया। डॉक्टर ने चेकअप करने के बाद एक्स-रे कराने की सलाह दी। एक्स-रे रिपोर्ट से पता चला कि हाथ में सीवियर फ्रेक्चर है, हड्डी डिस्प्लेस्ड हो गई है, जिसको ऑपरेशन के द्वारा ही ठीक किया जा सकता है।

ऑपरेशन का नाम सुनते ही मैं घबरा उठा। परीक्षा तो बीत ही गई थी। छुट्टियों की घोषणा हो गई थी। सभी बच्चे अपने-अपने घर जा रहे थे। मैं भी घर चला गया। वहाँ पहुँचने पर पिताजी ने मुझे एक बड़े हॉस्पिटल में दिखाया। वहाँ के डॉक्टर ने भी यही कहा कि ऑपरेशन ज़रूरी है।

२० दिसम्बर की दोपहर का ठीक १२ बजे का समय ऑपरेशन के लिए तय हुआ। १५ मिनट पहले मुझे हरे रंग का ड्रेसिंग गाऊन पहनाकर ऑपरेशन थियेटर ले जाया गया।

एक बार फिर मैंने आँखें बन्द कीं और पूज्य गुरुदेव पर अपने जीवन तथा इस ऑपरेशन का पूरा भार सौंप दिया। अगले ही पल मुझे लगा कि पूज्य गुरुदेव ऑपरेशन थियेटर में मेरे सिरहाने खड़े होकर मेरा सिर सहला रहे हैं।

ऑपरेशन को लेकर मेरा सारा डर पल भर में भाग गया। थोड़ी देर बाद डॉक्टर साहब आए, आते ही उन्होंने हाथ में एक-एक करके छः इंजेक्शन लगा दिए। फिर मेरे हाथ पर फोकस करके स्क्रीन पर उसकी अन्दरूनी हालत देखते रहे। मैं भी सामने रखे उस कंप्यूटर स्क्रीन पर हाथ की जगह-जगह से टूटी हड्डियों को मजे ले-लेकर देख रहा था। अब ऑपरेशन शुरू हुआ। सबसे पहले ड्रिल मशीन से हाथ की हड्डी में कई जगह गहरे छेद किए गए, फिर उनमें स्टील के रॉड डालकर मशीन से फिक्स किये गए। ड्रिल करते समय खून की धारा में हड्डियों के बुरादे तैरते हुए निकल रहे थे।

पीड़ा तो मर्मान्तक हुई, पर पास में गुरुदेव के मौजूद होने से मनोबल बना रहा। मैंने दाँत भींचकर आँसुओं में डूबी हुई आँखों से गुरुदेव की ओर देखा। वे मुझे ही देख रहे थे। उनसे आँखें मिलते ही मेरी सारी पीड़ा एक पल में समाप्त हो गई।

ऑपरेशन बड़े आराम से पूरा हुआ। आज मैं अपने इस हाथ से सारे काम अच्छी तरह से कर लेता हूँ। अब तो मुझे लगने लगा है कि बड़े हाथी का न सही, लेकिन हाथी के बच्चे का बल तो मेरे इस हाथ में आ ही गया है।

**- प्रस्तुतिः नितेश शर्मा, बहराइच ( उ.प्र. )**

# तुम्हारी जन्मपत्री मैंने फाड़ दी

श्री शम्भूसिंह कौशिक को क्षय रोग हो गया। उन्हें सेनिटोरियम में भरती कराया गया। चिकित्सा हुई। कुछ समय बाद उन्हें लाइलाज घोषित कर सेनिटोरियम से छुट्टी दे दी गई। वे कोटा राजस्थान के निवासी थे। मरणासन्न स्थिति में दिन काट रहे थे। ज्योतिषियों ने भी जन्म पत्री देखकर मारकेश बताया था, सो मृत्यु की प्रतीक्षा के अतिरिक्त कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था।

जिसके जवान इकलौते बेटे को डॉक्टरों ने जवाब दे दिया हो और ज्योतिषियों ने उसकी मृत्यु के निकट होने की भविष्यवाणियाँ की हों, उस माँ की स्थिति क्या होती है, यह विज्ञजन स्वयं समझ सकते हैं। कौशिक जी की माँ दिन-रात अपने इष्टदेव से यही विनती करती रहती थी कि कैसे भी करके उनका बेटा ठीक हो जाए। ईश्वर भले ही उसके प्राण ले लें पर उनके बच्चे को जीवन दान दे दें।

शायद इसी आर्त्त पुकार की ही परिणति थी कि पूज्य गुरुदेव वहाँ पहुँच गए। उन्हीं दिनों कोटा राजस्थान में एक विशाल यज्ञायोजन किया गया था। उसे सम्पन्न कराने के लिए स्वयं गुरुदेव वहाँ पहुँचे हुए थे। दुखियारी माँ को किसी ने सलाह दी मथुरा से एक तपस्वी आए हैं, उनसे मिलो। तुम्हारा बेटा ठीक हो जाएगा वह सब काम छोड़कर दौड़ पड़ीं।

गुरुदेव के पास पहुँचकर उन्होंने विनती की-गुरुदेव हम लोग बहुत गरीब हैं, आपके चरणों की धूल के बराबर भी नहीं। हमारी शक्ति आपको बुलाने की तो नहीं है, फिर भी हमारी विनती है कि हमारे बेटे पर आपकी कृपा दृष्टि हो जाए, तो शायद हमारी तकदीर बदल जाए। हम सब ओर से निराश हो गए हैं, गुरुदेव! डॉक्टरों ने भी जवाब दे दिया है और ज्योतिषियों ने भी मारकेश बताया है। कहते-कहते वह फूट-फूट कर रो पड़ी। उसकी रुलाई से सभी द्रवित हो गए। गुरुदेव ने अपने पास खड़े सहयोगी से कहा-बेटा, इसका पता नोट कर, दूसरे के घर जाने को समय मिले या न मिले, इसके घर मैं अवश्य जाऊँगा।

पूज्य गुरुदेव के इन शब्दों से माँ के मन में आशा की किरण जाग उठी। वे दौड़कर घर वापस गई और जो भी अपनी स्थिति अनुरूप कर सकती थीं, स्वागत सत्कार की तैयारी कर ऋषिवर के आने का इंतजार करने लगीं।

इधर यज्ञीय कार्यक्रम सम्पन्न होने के बाद अपने विश्राम क्षणों में कटौती कर पूज्य गुरुदेव उस दुखियारी माँ के घर की ओर चल पड़े। घर क्या था, एक कच्चा सा मकान था, छावनी की ऊँचाई भी बहुत कम थी। पूज्य गुरुदेव का कद वैसे भी बहुत लम्बा था। अतः अन्दर घुसने के क्रम में बाँस का एक कोना पूज्यवर के माथे में जा लगा। माथे से खून निकल आया। खून देखकर मेजबान बनी माँ ग्लानि से गड़ गई। अपराधियों की तरह सिर झुकाकर वह स्वयं को धिक्कारने लगी। कहने लगी- यदि मैंने आपको घर आने के लिए नहीं कहा होता......।

पूज्य गुरुदेव अपनी पीड़ा को छिपाते हुए हँसते रहे और कहा-बेटे, इस बाँस की इतनी हिम्मत कि इसने मुझे चोट पहुँचाई। अब यह बाँस यहाँ नहीं रहेगा।

उनके इस कथन का आशय उस समय तो शायद ही किसी की समझ में आया हो, लेकिन कुछ ही दिनों में जब वह कच्चा मकान पक्के मकान में बदल गया, तब जाकर लोगों की समझ में आया कि जैसे पेड़ चोट खाकर भी बदले में फल ही देता है, वैसे ही गुरुदेव ने घायल होकर भी उस परिवार को पक्के मकान का अनुदान दे दिया। जब मकान ही पक्का हो गया तो बेचारा बाँस कहाँ रहेगा।

पूज्य गुरुदेव अन्दर पहुँचे तो देखा कि वह बीमार इकलौता बेटा मरणासन्न स्थिति में लेटा था। मुश्किल से हाथ जोड़े। आँखों से बहती हुई अश्रुधारा ने बिना कुछ कहे उनकी स्थिति बता दी। गुरुदेव ने ढाढस बँधाते हुए कहा-चिन्ता मत कर। गायत्री माता सब ठीक करेंगी।

घर के लोगों ने विस्तार से बताना शुरू किया कि इस बीमारी का इलाज कहाँ-कहाँ कराया गया और कितने बड़े-बड़े डॉक्टरों ने जवाब दे दिया है। गुरुदेव मुस्कराते हुए शान्त भाव से सारी बातें सुनते रहे। जब ज्योतिषियों द्वारा कही गई मारकेश की बात बताकर उनकी ओर जन्म पत्री बढ़ाई गई, तो पूज्य गुरुदेव ने तुरन्त जन्मपत्री हाथ में ली, उसे पढ़ा और कहा-बेटे। ज्योतिषियों ने जन्मपत्री में जो मारकेश की बात कही है वह तो सही है, पर देख ले हम इस मारकेश को अभी फाड़ देते हैं।

इतना कहकर गुरुदेव ने वह जन्मपत्री फाड़कर फेंक दी और कहा-तेरा मारकेश समाप्त, तेरी जन्म पत्री ही मैंने फाड़ दी, अब कहाँ रहेगा मारकेश? फिर उन्होंने कागज-पेन मँगाया और तुरन्त दूसरी जन्म पत्री बनाकर दे दी। बोले अब तुझे बहुत लम्बी आयु देंगे। अपने से भी अधिक, हमारे रहते तुझे कुछ नहीं हो सकता। दुखियारी माँ को मानो वांछित वरदान मिल गया। उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। उसे लगा उसके निर्जीव शरीर में किसी ने अकस्मात् प्राणों का संचार कर दिया हो। स्वागत-सत्कार तो भूल ही गई। निढाल होकर गुरुदेव के चरणों में गिर पड़ी व अन्तरमन से गुरुदेव के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने लगी।

सबको सांत्वना देकर गुरुदेव वापस आए और अन्य कार्यों में व्यस्त हो गए। शम्भू सिंह शनैः-शनैः ठीक होने लगे। स्वयं महाकाल के अवतार ने जिसकी कुण्डली फाड़कर दुबारा बनाई हो, उसे तो ठीक होना ही था। एक माह में वे बिना किसी उपचार के पूर्णतया स्वस्थ हो गए।

पूज्यवर की अनुकम्पा से नया जीवन प्राप्त हुआ था। वे एक अध्यापक थे। सो कृतज्ञता का भाव लिए हुए उन्होंने नौकरी छोड़ दी व गुरुदेव के दिए हुए जीवन को उन्हीं के श्रीचरणों में समर्पित करने हेतु मथुरा आ गए। यहाँ आकर उन्होंने नरमेध यज्ञ के चार आत्मदानियों में एक बनने का गौरव प्राप्त किया।

प्रस्तुतिः श्रीमती विमला अग्रवाल
शांतिकुंज, हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )

# प्रेतात्माओं का किया गया दीक्षा संस्कार

पहले मैं पुनर्जन्म में तो विश्वास करता था पर प्रेत योनि (भूत, पिशाच आदि) पर मेरा जरा भी विश्वास नहीं था। एक दिन प्रसिद्ध लेखक बी.डी. ऋषि की पुस्तक '**परलोकवाद**' मेरे हाथ लगी।

उसे पढ़कर कई तरह की जिज्ञासाओं ने मुझे घेर लिया-परलोक में हमारी ही तरह लोग कैसे रहते हैं? क्या करते हैं? उन्हें भूख-प्यास लगती है या नहीं? आदि, आदि।

१९७२ में पूर्व रेलवे जमालपुर (मुंगेर) वर्कशॉप में नौकरी के रूप में गुरुदेव का आशीर्वाद मुझे हाथों-हाथ मिल चुका था। एक दिन वर्कशाप में ही भोजन के समय विभाग के वरीय अभियंता श्री राम नरेश मिश्र ने भूत-प्रेत आदि की बातें छेड़ दीं। मैंने हल्की अरुचि के स्वर में कहा-मैं इन बातों पर विश्वास नहीं करता। मिश्रा जी ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया-तुम मानो या न मानो, मेरे जीवन में तो यह घटित हुआ है। आज मैं तुम लोगों को अपने जीवन में घटी वह सच्ची घटना सुनाता हूँ।
उनकी इस बात पर सबके कान खड़े हो गए। मिश्रा जी ने आप बीती सुनाते हुए कहा-"आज से बीस साल पहले की बात है। मेरी शादी हो गई थी। उसके कुछ ही दिनों बाद मेरी भेंट एक प्रेतात्मा से हो गई, और यह मुलाकात धीरे-धीरे सघन सम्पर्क में बदल गई।

वह रोज रात में आकर मुझसे भेंट करती और तरह-तरह की बातें भी करती थी। कभी पैरों में लाल रंग लगा देती तो कभी कुछ और तो कभी कुछ और तरह के क्रिया कलाप होने लगते।"

मिश्र जी रेलवे के अच्छे पद पर कार्यरत थे। मुझसे उम्र में भी बड़े थे, इसलिए मैं उन्हें भैया जी कहा करता था। वे एक गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे। इसलिए उनकी बातों को हल्केपन से लेना मेरे लिए संभव नहीं था।

कई घटनाएँ उन्होंने इतने जीवन्त रूप में सामने रखीं कि भूत-प्रेत के अस्तित्व को लेकर मेरी जिज्ञासा दोहरी हो गई थी। उनकी बताई ढेर सारी बातों में मुझे सबसे अधिक आश्चर्य इस बात पर हुआ कि वह थी तो एक मुस्लिम परिवार की प्रेतात्मा लेकिन अपना नाम शांति बताती थी।

दूसरे दिन जब मिश्रा जी आए, तो घबराए हुए थे। सीधे सेक्शन में आकर मेरे पास बैठ गए और कहा-विजय जी, वह २० साल बाद आज रात में फिर से आ गई। मैं तो तबाह हो जाऊँगा। अब मैं एक बाल बच्चेदार आदमी हो गया हूँ।

उनकी बातें सुनकर मैं भी डर-सा गया। आश्चर्य से पूछा-भैया, कौन आ गई, आप किस तबाही की बात कर रहे हैं। मिश्रा जी ने कहा-वही प्रेतात्मा जो अपना नाम शांति बताती है। कल मैंने तुम लोगों से उसकी चर्चा की थी, शायद इसलिए फिर आ गए। समझ में नहीं आता है अब मैं क्या करूँ!

मैंने उन्हें ढाढस बँधाते हुए कहा-चिन्ता की कोई बात नहीं। आप अपने यहाँ गायत्री हवन करा लीजिए, सब ठीक हो जायगा। गायत्री चालीसा में लिखा है- "भूत पिसाच सबै भय खावें, यम के दूत निकट नहिं आवें।" मेरी बातों से वे कुछ हद तक आश्वस्त हो गए।

तीसरे दिन जब मिश्र जी वर्कशॉप आए तो उन्होंने और भी आश्चर्य भरी बात सुनाई। कहा-शांति फिर आई थी। उसने मुझसे कहा है- मैं विजय बाबू को अच्छी तरह से जानती हूँ।

मैं तो यह सुनकर बिल्कुल ही घबरा उठा कि एक प्रेतात्मा मुझे कैसे जानती है। मैंने मिश्र जी को कहा-अगर वह फिर आ जाए तो उससे पूछें कि मुझे किस तरह से जानती है।

अब शांति प्रतिदिन मिश्र जी के पास आने लगी थी। अगले दिन मिश्र जी ने मुझे अकेले मैं ले जाकर कहा- वो तो कहती है कि विजय जी हमारे गुरु भाई हैं।

यह सुनकर मुझे थोड़ा साहस तो मिला पर सोच-सोचकर पागल हुआ जा रहा था कि मैं इस प्रेतात्मा का गुरुभाई कैसे हो गया। इसका मतलब तो यह है कि कभी इस जीवात्मा ने परम पूज्य गुरुदेव से दीक्षा ली है। एक मुसलमान औरत की दीक्षा! आखिर यह कब और कैसे संभव हुआ?

मैंने हँसते हुए कहा कि वे शांति बहिन से इन सवालों का जवाब माँगकर आएँ। अब तक शांति नामक उस प्रेतात्मा से मेरा भय समाप्त हो गया था। अगले दिन मिश्र जी ने एक रहस्य का उद्घाटन किया- शांति तुम्हारे ही गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य की शिष्या है।

मैंने चकित होकर पूछा- यह कैसे संभव हुआ। मिश्र जी बोले मैंने तुम्हारे कहने के मुताबिक उससे पूछा था कि तुम उसके गुरुभाई कैसे हो? तो जवाब में उसने कहा-सन् १९७० ई. में टाटानगर में १००८ कुण्डीय यज्ञ हो रहा था। उसी समय मैं कई अन्य आत्माओं के साथ भटकती हुई वहाँ पहुँच गई थी। इतने बड़े यज्ञ का आयोजन देखकर हम सभी परम पूज्य गुरुदेव से प्रभावित हो गईं।

फिर कुछ रुककर शांति ने कहना शुरू किया- हम सभी ने आचार्यश्री से समवेत प्रार्थना करते हुए कहा कि हे ऋषिवर! इन मानवों का तो आप उद्धार कर रहे हैं, पर हम प्रेतात्माओं का उद्धार कौन करेगा? हमारे पास न तो स्थूल शरीर है और न टिककर रहने का कोई स्थान। दिन-रात इधर से उधर बेमतलब भटकते रहना ही हमारी नियति है। आप तो अवतारी चेतना हैं। कृपाकर हम लोगों का भी उद्धार करें। तब परम पूज्य गुरुदेव ने यज्ञ-पंडाल वाले मैदान से अलग हटकर टाटा के ही दूसरे बड़े मैदान में हम सभी को पंक्तिबद्ध कर दीक्षा संस्कार कराया और सबका नामकरण भी कर दिया। मेरा नाम गुरुवर ने शांति रखा था।

यह सब सुनकर शांति के बारे में जानने की जिज्ञासा बढ़ती गई। हमने मिश्रजी के द्वारा ही शांति से जानकारी ली कि ये सभी सूक्ष्म जगत में क्या करते हैं? शांति बहिन का कहना था-हम सब सूक्ष्म जगत में उनके अनुशासन में काम करते हैं, बस।

मिश्र जी ने जब फिर जानना चाहा कि इस समय पूज्य गुरुदेव हिमालय प्रवास में कहाँ हैं और क्या कर रहे हैं, तो शांति ने कहा- एक सीमा के बाद हम सबको कुछ भी बताने की मनाही है, इसलिए मैं इससे अधिक और कुछ नहीं बता सकती। अब मुझे प्रेतात्माओं के अस्तित्व पर पूरा विश्वास हो चुका था। मैं यह भी जान चुका था कि परम पूज्य गुरुदेव की पराशक्ति से परिचालित ये सूक्ष्म शरीरधारी शिष्यगण सूक्ष्म जगत में भी युग परिवर्तन के लिए अदृश्य रूप में कार्यरत रहते हैं।

इस घटना के लगभग एक वर्ष बाद तक परम पूज्य गुरुदेव की प्रेतात्मा शिष्या शांति मेरे भी सम्पर्क में विधेयात्मक रूप में रही। फिर एक दिन ऐसा भी आया कि वह उस इलाके से हमेशा के लिए चली गई। बहुत याद करने पर भी उसका आना नहीं हुआ।

सन् १९७३ ई. में परम पूज्य गुरुदेव शान्तिकुञ्ज पधार चुके थे। शान्तिकुञ्ज के वशिष्ठ और विश्वामित्र नामक भवन में 'प्राण प्रत्यावर्त्तन शिविर' आयोजित किया गया था। इस शिविर में शिष्यों से उच्चस्तरीय योग साधनाएँ कराई जाती थीं। सौभाग्य से मुझे भी इसमें भाग लेने का अवसर मिला था।

इसी शिविर के दौरान एक दिन शांति का ध्यान आया और मैं गुरुदेव से भेंट के समय पूछ बैठा-गुरुदेव, शांति बहिन का क्या ..... ? वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि गुरुदेव ने तपाक से कहा-"बेटा, उसका चोला बदल गया.....चोला बदल गया।"

पूज्य गुरुदेव की उस समय की मुद्रा देखकर आगे कुछ पूछने का साहस नहीं हुआ। साक्षात् शिव की तरह भूत-प्रेतों का भार वहन करने वाले महाकाल के अवतार को श्रद्धापूर्वक नमन करके मैं वापस लौट पड़ा।

**प्रस्तुतिः विजय कुमार शर्मा**
**जमालपुर-मुंगेर (बिहार)**

## सिद्धियों की प्राप्ति का सरलतम उपाय

साधना से सिद्धि का तात्पर्य उन विशिष्ट कार्यों से है, जो लोक मंगल से संबंधित होते हैं और इतने बड़े भारी तथा व्यापक होते हैं, जिन्हें कोई एकाकी संकल्प या प्रयास के बल पर नहीं कर सकता। फिर भी साधक उसे करने का दुःसाहस करते हैं, आगे बढ़ने के लिए कदम उठाते हैं और अंततः असंभव लगने वाले कार्य को भी संभव कर दिखाते हैं।

# कौन-कौन गुण गाऊँ गुरु तेरे

मेरे पिता जी सन् १९६४ में ही गुरुदेव के संपर्क में आए। पिताजी के मन में उनके प्रति अनन्य श्रद्धा थी। मुझे याद है जब भी हमारे परिवार में कोई समस्या आती, गुरुदेव से प्रार्थना करते ही पता नहीं, कैसे सारी समस्या सुलझती चली जाती थी। इसलिए हम सभी के मन में उनके प्रति गहरी श्रद्धा का भाव था।

१९७३ में गुरुदेव ने प्राण प्रत्यावर्तन शिविर शुरू किया था। मैं भी शिविर में जाने के लिए तैयार हो गया। मन में शांतिकुंज जाने के लिए उत्साह तो था ही, गुरुदेव से मिलने की ललक भी थी; क्योंकि पिताजी से गुरुदेव के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। उन्हें प्रत्यक्ष देखने का अवसर पहली बार मिल रहा था।

आखिर वह दिन आ ही गया जब हम शान्तिकुञ्ज पहुँच गए। शान्तिकुञ्ज पहुँचते ही वहाँ के वातावरण को देख हृदय पुलकित हो उठा, जैसा नाम वैसा ही काम शान्तिकुञ्ज को देखते ही मन में साधना की तरंगें उठने लगीं।

मैं जैसे ही गेट के पास पहुँचा। गुरुदेव गेट पर ही खड़े मिले। मैंने झुककर प्रणाम किया। वे बोले- मैं तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा था। उनके इन शब्दों को सुनकर हृदय में ऐसी भाव तरंगे उठीं कि शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकता। मेरे हृदय में उनके प्रति सम्मान दूना हो गया। भगवान स्वरूप गुरुदेव की मुझ अकिंचन पर ऐसी कृपा!

मैं मन ही मन बहुत प्रसन्न था। दूसरे दिन मिलने के ख्याल से गुरुदेव के पास गया। उन्होंने प्यार से अपने पास बैठाया। कुशल समाचार पूछे। इसके बाद बोले- कोई समस्या हो तो बताओ। मैंने कहा- गुरुदेव! मैं बोल नहीं सकता। गुरुदेव ने मुस्कुराते हुए कहा- क्यों, बोल तो रहा है। मैंने कहा मैं हकलाता हूँ। उन्होंने कहा मैं भी हकलाता हूँ, मेरा कोई काम रुका है आज तक? तुम्हारा भी काम नहीं रुकेगा। मैंने कहा- नहीं गुरुदेव, मैं प्रवचनकर्ता बनना चाहता हूँ। गुरुदेव थोड़ा रुके, फिर बोले- तू बनेगा, जरूर बनेगा। मैं गायत्री माँ से प्रार्थना करूँगा।

करीब एक हफ्ते बाद मेरी आवाज में सुधार होने लगा। मुझे स्वयं पर आश्चर्य होता। धीरे-धीरे एक महीने के अन्दर मेरी हकलाहट पूरी तरह दूर हो गई। गुरुदेव ने मुझसे कहा कि बनेगा तो बना भी दिया। मुझे अच्छी सर्विस भी मिल गई और एक अच्छा वक्ता भी बना दिया, जो बहुत दिनों की मेरी दिली इच्छा रही थी। मैं आज भी गुरुकृपा से अभिभूत हूँ।

जिनने स्वयं की हकलाहट दूर करने के लिए चमत्कारी शक्ति का सहारा नहीं लिया; अपनी सन्तान के लिए माता से प्रार्थना नहीं की, उनने मेरी कमियों को दूर कर मुझे आत्महीनता की ग्रन्थि से उबार लिया; जीवन पथ पर मजबूती से खड़ा होने लायक बना दिया। आज मैं धन्य हूँ उनकी कृपा पाकर।

**प्रस्तुति : कृष्ण कुमार विनोद**
**दुर्ग ( छत्तीसगढ़ )**

# तुमहिं पाय कछु रहे न क्लेशा

बात सन् १९८० की है जब मेरा विवाह नहीं हुआ था। उस समय मैं माता-पिता के साथ मुंगेर, बिहार में रहती थी। मुंगेर जिले में अपने मिशन का एक विद्यालय चलता था। उस विद्यालय का नाम बाल भारती विद्या मंदिर था। मेरा छोटा भाई उसी विद्यालय में पढ़ता था। मैं प्रतिदिन उसे छोड़ने जाया करती थी। धीरे-धीरे मेरा सम्पर्क वहाँ के आचार्यगण से हो गया। सभी आचार्य बड़े ही शिष्ट एवं व्यवहारकुशल थे। वे सभी मुझसे प्रत्येक रविवार के यज्ञ में शामिल होने के लिए कहते।

मुझे स्कूल का वातावरण बहुत अच्छा लगता था। बिल्कुल शान्त स्वच्छ सुन्दर वातावरण। मुझे वहाँ जाने में शांति मिलती थी। जब आचार्य जी ने मुझसे यज्ञ में आने के लिए कहा तो मुझे लगा जैसे बिन माँगी मुराद पूरी हो गई। हम तीन भाई व दो बहन थे। लेकिन कोई यज्ञ में जाने को तैयार नहीं हुआ। मेरी माता जी धार्मिक स्वभाव की थीं। मैं उनके साथ रविवार के यज्ञ में जाने लगी।

एक दिन जब मैं रविवार को यज्ञ में गई तो वहाँ पर कुछ विशेष कार्यक्रम चल रहा था, उत्सव जैसा माहौल था। जब मैंने आचार्य जी से कौतूहलवश पूछा तो उन्होंने बताया कि आज गुरुपूर्णिमा- व्यास पूर्णिमा का पर्व है। गुरु एवं शिष्य में संबंध जोड़ने का पर्व है। आज के दिन गुरु शिष्य को दीक्षा देता है। आचार्य जी की बातों ने मेरे अन्त:करण में संजीवनी का काम किया।

कार्यक्रम शुरू हुआ। इसके बाद जब दीक्षा का क्रम आया तो मंच पर बैठे आचार्य जी ने कहा- ''जिन्हें दीक्षा लेनी है वे इधर आकर बैठ जाएँ''। ये शब्द मेरे कानों में पड़ते ही मेरे पैर अनायास ही दीक्षा के लिए बढ़ गए। मैंने अपनी माताजी से भी नहीं पूछा। जब माताजी ने मुझे दीक्षा की पंक्ति में बैठे देखा तो मुझे मना करने लगीं। कहने लगीं अभी शादी नहीं हुई है। पता नहीं कैसे घर में शादी हो। तुम्हें आगे नानवेज भी शायद खाना पड़े। अभी मंत्र दीक्षा न लो। बाद में तुम्हारे लिए परेशानी खड़ी हो सकती है। मैं उनकी बातों को अनसुना कर वहीं बैठी रही। दीक्षा शुरू हुई। मैंने दीक्षा का क्रम पूरा किया। उसके पश्चात् गायत्री साधना जैसे मेरी जीवन चर्या बन गई। मैंने शिक्षा के साथ साधना का क्रम बराबर जारी रखा। इस तरह करीब ६ महीने बीत गए।

अचानक मेरी शादी मुंगेर शहर में ठीक हो गई। मेरी माँ बहुत परेशान थीं। जाने कैसा परिवार होगा। मेरे पूजा पाठ को लेकर वे बहुत चिंतित थीं। जिस दिन ससुराल वाले मुझे देखने आए, उस दिन तो माँ का बुरा हाल था। कहीं खान-पान की वजह से ससुराल वाले मना न कर दें। मुझे तो किसी प्रकार की चिन्ता नहीं हो रही थी। मुझे अपने इष्ट पर पूरा भरोसा था कि मेरे लिए जो अच्छा होगा, वही होगा। जब जेठ जी मुझे देखने आए, तो उन्होंने मुझसे सिर्फ एक ही बात पूछी- बेटा गायत्री मन्त्र जानती हो? ये शब्द सुनते ही मुझे लगा मुझे सब कुछ मिल गया।

मैंने गायत्री मन्त्र सुना दिया और इस तरह से मेरी शादी, गायत्री परिवार से जुड़े हुए बहुत पुराने देव परिवार में हो गई।

मुझे परिवार में बुलाना था, इसीलिए गुरुदेव ने मुझे पहले से ही संस्कारित करने की व्यवस्था बनाई, ताकि नया परिवेश मेरे लिए कष्टदाई न बने। गुरुदेव की कृपा से मुझे अच्छा एवं संस्कारित परिवार मिला, जिसके लिए मैं गुरुदेव की आजीवन ऋणी हूँ। गुरुदेव की कृपा से जो-जो हमने सोचा, सब कुछ मिला। आज भी मैं गुरुकार्य में सक्रिय हूँ, और इसे अपना सौभाग्य मानती हूँ।

**प्रस्तुतिः- चित्रा वर्मा**
**आसनसोल ( प.बंगाल )**

---

# देवत्व पर विजय

एक बहुत भला आदमी था। उसकी भलमनसाहत से उस पर देवदूत प्रसन्न हो गए। उन्होंने उससे कोई सिद्धि या वरदान माँगने को कहा। तब उस भले आदमी ने कहा- "आप मुझ पर वास्तव में ही कृपा करना चाहते हैं तो यह वरदान दीजिए कि मुझसे सदा किसी न किसी की भलाई होती रहे, परन्तु मुझे उसका पता न लगे।"

देवता हैरान थे। अन्ततः उनको एक उपाय सूझा और उसको 'तथास्तु' ऐसा ही हो, कहकर वरदान दे दिए। देवताओं ने यह वरदान दे दिया कि 'वह जहाँ कहीं भी जाए उसके पीछे की छाया में दूसरों का हित करने वाली अद्भुत शक्ति रहे।' अब तो वह व्यक्ति जिधर भी जाता, उसकी छाया जली घास पर पड़ जाती तो वह हरी हो जाती, किसी रोगी पर पड़ जाती तो वह रोगमुक्त हो जाता, किसी मन्दमति पर पड़ जाती तो वह बुद्धिमान हो जाता, किसी दरिद्र पर पड़ जाती तो वह ऐश्वर्यवान हो जाता। परन्तु उस व्यक्ति को कभी इसका पता न चला। देवता खुश थे और वह आदमी भी प्रसन्न।

यदि उस व्यक्ति को इस बात का पता चल जाता तो उसमें अहंकार का अंकुर फूटकर उसकी भलमनसाहत का विनाश कर डालता। दूसरों को भी उसकी इस अलौकिक सामर्थ्य का ज्ञान न था। यदि दूसरे लोगों को भी इसका पता चल जाता तो उसकी ख्याति हो जाती। उसके चारों ओर ईर्ष्यालु लोग इकट्ठे होकर उसे परेशान करते।

उस आदमी के मनुष्यत्व ने देवत्व पर विजय प्राप्त कर ली थी।

**( अखण्ड ज्योति अगस्त-1980 पृष्ठ-०२ )**

# कर्ताऽहमिति मन्यते

सन् १९७८ ई.में मेरे होम टाउन हजारीबाग में एक पंचकुण्डीय गायत्री महायज्ञ हुआ था। वहीं सद्वाक्यों और पुस्तकों से आकृष्ट होकर मैं पहले पहल गायत्री परिवार से जुड़ा। शहर में गल्ले किराने की दुकान चलाता था। वहीं किताबें ले जाकर रखने लगा। आचार्यश्री की इन किताबों से जो प्रेरणा मिली उससे अपनी स्वार्थी सोच में कुछ हद तक बदलाव आया था कि केवल अपने पोषण तक ही सीमित न रहकर लोक मंगल का कार्य भी करना चाहिए।

मैं दुकान में आनेवाले ग्राहकों को ये छोटी-छोटी किताबें पढ़ने के लिए देने लगा। गुरुदेव की इन किताबों में लिखे क्रांतिकारी और मूल्यवान विचारों को लोग इतना पसंद करने लगे कि बार-बार मेरी दुकान पर आने लगे। कहते हैं, भगवान का काम करनेवालों को यश, कीर्ति, सहयोग, धन इत्यादि की प्राप्ति स्वत: होती है। कुछ ऐसा ही मेरे साथ होने लगा। धीरे-धीरे ग्राहकों की संख्या बढ़ने लगी। अच्छे दुकानदार के रूप में पहचान बनने लगी तो आय भी बढ़ती गई। धीरे-धीरे गायत्री परिवार से मेरी सम्बद्धता अंतरंगता में बदलने लगी। दीक्षा ले ली और नियमित साधना भी करने लगा। गोष्ठियों-बैठकों में नियमित रूप से जाने लगा।

उसी वर्ष सितम्बर में राँची से मिशन के केन्द्रीय प्रतिनिधि के रूप में श्री जे.पी.शर्मा जी हजारीबाग आए। मिशन की गतिविधियों को अधिकाधिक प्रसारित किए जाने के विषय में चर्चा के लिए गोष्ठी बुलाई गई थी, जिसमें उन्होंने बताया कि जहाँ-जहाँ २४ कुण्डीय यज्ञ होगा, वहाँ-वहाँ युग निर्माण योजना की शाखा खोली जाएगी। मिशन का प्रचार-प्रसार अधिक से अधिक हो, यह मेरी दिली इच्छा थी। क्योंकि इस मिशन से जुड़कर जो आनन्द और आत्म-संतोष मुझे प्राप्त हुआ था, मैं चाहता था उसे और लोगों तक पहुँचा सकूँ। उसी समय से मन ही मन सोचने लगा कि हजारीबाग में यदि २४ कुण्डीय यज्ञ करा सकूँ, तो कितना अच्छा हो! इस क्षेत्र का कल्याण हो जाए। कई दिनों की यह विचार प्रक्रिया अंत में जब निर्णय में बदली, तो अगली बैठक में मैंने अपने क्षेत्र में २४ कुण्डीय यज्ञ आयोजित करने का प्रस्ताव रखा। जो सभी को पसंद आया।

इस बैठक में मौजूद केन्द्रीय प्रतिनिधि आदरणीय कपिल जी ने बताया कि २४ कुण्डीय यज्ञ के लिए संकल्प शान्तिकुंज जाकर लेना होगा। अब प्रश्न यह था कि शान्तिकुंज कौन-कौन जाए? उन दिनों गायत्री परिवार का यहाँ उतना प्रसार नहीं था, गिने-चुने सदस्य थे। ऊपर से यह भी एक बड़ी समस्या थी कि किसी के पास धन की कमी थी, तो किसी के पास समय की। कोई इतनी दूर जाने को तैयार नहीं था। अंत में दो परिजन जाने के लिए तैयार हुए, वह भी इस शर्त पर कि उनका यात्रा खर्च कोई और वहन करे। मैं व्यय भार उठाने के लिए तुरंत तैयार हो गया, क्योंकि इस कार्य के लिए मैं मन ही मन पहले से ही संकल्पित हो चुका था; लेकिन जैन समुदाय का होने के कारण खुलकर सामने नहीं आना चाहता था। खैर, यह चिन्ता तो दूर हो गई,

लेकिन दूसरी बड़ी चिन्ता यह थी कि इतने बड़े यज्ञ के लिए अपेक्षित धनराशि कहाँ से आएगी!

मेरी आर्थिक स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं थी। दुकान से ही आजीविका चलती थी। एक आटा चक्की थी, वह भी आदमी के अभाव में बन्द पड़ी थी। सोचा, किसी को साझेदारी में दे दूँ तो उससे जो आमदनी होगी, वह यज्ञ में लगा दूँगा। एक हमारे स्वजातीय व्यक्ति थे, काफी अनुभवी। मेरी दुकान का लेखाजोखा वही रखते थे। साझेदारी के लिए मुझे वे उपयुक्त व्यक्ति लगे। आमदनी का नया रास्ता दिखने लगा था। अत: उन दोनों भाइयों को साथ लेकर शान्तिकुंज जाने की तैयारियाँ करने लगा। अब एक ही अड़चन सामने खड़ी थी- पिताजी से अनुमति कैसे मिले? दो माह पूर्व ही सत्र करने के लिए शान्तिकुंज गया था। उस समय १२ दिनों तक दुकान बंद रही और अब फिर वहीं जाने के लिए तैयार था, वह भी यज्ञ का संकल्प लेने। पिताजी ऐसी अनुमति कभी नहीं देंगे। यह सोचकर मैंने एक तरकीब निकाली। बहन को एक वर्ष के प्रशिक्षण के लिए शान्तिकुंज छोड़ आया था। मैंने पिताजी से कहा नियमानुसार दो माह बाद देखभाल के लिए जाना होता है। यह सुनते ही उन्होंने कहा- मैं ही चला जाता हूँ, तुम्हारे जाने से दुकान बन्द हो जाएगी। बात बिगड़ती देख मैंने गुरुदेव का स्मरण किया-हे गुरुदेव, पिता के साथ प्रवंचना माफ करना। फिर मैंने उससे भी जोरदार बहाना बनाया। कहा- जो छोड़कर आया है, उसी को जाना होगा। इस तरह पिताजी को पट्टी पढ़ाकर शान्तिकुंज के लिए रवाना हुआ।

वहाँ पहुँचकर गुरुदेव से भेंट करने गया, तो परिवार का हाल-चाल जानने के बाद उन्होंने पूछा- बेटे, कैसे आना हुआ? मैंने बताया कि २४ कुण्डीय यज्ञ का संकल्प लेने आया हूँ। एक नया उद्योग शुरू कर रहा हूँ। उससे जो आमदनी होगी उसे यज्ञ में लगाऊँगा। अभी पूरी बात भी नहीं हो पायी थी कि गुरुदेव ने जोर से डाँट लगायी-"थोथी बात बोलता है, मतलब की बात नहीं बोलता है"। मैं डाँट खाकर चुपचाप एक किनारे बैठ गया। गुरुदेव की एक-एक कर अन्य परिजनों से बातें होती रहीं। तब तक मैं सोचने लगा, गुरुजी ने पूरी बात सुनी नहीं, इसलिए डाँट दिया। यज्ञ तो मुझे करना ही है, जब गुरुजी नाराज हो रहे हैं तो उद्योग की बात फिलहाल न ही करें।

थोड़ी देर बाद मुझे बोलने का मौका मिला, तो दुबारा हिम्मत करके मैंने कहा- ठीक है गुरुदेव उद्योग की बात जब होगी, तब होगी, मैं अभी केवल २४ कुण्डीय यज्ञ पर ही ध्यान दूँगा। वे प्रसन्न हुए। बोले-हाँ बेटा, अब तू २४ कुण्डीय कर लेगा। थोथी बात नहीं बोलनी चाहिए। संकल्प लेने के बाद तू चैन से नहीं बैठेगा। यज्ञ को लेकर गुरुदेव की रजामंदी पर मेरी साँस अटकी हुई थी, उनकी प्रसन्न मुद्रा से मेरा भी मन हल्का हो गया।

दो दिन बाद २४ कुण्डीय यज्ञ की उद्घोषणा मेरे नाम से हो गई। यह मेरे लिए एक नई मुसीबत थी। मैंने सोच रखा था कि साथ आये परिजन से ही संकल्प करवाऊँगा, क्योंकि जैन समुदाय का होने के कारण मैं जाहिरी तौर पर संकल्प लेकर

अपनी बिरादरी वालों का कोपभाजन नहीं बनना चाहता था। जब बचने का कोई रास्ता नहीं दिखा, तो संकल्प के समय मैं सबसे नजर बचाकर पीछे जा बैठा। मुझे नहीं देखकर साथी परिजन- चिरंजीव लालजी अग्रवाल संकल्प के लिए बैठ गए। उनके साथ वासुदेव महतो जी भी थे। खुद को छिपाने के प्रयास में मैं कार्यक्रम भी ठीक से नहीं देख पा रहा था। कुछ लोगों के संकल्प के बाद स्थान थोड़ा खाली हुआ, तो चिरंजीव जी की नजर मुझ पर पड़ गई। उन्होंने मुझे हाथ के इशारे से बुलाया। अब मेरे बचने के सारे रास्ते बन्द हो चुके थे। चोरी पकड़ा गई देख हकबकाया हुआ उनके पास पहुँचा। उन्होंने कहा- आप वहाँ क्यों जा बैठे? संकल्प तो आप ही के नाम से हुआ है।

लाचार होकर मुझे आगे बढ़ना पड़ा। हाथ में अक्षत पुष्प लिया। जब मेरी बारी आई, तो गुरुजी ने तिलक लगाकर आशीर्वाद दिया, माताजी ने रक्षा सूत्र बाँधा। दूसरे ही पल मैंने अनुभव किया कि मेरा वह डर, वह संकोच कहीं गायब हो गया था। एक अपूर्व उल्लास और उमंग से अन्तर्मन भर उठा। गुरुजी के तिलक-चंदन लगाने भर से यह आश्चर्यजनक परिवर्तन देख मैं समझ गया कि वे जिससे जो काम कराना चाहते हैं, वैसी परिस्थिति पैदा कर उससे करवा ही लेते हैं।

मन का संशय दूर हो जाने के बाद अब मैंने अपनी पूरी शक्ति इस कार्य में झोंक देने का निर्णय ले लिया। वापस हजारीबाग लौटा तो एक चौंकानेवाली बात सामने आई। जिसे मैं इतना विश्वासपात्र समझ रहा था-जिसे लेन-देन की महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी दे रखी थी- जिसके साथ साझा उद्योग शुरू करने जा रहा था, उसी ने मेरी अनुपस्थिति में पीठ पर छुरी घोंपने जैसा काम किया। मेरे व्यवसाय की जिन अन्दरूनी बारीकियों से वह अवगत था, उन्हें अन्यत्र पहुँचाकर मुझे नुकसान पहुँचाने का प्रयास किया।

साझे उद्योग का मेरा निर्णय कितना गलत था इसका आभास होते ही बिजली की तरह गुरुजी की बातें दिमाग में कौंध गईं। नया उद्योग खड़ा करने की बात पर मिली उस डाँट के अन्दर मेरे लिए जो चेतावनी थी, वह पूरी तरह अब समझ में आई। मैं चारों तरफ से ध्यान हटाकर पूरी तरह यज्ञ की तैयारियों में जुट गया। मेरे सामने सबसे बड़ी समस्या धन की थी। लेकिन वास्तव में जब कार्य आरंभ हुआ तो मैंने देखा यह कोई समस्या ही नहीं थी। चारों ओर से धन की जैसे वर्षा होने लगी और सबसे अधिक आश्चर्यजनक बात यह रही कि समाज के जिन भाई-बन्धुओं के विरोध का मुझे डर था, उन लोगों ने अपने आप सहयोग के हाथ बढ़ा दिए। जब यज्ञ का पूरा कार्यक्रम इतनी आसानी से सम्पन्न हो गया, तो मैं उस सर्वद्रष्टा, सर्वकर्त्ता गुरुसत्ता के आगे नतमस्तक हो गया। मन बार-बार यही कहता रहा-हे गुरुदेव! तुम्हारा काम तो तुमने कर ही रखा था। मुझे तो सिर्फ इसलिए माध्यम बनाया कि असम्भव से दिखने वाले इस महायज्ञ के आयोजन का श्रेय मुझ अकिंचन और मेरे जैसे अन्य स्वजनों को मिल सके।

**प्रस्तुति : डुंगरमल जैन, हजारीबाग ( झारखण्ड )**

# विदाई वेला का मार्मिक प्रसंग

जून १९७१ का माह था मथुरा में पूज्यवर के विदाई समारोह का आयोजन था। यद्यपि उस वर्ष के अन्दर पूज्यवर ने प्रत्येक बच्चे को किसी न किसी शिविर के बहाने बुला कर भेंट मुलाकात की थी। फिर भी जिन्हें अपने सगे बच्चों से अधिक स्नेह दिया हो, ऐसे पिता को अपने बच्चों से जाते-जाते एक बार मिल लेने की व्याकुलता एवं छटपटाहट हुई और विदाई समारोह का आयोजन उसी की परिणति थी।

ऐसी ही लगन दूसरी ओर भी लगी थी, बालकों के मन में भी पिता से मिलने की व्याकुलता बढ़ी थी। किन्तु वे पिता के निर्देश के अनुशासन में बँधे थे। एक ओर निश्चल प्यार दूसरी ओर अपना सब कुछ न्योछावर कर असीम सन्तोष पाने की व्याकुलता, यही था विदाई समारोह का सार।

विदाई समारोह का आमंत्रण पहुँचने पर बिलासपुर के सभी प्रमुख परिजन सर्व श्री रामाधार विश्वकर्मा, उमाशंकर चतुर्वेदी, बी. के. श्रीवास्तव, रामनाथ श्रीवत्स, हरिहर प्रसाद श्रीवास्तव आदि कार्यक्रम में शामिल हुए। अतिशय व्यस्तता के बावजूद गुरुदेव कुशलक्षेम पूछ लेते थे। पहले दिन कलश यात्रा के बाद दूसरे दिन देव आह्वान में हल्की बूँदा-बाँदी हुई। लगा कि इन्द्रदेव ने भी पूज्यवर का विदाई निमंत्रण स्वीकार कर लिया हो। तीसरे दिन चालीस विवाहों का भव्य मण्डप लग रहा था।

विवाह समाप्त होते-होते इन्द्रदेव खुश होकर अपनी पूर्ण शक्ति से बरस जाना चाह रहे थे किन्तु स्वयं परमात्मा जिनके पुरोहित बने हों ऐसे उन चालीस जोड़ों के भाग्य से किसे ईर्ष्या न हो! पूरे समारोह भर पूज्यवर विभिन्न कर्मकाण्डों की व्याख्या कर सभी चालीस हजार से अधिक परिजनों को भी हँसाते-हँसाते लोट-पोट कर रहे थे। किसी को सुध भी नहीं रही कि कल के बाद हमारे पूज्यवर हमारे बीच से विदा होकर चले जाएँगे। जयमाल से लेकर पूर्णाहुति तक यज्ञ सम्पन्न कर अपने आवास पर लौटे। विवाह सम्पन्न होने के बाद रात ग्यारह बारह बजे मूसलाधार बारिश हुई। आँधी और पानी के बेग से सारे तम्बू की बल्लियाँ गिरने लगीं। कुछ साहसी कार्यकर्ता बल्लियों को पकड़े रहे ताकि तम्बू किसी तरह गिरने से बचें। पूरी रात सभी ने अँधेरे में गुजारी।

दूसरे दिन ब्रह्ममुहूर्त में अचानक गुरुदेव आकर खड़े हो गए और हँसने लगे। मन में सोचा हमने रात भर कैसे गुजारी हम ही जानते हैं और गुरुदेव हँस रहे हैं। एक क्षण में जाने क्या-क्या सोचने लगा। उसके बाद जब उन्होंने बड़े प्यार से पूछा बेटा ज्यादा परेशानी तो नहीं हुई ? हम सभी ने एक स्वर में कहा- नहीं गुरु जी कोई परेशानी नहीं हुई। मन में यही सोचा कि अगर आँधी न आती तो गुरुदेव प्रत्यक्ष एक-एक परिजन से मिलने न आते। हमें लगा कि शायद गुरुदेव ने इन्द्रदेव को न्योता देकर बुलाया हो कि तुम जाओ और बच्चों की परीक्षा लो, फिर सहलाने जाएँगे।

बरबस रामायण की चौपाइयाँ याद आ गईं। ''छन महिं सबहिं मिले भगवाना। उमा मरम यह काहु न जाना।'' गुरुदेव सभी परिजनों से मिलने के बाद यज्ञशाला की ओर चल दिए। सभी परिजन यज्ञ हेतु तैयार होकर आए थे। गिरे हुए शामियाने चारों

तरफ फैले हुए थे, किसी को समझ में नहीं आ रहा था कि कैसे टेण्ट को व्यवस्थित किया जाए।

इसी बीच गुरुजी आए और बोले- सभी मिलकर प्रयास करो तो टेण्ट खड़ा हो सकता है। इतना कहने के बाद गुरुदेव ने स्वयं अपना हाथ आगे बढ़ाया। फिर क्या था हजारों हाथ उठ गए। गायत्री माता की जय, यज्ञ भगवान की जय के नारों से आसमान गूंज उठा और टेण्ट खड़ा हो गया। सभी आश्चर्यचकित थे कि इतना विशाल टेण्ट कैसे उठा। गुरुदेव ने कहा, आप सबके सम्मिलित प्रयास से यह कार्य संभव हो सका। ऐसे थे हमारे गुरुदेव।

**प्रस्तुति : माखन लाल**
**बिलासपुर ( छत्तीसगढ़ )**

---

# श्रद्धा से प्रभु मिलैं

सन् १९८३-८४ की बात है, सुबह के समय मैं एकांत में बैठकर ध्यान कर रही थी। अनायास ही मेरी आँखें खुल गईं। सामने गुरुदेव, माताजी और गायत्री माता की तस्वीर लगी हुई थी। उस पर दृष्टि पड़ते ही मैं चौंक उठी। गुरुदेव की तस्वीर नहीं दिखी। उस स्थान पर ठाकुर श्रीरामकृष्ण परमहंस सशरीर उपस्थित दिखे। मैंने आँखें मलकर फिर देखा, तब भी वही दृश्य दिखा।

उस समय दीक्षा के लिए अधिक दिन नहीं हुए थे। मैंने सोचा- ठाकुर को इतने दिनों से मानती रही हूँ, घर में हमेशा से उनकी तस्वीर देखती हूँ, उनके प्रति श्रद्धा बनी हुई है शायद इसीलिए गुरु के स्थान पर उनको देख रही हूँ। गुरुदेव से अभी मन का जुड़ाव अनुभव नहीं हुआ होगा। लेकिन सन् १९८५ में जब 'हमारी वसीयत और विरासत' पुस्तक छपी तो पढ़कर मुझे रोमांच हो आया। उसमें गुरुदेव ने अपने पिछले जन्मों के विषय में लिखा था।

ठाकुर रामकृष्ण ही इस जन्म में पूज्य गुरुदेव के रूप में आए हैं। यह जानकर मुझे उस दिन का वह दृश्य याद आ गया। फिर मेरे मन में यह प्रश्न आया कि मुझ पर यह रहस्य खोलने का गुरुदेव का मन्तव्य क्या रहा होगा? उत्तर अपने अन्तःकरण से ही प्राप्त हुआ- मेरी श्रद्धा बँटने न पाए, पूरी तरह अपने आराध्य में स्वयं को समाहित कर सकूँ। शायद इसलिए गुरुदेव ने अपने उस स्वरूप का दर्शन करा दिया। अथवा यह भी संभव है कि उनके सभी जन्मों के स्वरूप उनमें छाया रूप में समाए हुए हैं। मेरी श्रद्धा ठाकुर रामकृष्ण में बनी हुई थी इसलिए मुझे केवल वे ही दिखे।

**प्रस्तुति :श्रीमती कान्ति सिंह, हावड़ा ( प.बंगाल )**

# देवशिशु ने जगायी सद्बुद्धि

यह घटना १९९० की है, जब मैं परम वन्दनीया माताजी से दीक्षा लेकर पहली बार नवरात्रि अनुष्ठान में था। इससे पहले कि मैं घटना का जिक्र करूँ, यह बता दूँ कि मेरे यहाँ बिना मांसाहार या मछली के भोजन नहीं बनता था। गायत्री दीक्षा लेने एवं नवरात्रि में अनुष्ठान करने के कारण मैंने मांस-मछली खाना बंद कर दिया। मैं एक बार दाल रोटी चटनी और शाम को फलाहार लेने लगा। इसके चलते परिवार के सभी सदस्य, माता-पिता भाई, मेरी अर्द्धांगिनी को छोड़ कर सभी, मुझसे नाराज रहने लगे और बातचीत बंद कर दी।

नवरात्रि के अंतिम दिन की बात है। मेरा पाँच वर्ष का भतीजा अमित अचानक किसी कारण से डर गया। वह बुरी तरह रोने-चिल्लाने लगा। जो भी उसे गोद में उठाने जाता, वह छिटककर उससे दूर जा खड़ा होता और आँखें फाड़कर उसकी ओर देखने लगता। दादा-दादी, माता-पिता सभी परेशान हो गए। बच्चा जोर-जोर से चिल्ला रहा था- तुम लोगों के इतने बड़े-बड़े दाँत हैं, तुम लोग मुझे खा जाओगे, मैं तुम्हारे पास नहीं आऊँगा। सभी हतप्रभ थे, कुछ समझ नहीं पा रहे थे। मैं जप में बैठा था। करीब आधे घण्टे से यह सिलसिला चल रहा था। आखिर में थक-हारकर सब लोग मुझे पुकारने लगे- शंकर देखो न मुन्ने को क्या हो गया है। हम लोगों से डर रहा है। कहता है हमारे सिर पर सींग है, हमारे बड़े-बड़े दाँत हैं, हम उसे खा जाएँगे।

सभी लोगों का ध्यान दूसरी ओर देख बच्चा चुपचाप जाकर एक मेज के नीचे दुबककर बैठ गया। उसकी आँखों में आँसू भरे थे। बच्चे को क्या कष्ट है यही अज्ञात था। मैंने सोचा सबसे पहले उसका भय दूर करना चाहिए। मैंने आँखें बंद कर गायत्री का ध्यान किया। एक हल्की सी आवाज सुनाई पड़ी-आचमनी का जल बच्चे को पिला। मैं आचमनी का जल लेकर उसके पास गया। मुझे पास देखकर बच्चा जल्दी से आकर मुझसे चिपक गया। गोद में उठाकर दुलारा तो देखा उसके मुख पर एक पूरी आश्वस्ति का भाव था। वह मेरे पास आकर अपने-आपको सुरक्षित महसूस कर रहा था।

ध्यान में मिले निर्देश के अनुसार मैंने आचमनी का जल पिलाया। बच्चा गोद में ही सो गया। इस घटना के बाद मेरे प्रति परिवार का मनोभाव बदल गया। फिर उन्होंने भी मांसाहार त्याग दिया और दीक्षा लेकर गायत्री परिवार से जुड़ गए।

मांसाहार आसुरी प्रवृत्ति है यह मैंने पुस्तकों में तो पढ़ा था, पर सरल स्वभाव शिशु के स्वच्छ हृदय में यह बात इस प्रकार मूर्त्त रूप में प्रकट हुई कि मेरे परिवार का वातावरण ही बदल दिया। इसे मैं गायत्री उपासना का ही प्रतिफल मानता हूँ।

**प्रस्तुति :- जयशंकर रावत**
**आसनसोल ( प.बंगाल )**

# पूज्य गुरुदेव ने की प्राणरक्षा

हमारा जन्म उड़ीसा में हुआ था। जब मैं करीब २४-२५ वर्ष का था, हमारे गाँव में भागवत कथा करने एक सन्त श्री रामचरणदास जी (मौनी बाबा)आते थे। मैं भी भागवत सुनता था। उसमें मैंने सुना कि शरीर नाशवान है। यह सुन कर मन में आता रहता था, यदि शरीर नाशवान है तो इसे रख कर क्या करूँगा।

एक दिन होली की पूर्णिमा रात्रि में, हाथ में जहर लेकर, शरीर को नष्ट करने का संकल्प लेकर सुनसान समुद्र के किनारे जा बैठा। जैसे ही जहर खाने (पीने) का प्रयास किया तो मेरे हाथ में झटका सा लगा। विषपात्र हाथ से छूट कर गिर गया। मैंने सोचा इस सुनसान में कौन आ गया! देखा लम्बा कुर्ता धोती पहने एक आदमी बोला- क्या पागल हो गये हो ? इसको नष्ट करने का अधिकार तुम्हें नहीं है। यह बात सुनकर मैं अचरज में पड़ गया। कोई आदमी यहाँ था नहीं। यह कहाँ से आ गया। मैंने पूछा- आप कौन हैं ? वह आदमी मुस्कुराया और बोला- आपको इस जीवन में बहुत काम करना है, जीवन को ऐसे नष्ट करने के लिए तुम्हारा जन्म नहीं हुआ है। यह बात बोलकर वह आदमी धीरे-धीरे समुद्र के अन्दर जाने लगा। जल में उसके पैर जमीन में चलने की तरह पड़ रहे थे। मैं ने भी पानी में उतरकर पकड़ने का प्रयास किया, लेकिन कुछ दूर जाकर मैं समुद्र की लहर में डूब गया और बेहोश अवस्था में समुद्र के किनारे आ गया। ईश्वर कृपा से ज़ब मुझे होश आया तब चारों तरफ से मछुआरे घेरे खड़े थे। मुझे अनुभव हो रहा था कि वह कोई साधारण व्यक्ति नहीं था।

मछुआरों को जब मैंने अपना परिचय दिया तो उन्होंने मुझे घर पहुँचा दिया। जब मौनी बाबा फिर से गाँव में भागवत कथा करने आए तो उन्होंने मुझे बुलवाया। फिर मैंने उनसे दीक्षा भी ले ली। करीब दो वर्ष बाद मैं जगन्नाथपुरी रथ यात्रा देखने गया था। उसी भीड़ में फिर मेरी मुलाकात मौनी बाबा से हो गई। वे मुझे एकांत में ले गए और राष्ट्र निर्माण के बारे में विचार विमर्श करने लगे। उन्होंने कहा- आपको मत्त जी के पास जाना है। वे हरिद्वार में हैं। गायत्री के बारे में, राष्ट्र निर्माण के बारे में समझाते हैं। वर्ष १९९६ में पहली बार गायत्रीतीर्थ शान्तिकुञ्ज हरिद्वार आया, गुरुजी (मत्त जी) के बारे में बाबाजी से सुन रखा था। मैं दो घंटे शान्तिकुञ्ज का दर्शन करता रहा। अचानक मुझे स्मरण हो आया, ज़हर पीने का प्रयास करते समय जिस व्यक्ति को मैंने देखा था, वही स्वरूप आचार्य श्रीराम शर्मा जी के चित्र में पाया। मैं बार-बार सोचने लगा कि इन्होंने ही मेरे प्राण की रक्षा की है। इस शरीर से वे क्या कार्य कराएँगे वही जाने।

मैं गौ रक्षा समिति में १९९८ में काम कर रहा था। उड़ीसा से बिहार प्रांत में आया। मैं चकाई में गौ रक्षा हेतु कार्य करने लगा। उसमें गायत्री परिवार के परिजन भी शामिल हो गए। धीरे-धीरे सम्पर्क बढ़ता गया। २००९ में ट्रस्ट का गठन हुआ। अब चकाई में गौशाला निर्माण, प्राकृतिक चिकित्सा के साथ-साथ आयुर्वेदिक

औषधि के निर्माण के कार्य में लगा हुआ हूँ। मैं गुरुकृपा से इस गायत्री परिवार से जुड़ गया हूँ। परम पूज्य गुरुदेव के विचारों पर चलकर समाज सेवा के कार्य में संलग्र हूँ। जिन्होंने मेरी प्राण रक्षा की है, यह जीवन अब उन्हीं का है।

**प्रस्तुति : उड़िया बाबा**
**जमुई ( बिहार )**

---

# सब में मेरा प्रभु समाया

आजीवन तपश्चर्या के लिए हिमालय तथा गंगा की गोद में निवास करने के लिए चले जाने पर हम विरक्त नहीं होने जा रहे हैं। तथाकथित वैरागी, संसार से उदासीन हो जाते होंगे। उसे माया, मिथ्या, स्वप्न अथवा भवबंधन मानते होंगे और जन संबंध छोड़कर अपने को मुक्त मानते होंगे। हमारी मान्यताएँ सर्वथा भिन्न हैं। संसार को हमने भगवान का विराट स्वरूप माना है। मनुष्यों को प्रभु का ज्येष्ठ और अन्य प्राणियों को कनिष्ठ पुत्र समझा है। विश्व वसुधा में हमें भगवान की दिव्य ज्योति प्रकाशमान दीखती है। सेवा को हम ईश्वर की पूजा-पद्धति मानते रहे हैं। उन सारे आदर्शों को उलटने नहीं जा रहे हैं। हमारी आस्थाएं दिन-दिन प्रगाढ़ और प्रबल ही होती चली आई है। सो ऐसे न समझा जाना चाहिए कि हम दूसरे तथाकथित 'वैरागियों' की तरह जन संपर्क छोड़ने जा रहे हैं और प्रगाढ़ आत्मीयता के स्नेह संबंधों को तिनके की तरह तोड़ने की तैयारी कर रहे हैं। न ऐसी हमारी पद्धति है, न आस्था। आत्मीयता, ममता, स्नेह, वात्सल्य और सद्भावना भरी जैसी मनोभूमि मिली है, उसे देखते हुए हमारे लिए यह संभव भी नहीं है।

---

# रोशन हुआ कुलदीपक का जीवन

मेरा भतीजा अमल कुमार पाण्डेय मेडिकल रिप्रेजेन्टेटिव था। साथ ही वह झारखण्ड में मेडिकल रिप्रेजेन्टेटिव एसोसिएशन में सेक्रेटरी भी था। उसकी सभी जगह अच्छी पकड़ थी। १९९८ के अक्टूबर-नवम्बर महीने की घटना है। अचानक उसे हेपेटाइटिस-बी हो गया और धीरे-धीरे बहुत घातक स्थिति में पहुँच गया। उसे राँची के अपोलो अस्पताल में एडमिट किया गया। उसका इलाज बहुत अच्छे तरीके से शुरू हो गया। लेकिन कोई दवा काम नहीं कर रही थी। धीरे-धीरे उसकी हालत बिगड़ती ही रही। उसका लीवर, किडनी, हर्ट सब एक साथ प्रभावित हो गया, जिस कारण वह मृतप्राय स्थिति में पहुँच गया।

हम लोगों ने उसे राँची में ही भारत के विख्यात ब्रेन एण्ड न्यूरो स्पेशलिस्ट डॉ० के० के० सिन्हा को दिखाया। उन्होंने देखने के बाद कोई सकारात्मक उत्तर नहीं दिया। उन्होंने कहा कि लड़का तो ९८ प्रतिशत खत्म हो चुका है। मात्र २ प्रतिशत ही उम्मीद है। वह भी भगवान के हाथ में है। यदि उसे २४ घण्टे के अन्दर प्लेटलेट्स चढ़ाया जा सके तो कुछ उम्मीद बन सकती है, यदि यह २४ घंटे जीवित रह सके।

उन दिनों राँची में प्लेटलेट्स उपलब्ध नहीं था। कलकत्ता से मँगाना पड़ता था। यह बहुत कठिन कार्य था। कहते हैं अच्छी दोस्ती भगवान की कृपा से मिलती है। उसके दोस्तों के अथक प्रयासों से यह कठिनतम कार्य संभव हो सका। जब डॉ० सिन्हा देखकर चले गए तो मैं स्वयं हॉस्पिटल के अधीक्षक से मिला एवं उनसे आग्रह किया कि मैं उसे देखना चाहता हूँ। मैं उसके स्वास्थ्य के लिए भगवान से आधा घंटा प्रार्थना करना चाहता हूँ। उन्होंने मेरा आग्रह स्वीकार कर लिया और मुझे अपने साथ सघन चिकित्सा कक्ष तक ले गए।

मैंने वहीं से एक धुली चादर ली और चादर बिछाकर पालथी मारकर बैठ गया। वहाँ पर एक डॉक्टर तथा दो नर्स उपस्थित थे, जिनकी वहाँ पर ड्यूटी थी। मुझे देखकर वे बोले कि यह तो खत्म हो चुका है। वास्तव में उसकी हालत बिल्कुल खराब होने के कारण वह मृतप्राय हो चुका था। उसकी पेशाब की नली से एक बूँद भी पेशाब नहीं आ रहा था। उसका पूरा शरीर फूल गया था। उसके पूरे हाथ पाँव सुन्न पड़े थे। ऑक्सीजन ने भी काम करना बंद कर दिया था। किसी भी प्रकार की हरकत नहीं हो रही थी। मैं वहीं उसके पैर के पास चादर डालकर बैठ गया तथा दोनों नेत्र बन्द करके सीधे शान्तिकुञ्ज में प्रज्ज्वलित अखण्ड दीप एवं गुरु देव माताजी के चरणों में प्रार्थना करने लगा।

मैं सबसे बेखबर ध्यान में तल्लीन था। लगभग २०-२५ मिनट हुए होंगे। मुझे ऐसा अनुभव हुआ जैसे गुरुदेव मेरे कान में कह रहे हैं कि घबड़ाओ नहीं, सब ठीक हो जाएगा। मुझे अखण्ड दीपक की लौ काफी तेज जलती प्रतीत हुई। हम

पूरी तरह से ध्यान मग्न हो गए थे, जिससे मुझे अपनी सुध भी नहीं रही। जब ध्यान टूटा तो देखा करीब ५० मिनट हो गया था। मैं हड़बड़ा कर उठा और अधीक्षक महोदय से २० मिनट देर होने के लिए माफी माँगी तथा निवेदन किया कि पुनः एक घण्टे बाद मुझे आने की अनुमति दे दें। उन्होंने बड़े ही सहज भाव से स्वीकृति दे दी। मैं पुनः एक घण्टे बाद उसी स्थान पर बैठकर महामृत्युंजय मंत्र और सूर्य गायत्री मंत्र का गायत्री मंत्र में संपुट लगाकर अखण्ड दीप के समीप होने की भावना करते हुए जप करने लगा। इसके पश्चात् करीब आधे घण्टे के बाद मैंने देखा कि उसे दो-दो मिनट पर एक-एक बूँद पेशाब हो रहा है। मैंने जाकर उसी डाक्टर से यह बात बताई, जिसकी ड्यूटी थी तो उन्होंने फिर वही वाक्य दुहराया। लेकिन मैंने हार नहीं मानी।

मैं वापस घर आ गया और शाम को सात बजे आदरणीया शैल जीजी से फोन पर भतीजे की स्थिति के बारे में सूचना दी। जीजी बोलीं कोई नशा या ड्रग्स लेता था क्या? मैंने बताया कि इन सबकी आदत उसे कभी नहीं रही। वे बोलीं कि स्थानीय गायत्री शक्तिपीठ में माँ के सामने अलग से दीपक प्रज्वलित कर दीजिए। गुरुदेव की कृपा से ठीक हो जाना चाहिए। मैं राँची स्थित गायत्री शक्तिपीठ आया और आदरणीया जीजी के कहे अनुसार वैसा ही किया। रात्रि में हम लोग सो गए थे। अचानक उठे तो किसी ने आकर बताया कि अमल को रात भर में ७०० एम एल पेशाब हुआ है। उसके लिए प्लेटलेट्स भी कोलकाता से आ गई थीं, जिसे चढ़ाने की प्रक्रिया शुरू हो गई है। गुरुदेव माताजी के प्रति श्रद्धा से मेरा हृदय भर उठा। पूरे हॉस्पिटल में यह चर्चा का विषय बन गया था कि आज भी धर्म से व्यक्ति की रक्षा होती है।

मुझे वहाँ के अधीक्षक महोदय ने भी बधाई दी। क्योंकि मेरे भतीजे की उम्र ३८ वर्ष की थी और उसने ३२ बार उसी हॉस्पिटल में रक्तदान किया था। इस कारण वह हॉस्पिटल के सभी डॉक्टर्स को प्रिय था। मैं तुरन्त उसके पास गया। देखा कि अब वह छटपटा रहा है। उसके पूरे शरीर में हलचल है। ऑक्सीजन वगैरह भी चालू हो गया था। मैंने पुनः एकान्त में बैठकर पूर्व की भाँति जप करना शुरू कर दिया। कुछ घण्टों के बाद वह होश में आ गया। होश में आते ही उसने मुझे देखा। उसके होंठ बोलने के लिए हिल रहे थे। बड़ी मुश्किल से उसके मुँह से 'बाबू' शब्द निकला। उसके मुँह से यह शब्द सुनकर मेरा हृदय बाग-बाग हो रहा था। अमल कुमार स्वस्थ हो गया। गुरु की इस असीम कृपा और प्यार को मैं जीवन भर नहीं भूल सकता।

**प्रस्तुति :- लल्लू पाण्डेय**
**चास, बोकारो ( झारखण्ड )**

# जब बस कण्डक्टर के रूप में सहायता की

सन् 2009 की बात है। नवम्बर का महीना था। मैं अपने मायके विहरा गाँव, जो बिहार के सासाराम जिले में है, गई थी। मेरी माँ की तबीयत खराब थी। मैं माँ को देखकर वापस टाटानगर में साकची को जा रही थी। मेरे साथ मेरा छोटा लड़का था। जब मैं बस स्टैण्ड आई, कण्डक्टर से टिकट के लिए कहा तो वह बोला कि सभी सीट पहले से बुक है। मैं बहुत गिड़गिड़ाई। बहुत प्रार्थना की कि भैया हमको जाना बहुत जरूरी है। अगर यह बस मुझे नहीं मिली तो इस समय मैं छोटे बच्चे के साथ कहा जाऊँगी ? थोड़ी देर में साँझ घिर जाएगी। लेकिन मेरी बात का उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। कहने लगा एक सप्ताह बाद आइए, तो आपको सीट मिल जायेगी।

मैं बहुत सोच में पड़ गई। और कोई साधन भी नहीं था जिससे मैं चली जाती। अचानक मुझे ट्रेन की बात याद आई कि क्यों न ट्रेन से चलूँ। लेकिन बाद में याद आया कि आज रविवार का दिन है। आज टाटानगर के लिए कोई ट्रेन नहीं थी। मेरा गाँव स्टेशन से बहुत दूर था। दिन का 2 बज गया था। अब मेरा रास्ता हर जगह से बंद हो गया था। न मैं मायके जा सकती थी और न ससुराल।

धीरे-धीरे सूरज ढल रहा था। शाम हो रही थी। उसी क्रम में मेरी चिन्ता भी बढ़ती जा रही थी। मिथिला का नियम है भदवा तिथि में कहीं निकला नहीं जाता है। दुर्भाग्य! आज वही तिथि पड़ी थी। अब तो मेरा मन और घबरा गया। और कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था। मैं फूट-फूट कर रोने लगी। मुझे रोते हुए देखकर मेरा लड़का अभिजीत भी परेशान हो रहा था। लड़का बोला घबराओ मत। एक बार मैं फिर कण्डक्टर से मिलूँ, अगर होगा तो आगे की तारीख का टिकट कटा लूँगा। जैसे ही हम लोग वहाँ पर गए, हमें एक मन्दिर दिखा। जिसमें माताजी-गुरुजी का फोटो लगा हुआ था। गुरुदेव-माताजी के चित्रों को देखकर मैं फिर रोने लगी और आर्त्तभाव से प्रार्थना करने लगी। हे गुरुदेव! अब रात होने जा रही है। बस जाने वाली है। मैं महिला जाति रात में इधर-उधर कहाँ भटकती फिरूँगी। अब तो आप का ही सहारा है।

अब गाड़ी स्टार्ट हो गई थी। मैं बस को अपलक निहारे जा रही थी। अचानक बस कण्डक्टर पर नजर पड़ी, तो सन्न रह गई। वह हू-ब-हू गुरुजी जैसा दिख रहा था। इसी बीच वह टिकटों का हिसाब करने लगा। ड्राइवर और कण्डक्टर के बीच बातें होने लगीं। कण्डक्टर कह रहा था कि दो सीट का पैसा कम है। बस मालिक बोल रहा था कि जब एक महीना से पूरी सीट फुल है तो पैसा कहाँ से कम हो जाएगा? जब बस में अन्दर जाकर देखा गया तो बीच में दो सीटें खाली थी। इतना सुनते ही वहाँ भीड़ लग गई। भगदड़ मच गई। सभी यात्रियों को जाने

की जल्दी थी। कोई कहता हम एक हजार देंगे, कोई कहता हम दो हजार देंगे। सभी रुपए निकालने लगे।

इसी बीच कण्डक्टर जोरों से चिल्लाया, मैं किसी का रुपया नहीं लूँगा। अभी कुछे घंटे पहले एक माँ बेटा जो टिकट के लिए घूमकर गए हैं, मैं उन्हीं को यह सीट दूँगा। इतना सुनते ही खुशी के मारे आँसू निकल आए। मैंने श्रद्धापूर्वक गुरु देव-माताजी को प्रणाम किया। तब तक मेरा बेटा भी दौड़कर मेरे पास आया और बोला- माँ टिकट की व्यवस्था हो गई, जल्दी चलो। हम बस की ओर दौड़ पड़े। जब हम बस पर चढ़े तो सभी बस यात्री शोर करने लगे। कहने लगे पीछे जाइए, पीछे जाकर बैठिए। हम लोगों ने एक महीना पहले टिकट बुक कराया है। इसलिए आप पीछे जाकर बैठिए।

तभी कण्डक्टर आए और बोले, आप परेशान न हों। उन्होंने मुझे और मेरे बेटे को 16-17 नम्बर की सीट पर बैठा दिया और बोले- आप लोग आराम से बैठिए। चिन्ता न करें। मैं आता-जाता रहूँगा। इस तरह जहाँ-जहाँ बस रुकती, वे हम लोगों से पूछते रहते कि कोई कठिनाई तो नहीं है? इस तरह हम सुबह 9 बजे राँची पहुँच गए। वहाँ से दूसरी बस द्वारा टाटानगर सही सलामत पहुँच गए।

इस तरह से गुरुदेव ने बस में आकर मेरी सहायता की। अब सोचती हूँ तो लगता है कि मेरे प्रार्थना करने पर गुरुदेव मेरी सहायता करने स्वयं चले आए! आज भी जब मैं घटना को सोचती हूँ तो गुरुदेव की कृपा का सहज ही अहसास हो जाता है और हमारी आँखें श्रद्धा से नम हो जाया करती हैं।

**प्रस्तुति :- शशिप्रभा वर्मा**
**साकची, पूर्वी सिंहभूम ( झारखण्ड )**

## प्रसन्नता का राज

अच्छी आदतें अपनाने वाले ही प्रसन्न रह सकते हैं। कुढ़न का कारण बाहरी कठिनाइयाँ उतनी नहीं होतीं जितनी कि भीतर की कुसंस्कारिता। सफलता के मार्ग में भी वे ही सबसे अधिक बाधक होती हैं। दूसरों का सहयोग पाने में भी अपने ही दुर्गुणों के कारण व्यवधान उत्पन्न होता है। अपनी आदतों को सुधारंना इतना सरल और इतना उपयोगी काम है कि उसे सबसे प्रथम हाथ में लिया जाना चाहिए।

(अखंड ज्योति सितम्बर -१९७८, पृष्ठ ३६)

# लेडी डॉक्टर को मिला दिशा निर्देश

घटना सन् २००० ई. की है। होली के दो दिन बाद ही मेरी बड़ी बेटी गायत्री का आकस्मिक रूप से निधन हो गया। बेटी का दाह संस्कार सम्पन्न होने के तीसरे या चौथे दिन पत्नी के साथ तुलसीपुर लौट आया। शादीशुदा जवान बेटी की मौत के सदमे से मेरी पत्नी माया बुत में बदल चुकी थी। खाना-पीना छोड़कर घर के किसी कोने में पड़ी रहती थी। दो-तीन दिन बाद पत्नी के पेट में भीषण दर्द शुरू हुआ। मैं उन्हें तुरन्त जिला चिकित्सालय ले गया। वहाँ डॉ. आर.पी. वर्मा ने महिला परीक्षण में असमर्थता व्यक्त करते हुए यह केस जिला चिकित्सालय, बलरामपुर को रेफर कर दिया।

बलरामपुर अस्पताल में सर्जरी विभाग की डॉ. अर्चना गुप्ता ने जाँच शुरू की। प्रारम्भिक जाँच से वे किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सकीं। इसलिए कई विशेष प्रकार की जाँच की प्रक्रिया शुरू की गई।

उसी दिन मुझे मिशन के पूर्व निर्धारित कार्यक्रम में जाना था। जाँच की इस लम्बी प्रक्रिया में जब देर होने लगी, तो अन्ततः मैं माया को छोटे भाई की पत्नी प्रेमू के साथ लेडी डॉक्टर के भरोसे छोड़कर चला आया। कार्यक्रम समाप्त होने के बाद जब मैं आवास पर पहुँचा, तो पता चला कि वे अभी तक अस्पताल से नहीं लौटी हैं। चिन्तातुर होकर हम दोनों भाई मोटर साइकिल से अस्पताल पहुँचे। माया थकी-हारी सी वहीं बैठी थी। उसने मुझे देखते ही उतावलेपन से कहा- डॉ. अर्चना से मिलिए। वे आपके बारे में कई बार पूछ चुकी हैं।

मैं घबराया हुआ डॉक्टर के पास गया। उन्होंने मुझे बताया कि मरीज के पेट में बहुत बड़ा ट्यूमर है। कॉम्प्लिकेशन्स बहुत बढ़ गए हैं। तुरन्त ऑपरेशन करना जरूरी है।

अस्पताल तो सरकारी था, पर बड़े ऑपरेशन के लिए बहुत सारी दवाइयाँ बाहर से खरीदकर लानी पड़ती थीं। सो मैंने सकुचाते हुए पूछा-पैसे कितने खर्च होंगे? आठ हजार रुपये-लेडी डॉक्टर ने यह कहते हुए दवाओं की लिस्ट मेरी तरफ बढ़ा दी।

मेरे पास उस समय मात्र ३,००० रुपये थे। बाकी के पाँच हजार अभी कहाँ से पूरे होंगे, यह समझ में नहीं आ रहा था। लेकिन चिन्ता का कोई भाव मैंने अपने चेहरे पर नहीं आने दिया और कहा-आप ऑपरेशन की तैयारी करें। मैं ये दवाएँ लेकर अभी आता हूँ।

बाकी के पैसे का इन्तजाम छोटे भाई सत्यप्रकाश ने किया। सारी दवाएँ आ गईं। ऑपरेशन की तैयारी पूरी हो चुकी थी। रात के आठ बजे पत्नी को ऑपरेशन थिएटर ले जाया गया। लेप्रोस्कोपिक के जरिये ऑपरेशन किया गया, लेकिन सफलता नहीं मिली। उसी क्षण दूसरे ऑपरेशन का निर्णय लिया गया। पेट की दोनों ओर पसली के नीचे से बहुत बड़ा चीरा लगाकर ट्यूमर निकालने की कोशिश की गई, लेकिन इसमें भी सफलता नहीं मिली। डॉ. अर्चना बदहवासी की हालत में ऑपरेशन थियेटर से बाहर निकलीं।

सत्यप्रकाश की पत्नी दरवाजे पर ही बैठी थी। हड़बड़ाए हुए स्वर में डॉ. ने उनसे कहा-मेरे अब तक के जीवन में कभी ऐसा नहीं हुआ। मैंने दो ऑपरेशन किए, लेकिन दोनों फेल हो गए। तब तक लपकते हुए मैं भी उनके पास आ चुका था। मुझे देखते ही उन्होंने कहा-कुछ बड़े डॉक्टरों को बुलाकर तीसरा ऑपरेशन करना पड़ेगा। नतीजा कुछ भी हो सकता है। आप जल्दी फैसला कीजिए।

डॉ. अर्चना की बातें सुनकर मैं अन्दर तक काँप उठा। हॉस्पीटल में ऑक्सीजन तक की भी व्यवस्था नहीं है, मोमबत्ती और दो सेल के एक टार्च की रोशनी में दोनों ऑपरेशन हुए हैं। ऐसे में तीसरा ऑपरेशन! यह सब सोचकर मेरी आँखें बन्द हो गईं। धड़कन लगभग रुक सी गई थी। सिर से पैर तक चिन्ता के सागर में डूबा हुआ परम पूज्य गुरुदेव और वंदनीया माता जी का ध्यान करने लगा।

कुछ ही पलों के बाद मैं आत्मविश्वास से भरा हुआ था। मैंने डॉक्टर से सहज स्वर में कहा-परिणाम ईश्वर पर छोड़िए, मैं तीसरे ऑपरेशन के लिए तैयार हूँ।

थोड़ी ही देर में विशेषज्ञ डॉक्टरों की टीम पहुँच गई। तीसरा ऑपरेशन शुरू हुआ। पेट में ६-७ इंच का लम्बा चीरा लगाकर दो से ढाई किलो का ट्यूमर बाहर निकाल लिया गया। तीसरा ऑपरेशन पूरा होने में सुबह के तीन बज गए थे। पत्नी को ऑपरेशन थियेटर से बेहोशी की हालत में बाहर लाकर वार्ड के बेड पर लिटा दिया गया। मैं बेड के पास ही रखे हुए स्टूल पर बैठ गया।

ब्रह्ममुहूर्त की उपासना का समय हो चुका था। मेरे पास पूज्य गुरुदेव तथा वन्दनीया माता जी का फाइबर का बना एक पुराना चित्र था। उस चित्र को सामने के टूल बाक्स पर सजाकर जप करने लगा। अभी जप की पहली माला भी पूरी नहीं हुई थी कि किसी ने मेरे दोनों कंधों को जोर से झकझोरा।

मैंने हड़बड़ाकर आँखें खोलीं। देखा-सामने हकबकाई सी डॉ. अर्चना खड़ी हैं। उन्होंने अपने मोती जैसे दाँतों के बीच टूथ-ब्रश दबा रखा था। आँखें आश्चर्य से फटी हुई थीं। मैं कुछ पूछता ,इसके पहले ही उन्होंने जोर से कहा-पूजा बन्द कीजिए। मेरी आँखों के सामने अंधेरा छा गया। मुझे लगा कि शायद मेरी पत्नी दम तोड़ चुकी है। मेरी हालत से बेखबर डॉक्टर ने उंगली से इशारा करते हुए पूछा-यह चित्र किसका है? मैं तो, जैसे, कुछ सुन ही नहीं सका। चुपचाप डॉ. अर्चना को देखे जा रहा था- एकटक।

मेरी चुप्पी ने उनका उतावलापन बढ़ा दिया। वे पहले से भी ऊँची आवाज में बोलीं-मैं पूछती हूँ, यह चित्र किसका है? अब मेरा ध्यान टूटा। मेरी समझ में आ गया कि मामला कुछ और है।

चित्र को लेकर उनकी जिज्ञासा को देखते हुए मैं अनायास बोल पड़ा-क्यों, क्या बात है? डॉक्टर ने उत्तर पाने के उतावलेपन में अपना सवाल फिर से दुहराया। मेरी नजर चित्र पर गई। चित्र में वन्दनीया माता जी के साथ गोल गले का खादी का कुर्त्ता पहने परम पूज्य गुरुदेव मुस्कुरा रहे थे।

मैंने डॉक्टर से कहा-ये मेरे गुरुदेव हैं। डॉ. अर्चना फटी-फटी आँखों से चित्र को देखे जा रही थीं। कई पल बीत गए। फिर घोर आश्चर्य के स्वर में उन्होंने कहा-

यही है...यही वह व्यक्ति है, जो पूरे ऑपरेशन के दौरान मेरी हिम्मत बँधाकर कदम-कदम पर मुझे निर्देश देता रहा। इतना मेजर ऑपरेशन करना मेरे वश की बात नहीं थी। ऐसा ही खादी का कुर्ता पहने हुए यह आदमी ऑपरेशन थियेटर में बिल्कुल मेरे साथ खड़ा था। मैंने अपने दिमाग से कुछ भी नहीं किया। जो-जो इसने कहा, मैं करती चली गई। जरा भी घबराहट होती थी, तो यह मेरा हौसला बढ़ाने लग जाता था। एक तरह से इसने मेरा हाथ पकड़कर ऑपरेशन पूरा कराया। इतनी बड़ी सफलता का सारा श्रेय इसी आदमी को जाता है।

लगातार बोलते-बोलते वह हाँफने लग गई थीं। थोड़ी देर तक जोर-जोर से साँसें लेती रहीं, फिर कहना शुरू किया-ऑपरेशन की आपाधापी में मैंने यही सोचा था कि ये बाहर से बुलायी गयी डॉक्टरों की टीम के बड़े डॉक्टर होंगे। ऑपरेशन पूरा करने के बाद जब हम बाहर निकले, तो मैंने इनसे बात करनी चाही। लेकिन यह मुझे कहीं नजर नहीं आए। मैंने सोचा, बड़े डॉक्टर हैं, बाहर निकलते ही गाड़ी में बैठकर घर चले गए होंगे। अब सामने की यह तस्वीर देखकर और आपके बताने पर भी मुझे विश्वास नहीं हो रहा है कि ये आपके गुरुदेव ही हैं।

डॉ.अर्चना की बातें सुन-सुनकर मेरी आँखों से आँसुओं की अविरल धार बहती जा रही थी। गुरुसत्ता की इस असीम अनुकम्पा से मैं अभिभूत हो गया था। डॉक्टर के अन्तिम शब्दों को सुनकर मैं सुबक-सुबक कर रोने लगा। डॉक्टर ने मेरे कन्धे पर हाथ रखकर मुझे शान्त करते हुए अनुनय के स्वर में कहा-भगवान सरीखे अपने गुरुदेव के बारे में विस्तार से बताइए। ये कौन हैं, कैसे हैं, इनका नाम क्या है?

आँसू पोछते हुए मैंने गद्गद् स्वर में कहा-मेरे गुरुदेव का नाम पं. श्रीराम शर्मा 'आचार्य' है। ये कोई साधारण मानव नहीं हैं। ये तो महाकाल के अवतार हैं। डॉ. अर्चना ने सहमति के भाव में सिर हिलाते हुए पूछा- ये रहते कहाँ हैं, क्या आप मुझे इनसे मिलवा सकते हैं?

डॉक्टर के इस प्रश्न पर मुझे हँसी आ गई। मैंने कहा-वे तो इस संसार के कण-कण में व्याप्त हैं। मेरी भाव विमुग्धता देखकर डॉक्टर के होठों पर भी हँसी आ गई। उन्होंने कहा-आपके गुरुदेव की सर्वव्यापकता तो मैं अपनी आँखों से देख ही चुकी हूँ। आप कृपा करके मुझे इतना भर बता दें कि वे इन दिनों मुझे कहाँ मिलेंगे।

उनका आशय समझ कर मैंने कहा-पू. गुरुदेव सन् १९९० में ही शरीर के बन्धन से मुक्त हो चुके हैं। अपने इस जीवन काल में उन्होंने युग परिवर्तन की जो ज्योति जलाई, उसे सम्पूर्ण विश्व में फैलाने के लिए वे विभिन्न प्रकार की योजनाओं का संचालन सूक्ष्म जगत से करते रहते हैं।

यह सुनकर डॉ. अर्चना के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। बड़ी कठिनाई से अपने-आप को सहज करते हुए उन्होंने कहा-धन्य हैं आपके गुरुदेव! मेरा दुर्भाग्य है कि मैं उनसे मिल नहीं सकूँगी। पीड़ा से भरे हुए उनके ये शब्द सुनकर मैंने उन्हें सान्त्वना देते हुए गायत्री तीर्थ, शान्तिकुंज के बारे में विस्तार से बताया और विगत छह दशकों से चलायी जा रही युग निर्माण योजना की जानकारी दी।

डॉ. अर्चना ध्यान मग्न होकर मेरी बातें सुन रही थीं। उनकी आँखों में मेरे प्रति गहरी श्रद्धा का भाव था-शायद यह सोचकर कि मुझे ऐसे सर्व समर्थ गुरु की शरण में रहने का सौभाग्य मिला है। उन्होंने अपनत्व दिखाते हुए अधिकारपूर्वक कहा- ऑपरेशन का सारा खर्च मैं उठाऊँगी। अब तक जितने की दवाएँ आई हैं, उसका हिसाब मुझे बता दीजिए। भुगतान मैं करूँगी। आगे से आपको कुछ भी लाने, करने की कोई जरूरत नहीं है। अब आप दोनों यहाँ मेरे अतिथि हैं।

इस प्रकार डॉ. अर्चना को सहयोग करने की प्रेरणा देकर पूज्य गुरुदेव ने मेरा आर्थिक संकट भी दूर कर दिया। बेहोशी की हालत में २४ घंटे डिप चलती रहती थी, खून की बोतलें और ढेर सारी महँगी दवाएँ भी बाहर से ही मँगवानी पड़ती थीं। वायदे के मुताबिक सारा व्यय भार डॉ. अर्चना ने ही उठाया।

पाँच दिनों के बाद पत्नी को होश आया। होश आने पर रिकवरी तेजी से शुरू हुई। इतने बड़े आपरेशन के बाद भी २०वें दिन ही अस्पताल से छुट्टी मिल गई। पत्नी को भाई के घर छोड़कर मैं अगले ही दिन शान्तिकुंज के लिए चल पड़ा। शान्तिकुंज पहुँचकर मैं श्रद्धेया शैल जीजी से मिलने गया। मेरे साथ तुलसीपुर के पाँच-सात परिजन भी थे।

मैं जैसे ही जीजी को प्रणाम करने झुका, वह तुरंत पूछ बैठीं-भैया। कहिए, वे ठीक हैं न? मैंने कहा-कौन? वे बोलीं-क्यों, पत्नी का ऑपरेशन हुआ है न? मैं चकित होकर बोल पड़ा- आपसे किसने कहा? किंचित विस्मय से भरी जीजी ने उत्तर दिया-चार-पाँच दिन पहले ही तो आप स्वयं आकर पत्नी की प्राण रक्षा के लिए सामूहिक यज्ञोपासना का अनुरोध करके गए थे।

मैं कुछ बोल नहीं सका। मुझे आश्चर्य में डूबा देखकर श्रद्धेया जीजी ने आँखें बन्द कर लीं। कुछ ही पलों बाद आँखें खोलकर मुस्कुराते हुए कहा-पूज्य गुरुदेव ने उन्हें नया जन्म दिया है। गुरुदेव की कृपा दृष्टि आप पर बनी हुई है। निश्चिन्त होकर जाइए। आगे भी सब ठीक रहेगा।

वापसी में सीढ़ियों से उतरते हुए यही सोचता जा रहा था कि जब मैं आज से ५ दिन पहले बलरामपुर के जिला अस्पताल में था, तो मेरे रूप में जीजी के पास कौन आ सकता है। तभी कुछ ऐसी अन्तश्चेतना जागी कि इस पहेली का हल मुझे मिलता चला गया। जीवन में कर्म के महत्व को प्रतिपल आचरण से प्रतिपादित करने वाले योगीराज पहले ऑपरेशन थियेटर में डॉ. अर्चना को राह दिखाते रहे और बाद में मेरा ही रूप धरकर मेरी पत्नी की प्राण रक्षा के लिए युगतीर्थ शांतिकुंज में सामूहिक साधना की व्यवस्था बनाने चले आए।

**प्रस्तुतिः चन्द्रमणि शुक्ल**
**देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार( उत्तराखण्ड )**

# गुरु संरक्षण में किया गंगा स्नान

मेरी लड़की का विवाह सन् २००५ में १७ फरवरी को शांतिकुंज में होना निश्चित हुआ। शान्तिकुञ्ज में शादी होना मेरे क्षेत्र में चर्चा का विषय बना हुआ था। मेरे गाँव घर के लोगों एवं रिश्तेदारों को मिलाकर लगभग ७०-८० लोग शांतिकुंज पहुँचे। बहुत से लोग ऐसे थे जिन्होंने शान्तिकुञ्ज पहली बार देखा था। सभी लोग बहुत उत्साहित थे। तीर्थ में विवाह संस्कार और शान्तिकुञ्ज का दिव्य दर्शन दोनों का लाभ एक साथ पाकर सभी के हृदय पुलकित थे।

विवाह संस्कार नियत तिथि को बड़े अच्छे ढंग से सम्पन्न हुआ। विवाह संस्कार सम्पन्न होने के बाद भोजन आदि के पश्चात् बिटिया की विदाई पाँच बजे शाम को हो गयी। मेरी इच्छा और संकल्प था कि अगर मेरी लड़की की शादी हो जाएगी तो मैं गंगा नहाऊँगी। शान्तिकुञ्ज में शादी होने से मेरे दोनों संकल्प आसानी से पूरे हो रहे थे। शादी तो हो ही चुकी थी। बाकी बचा गंगा स्नान। हमें बहुत सारे और भी काम करने थे। चूँकि शादी में कन्या पक्ष से काफी लोग थे। सभी हर चीज देखना सुनना चाह रहे थे और सभी लोगों को दीक्षा भी दिलवानी थी, इसलिए रात में मैंने अपनी चाची से कहा कि अगर गंगा स्नान की बात सभी को मालूम होगी तो सुबह हम लोग स्नान नहीं कर पाएँगे। सभी तैयार होंगे तो सारा कार्यक्रम लेट हो जाएगा। करीब पचास लोग दीक्षा संस्कार के लिए तैयार थे, इसलिए हमने योजना बनाई कि २.३०-३.०० बजे के आसपास हम दोनों उठकर चुपचाप बिना किसी को बताए गंगा स्नान को जाएँगे। तुरन्त स्नान कर जल्दी वापस भी आ जाएँगे।

दूसरे दिन सुबह मैं और मेरी चाची चुपचाप उठकर गंगा स्नान के लिए चल दिए। शान्तिकुञ्ज में तो सब कुछ सामान्य था। लेकिन जब मैं गेट से बाहर सप्तऋषि आश्रम के पास पहुँची तो मुझे बहुत भय लगने लगा। जाड़े का दिन था। कुहरा भी छाया हुआ था। सड़क पर एक दो व्यक्ति चलते हुए दिखाई पड़ रहे थे। धीरे-धीरे आगे बढ़ने पर एकदम सुनसान रास्ता था। मैं अन्दर ही अन्दर बहुत डर रही थी। जाने कितने प्रकार के भाव आ रहे थे। मैं बहुत डरी हुई थी। लेकिन अपने डर को चाची पर प्रकट नहीं होने दिया। चाची ने कहा- रास्ता सुनसान है, तो मैंने कहा कोई बात नहीं, यहाँ कोई डर नहीं रहता। इधर शान्तिकुञ्ज का क्षेत्र है सुरक्षित रहता है। उनको सांत्वना दे रही थी किन्तु मैं अन्दर ही अन्दर गुरुदेव माताजी से प्रार्थना कर रही थी कि गुरुदेव इतनी जल्दी आकर बहुत बड़ी गलती की है। अगर कुछ हो जाता है तो कोई जान भी नहीं पाएगा कि हम लोग कहाँ हैं। गुरुदेव रक्षा करें। अब ऐसी गलती दुबारा नहीं होगी। उस समय मैं एकदम बीच रास्ते पर थी, शांतिकुंज की ओर का रास्ता भी सुनसान था। इस स्थिति में कुछ समझ में नहीं आ रहा था। मैं जल्दी-जल्दी गुरुदेव का स्मरण कर आगे बढ़ रही थी। सोचा घाट पर कोई न कोई स्नान करते मिल ही जाएगा।

लेकिन मेरा सोचना एकदम गलत था। जब मैं घाट पर पहुँची तो वहाँ एकदम सुनसान था! गंगा की लहरें भी बिल्कुल शान्त थीं। मेरा हृदय भय के मारे काँप रहा था। इतना सब सोचने के बावजूद मैंने अपने भय को अन्दर ही छिपाए रखा। चाची को नहीं बताया। वह इससे और डर जाती। यही सब सोचकर गुरुदेव का नाम लेकर मैं सीढ़ियों के नीचे उतर गई। मन में आया अब आ ही गई हूँ तो स्नान के अलावा कोई रास्ता नहीं है। मैंने गंगा माँ को प्रणाम किया और स्नान करने लगी।

अचानक मेरी निगाह सीढ़ियों के ऊपर पड़ी। घाट पर घना कुहरा छाया हुआ था। उसी कुहरे में देखा एक वृद्ध पुरुष सफेद धोती-कुर्ता पहने दोनों हाथ पीछे किए एक छोर से दूसरे छोर तक टहल रहे हैं। मैंने सोचा पता नहीं कौन है ? इनको दिखाई भी नहीं पड़ता कि औरतें नहा रही हैं। ये यहाँ पता नहीं क्या कर रहे हैं। चाची की भी निगाह पड़ी वह भी बोली कोई बाबा टहल रहें हैं तो मैंने कहा ठीक हैं टहलने दो। हम दो लोग हैं डरने की कोई बात नहीं। इस प्रकार हम लोग स्नान आदि करके गंगाजी का पूजन करने के बाद सीढ़ियों पर चढ़ते हुए घाट की ओर बढ़ने लगे।

लेकिन यह क्या! जैसे ही हम लोग घाट के पास पहुँचे वहाँ वह बाबा न जाने कहाँ गायब हो गए। हम लोग सोच में पड़ गए कि ये इतनी जल्दी कहाँ गायब हो गए। काफी देर सोचने के बाद हमने शान्तिकुञ्ज की ओर प्रस्थान किया। तब तक रास्ते में काफी चहल-पहल हो चुकी थी। मेरा डर न जाने कहाँ गायब हो चुका था। दिमाग पर बहुत जोर देने के बाद जब मैंने उस वृद्ध पुरुष का ध्यान किया तो लगा वे तो साक्षात् गुरुदेव ही थे। हम डरें नहीं, कोई दुर्घटना न हो इसलिए वह अपनी उपस्थिति का आभास देकर चले गए। इस घटना को आज भी याद करती हूँ तो अफसोस होता है कि वे आए और हम उन्हें पहचान भी न पाए। जाने कितनी बातें उस समय मैंने उनको कह डालीं। लेकिन भक्तवत्सल गुरुदेव हमेशा अपने बच्चों का ध्यान रखते हैं।

**प्रस्तुति : श्रीमती ममता सिंह**
**बहराईच ( उत्तरप्रदेश )**

# सजल संवेदना से हुई निहाल

मेरी शादी १९८८ में हुई थी। मेरे अभिभावकों ने मेरे पति की पढ़ाई देखकर मेरी शादी तय कर दी थी। मेरे पति एग्रीकल्चर से एम० एससी० कर रहे थे। पिताजी ने सोचा कि लड़का अच्छी पढ़ाई कर रहा है, सर्विस कहीं न कहीं लग ही जाएगी। मेरे मायके में बिजनेस का काम होता था। शादी के बाद धीरे-धीरे परेशानी बढ़ती ही चली गई। मेरे पति इलाहाबाद में कम्पिटीशन की तैयारी कर रहे थे। काफी मेहनत कर रहे थे। दिन रात तैयारी में लगे रहने के बावजूद कोई सफलता नहीं मिली। इससे मन बहुत दुखी रहने लगा। इधर दो बार मैं गर्भवती हुई, किन्तु दोनों बार बच्चे खराब हो गए। मैं इन सब बातों से बहुत टूट चुकी थी। मैं दिन रात रोया करती थी।

इन्हीं दिनों मैं अपने मायके गई हुई थी। मेरा वहाँ भी वही हाल था। मुझे दिन रात चिन्तित देखकर मेरे पिताजी बहुत परेशान रहते थे। शारदीय नवरात्रि नजदीक आ गई थी। तुलसीपुर के विधायक श्री कमलेश सिंह जी सपरिवार शान्तिकुञ्ज जाने के लिए तैयार थे। मेरे चाचा (गुलजारी लाल जी) चाची तथा उनकी लड़की भी साथ जा रहे थे। मेरे पिताजी से चाचाजी ने कहा कि एक सीट खाली है। अगर कोई चलना चाहे तो शान्तिकुञ्ज जा सकता है। चाचाजी की बातों को सुनकर मेरे पिताजी ने कहा कि किसी को क्यों, नीरू को ले जाओ। वह दामाद के सर्विस न मिलने और बच्चे की घटना से दिन-रात रोती रहती है। शायद वहाँ जाने से उसका भाग्य सँवर जाए। इस पर चाचाजी ने कहा कि क्या बात करते हो! सीट न भी खाली होती तो भी हम उसको ले जाते। आप उसको भेज दीजिए। माँ के आशीर्वाद से सब ठीक हो जाएगा। पिताजी ने मुझको यह बात बताई तो मेरे मन में आशा का संचार हुआ। मुझे विश्वास हो गया कि अब मेरे कष्ट ज्यादा दिन नहीं रहेंगे। मैं नवरात्रि में शान्तिकुञ्ज पहुँची। मैंने वहाँ नौ दिन के अनुष्ठान का संकल्प लिया। मेरा अनुष्ठान निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।

इसके पश्चात् मेरे चाचाजी मुझे लेकर माताजी के दर्शन हेतु पहुँचे। उन्हें देखकर माताजी बोलीं- कहो बेटा कैसे हो? तो चाचाजी ने कहा- माताजी मैं क्या बताऊँ, अगर बच्चे दुखी हैं तो बाप कैसे सुखी रह सकता है। यह मेरे बड़े भइया की लड़की है, लेकिन उसे अपनी बेटी जैसा ही मानता हूँ। इसकी शादी के तीन साल हो गए। भाई साहब ने पढ़ाई देखकर बेटी की शादी कर दी थी। लेकिन दामाद को नौकरी आज तक नहीं मिली है। और इसके दो बच्चे भी खराब हो गए हैं। जिसके कारण यह बहुत परेशान रहती है। दामाद के लिए दुकान खुलवा दूँ। क्या यह ठीक रहेगा?

चाचाजी की बातें सुनकर मेरा सर सहलाते हुए माताजी कुछ क्षण शान्त हो गईं। उसके पश्चात् बोलीं- गुलजारी परेशान मत होओ, दामाद की बड़ी अच्छी सरकारी नौकरी लगेगी। और इसके दो तीन बच्चे भी होंगे। माताजी के मुख से उनकी वाणी सुनकर मेरी आँखों से आँसू आ गए। मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि माँ का आशीर्वाद अवश्य फलीभूत होगा।

कुछ दिन बाद मेरे पति की कृषि विभाग में नौकरी लगी। उसके पश्चात् उत्तरप्रदेश लोक सेवा आयोग से नायब तहसीलदार के पद पर चयन हुआ। माँ के आशीर्वाद से मेरे तीन बच्चे भी हुए जो पूर्ण स्वस्थ हैं। इस घटना के बाद से मेरे ससुराल के लोगों को भी गुरुदेव-माताजी के प्रति अनन्य श्रद्धा हो गई। आज हम सभी लोग गुरुकार्य में संलग्न हैं। गुरुदेव-माताजी के आशीर्वाद से मुझे सब कुछ मिला है, जिसकी मुझे आवश्यकता थी। हम उनकी कृपा से अभिभूत हैं।

**प्रस्तुतिः-श्रीमती नीरू**
**बलरामपुर ( उत्तरप्रदेश )**

---

# बोन कैंसर से मिली मुक्ति

वर्ष १९८० में ससुराल के एक भाई लाल बिहारी जी के माध्यम से मिशन की जानकारी हुई। तब से मैं पूर्णरूपेण गुरुजी एवं मिशन से जुड़ गई।

वर्ष १९८७ की बात है मुझे बोन टी०बी० हो गई थी। काफी इलाज कराया। कोई फायदा नहीं हुआ। मेरी बीमारी में करीब तेरह-चौदह हजार रुपये लग गए। लेकिन मैं ठीक नहीं हुई।

मेरे गाँव के लोग शान्तिकुञ्ज आ रहे थे। लालबिहारी जी को मेरी बीमारी की जानकारी थी। उन्होंने कहा- तुम परेशान मत होओ। वंदनीया माताजी के पास चले जाओ। वे स्पर्श कर देंगी, तुम्हारी बीमारी ठीक हो जाएगी। मैं ९ दिन का सत्र करने आयी थी साथ में काफी लोग थे। मैंने नौ दिन का सत्र पूरा किया। सत्र के दौरान मैं माताजी से मिली तो उन्हें अपने बीमारी के बारे में बताया। मातजी ने मुझे प्यार से स्पर्श किया और कहा- 'बेटी चिंता मत करो, तुम हमारा काम करो हम तुम्हारा काम करेंगे'।

मैंने सोचा मुझे संस्कृत नहीं आती, पढ़ना नहीं आता, कैसे काम करूँगी! लेकिन माताजी की कृपा से घर आते ही मेरी बीमारी ठीक हो गई। मेरा बोन कैंसर छू मंतर हो गया। धीर-धीरे मैंने कर्मकाण्ड आदि करना भी सीख लिया। आज का मेरा यह जीवन माँ की कृपा से वरदान के रूप में मिला हुआ है।

गुरुकृपा का वर्णन मैं कर नहीं सकती। मैं तब से आज तक गुरुकार्य में संलग्न हूँ।

**प्रस्तुति : कलावती देवी**
**रोहतास ( बिहार )**

# यम के दूत निकट नहीं आवें

मैं अपने परिवार के साथ मई २००४ में शान्तिकुञ्ज दर्शन करने आया। हमें याद है, मैं शान्तिकुञ्ज में चार-पाँच दिन रुका था। १८ मई को वापस बलरामपुर अपने सरकारी आवास पर पहुँच गया। रास्ते की थकान होने के कारण हमें काफी सुस्ती महसूस हो रही थी। इसी बीच भाई की पत्नी भी आ गई। उसे मालूम हुआ कि हम लोग शान्तिकुञ्ज से वापस आ गए हैं। इसलिए एक दिन के लिए मिलने चली आई थी। उस दिन रुककर २० तारीख शाम को ४ बजे वापस चली गई।

चूँकि हम लोग काफी थके हुए थे, इसलिए उस दिन जल्दी खाना बन गया। हम लोग खा-पीकर जल्दी सो गए। रात में, करीब १२-१ बजे का समय रहा होगा- सात-आठ अज्ञात लोग अचानक मेरे घर में घुस आए। घर में आवाज सुनकर मैं हड़बड़ाकर जाग उठा। मेरी पत्नी और लड़का सो रहा था। मैं बहुत घबड़ा गया था। सोचा उठकर शोर मचाऊँ, तो शायद कोई पड़ोसी ही पहुँच जाए। इतने सारे हथियार बंद लोगों के सामने मेरी क्या औकात थी? उन लोगों ने मेरी आँखों के सामने मेरी पत्नी के हाथ पैरों को बाँध दिया। उसने उठकर चिल्लाने की कोशिश की तो मुँह पर टेप चिपका दिया। मैंने उन्हें रोकने का प्रयास किया तो उन लोगों ने कट्टे के बट से मेरी कनपटी पर वार कर दिया, जिसके कारण मेरे सिर से खून की धार बह निकली। मेरी स्थिति को देख पत्नी अचेत हो गई। मैं अन्दर से बुरी तरह काँप उठा। मुझे लगा कि अब मेरा परिवार तो गया। मैं बुरी तरह जख्मी हो गया था। मेरी दोनों लड़कियाँ दूसरे कमरे में सो रही थीं। मेरा मन आशंका से भर उठा कि वे लोग अब न जाने क्या करें? शरीर से खून बह जाने के कारण कमजोर इतना हो गया था कि उठा भी नहीं जा रहा था। वे लोग मुझे साक्षात् यम के दूत की तरह से लग रहे थे।

अब पूज्य गुरुदेव को पुकारने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। मैं व्याकुल होकर कह उठा- हे गुरुदेव! मैंने कौन सा अपराध किया है, जिसका मुझे इस तरह दण्ड मिल रहा है। अब तो मेरे परिवार का अन्त हो जाएगा। आपके रहते ऐसा कैसे सम्भव है? मेरे मन में न जाने कितने भाव आ रहे थे! इधर मैं प्रार्थना में तल्लीन था। इस बीच घटना ने किस तरह मोड़ लिया यह मैंने बाद में अपनी पत्नी से सुना। मुझे चोटिल देख उसे मूर्छा आ गई थी। मूर्छा में ही उसने सुना कि बाहर से कोई दरवाजा खोलने के लिए कह रहा है। फिर पता नहीं कैसे दरवाजा अपने आप खुल गया। उसने देखा कि स्वयं गुरुदेव कमरे में प्रवेश कर रहे हैं। सफेद धोती कुर्ता पहने हुए हैं। उनको देखते ही पत्नी की मूर्छा टूट गई। वह चिल्लाई गुरुदेव-गुरुदेव! इतने में सारे बदमाश अचानक डर गए। वे समझे इन लोगों को बचाने वाले आ गए।

इतना सब कुछ होने के बावजूद कोई व्यक्ति सहायता के लिए नहीं पहुँचा था। अचानक मैंने देखा कि कर्नल साहब का चपरासी अन्दर चिल्लाते हुए आया कि क्या बात है? न जाने मुझमें कहाँ से हिम्मत आ गई। मैं एक ईंट उठाकर बदमाशों के

पीछे-पीछे भागा। पता नहीं कैसी कृपा गुरुदेव की हुई कि थोड़ी देर पहले मैं डर के मारे परेशान था, बोलने की हिम्मत नहीं थी। मैंने उन लोगों को बहुत दूर तक दौड़ा दिया। वे लोग डर कर भाग गए।

इतना घाव एवं रक्त बहने के बावजूद मैं कपड़े से अपने सर को पकड़े हुए एक हाथ से जीप चलाते हुए थाने पहुँच गया। वहाँ मैंने FIR लिखवाई। मेरे दिमाग में काफी चोट आने के कारण मेरा दिमागी संतुलन बिगड़ गया था। मुझे बात भूलने की समस्या हो गई थी। लेकिन धीरे-धीरे गुरुकृपा से सब सामान्य हो गया। सभी बदमाश पकड़े गए। मुकदमा चला लेकिन बाद में मैंने मुकदमा समाप्त करा दिया। सभी को बाद में बरी करवा दिया।

मुझे अपने गुरु पर पूर्ण विश्वास हो गया था। जब उनकी कृपादृष्टि है तो मेरा कुछ नहीं बिगड़ सकता। मैं किसी को दण्ड क्यों दूँ। सारा न्याय तो ऊपर वाले के हाथ में है। इस प्रकार गुरुकृपा से थोड़े दिनों के भीतर सारी परिस्थितियाँ सामान्य हो गईं। अगर गुरुजी का सहारा न होता तो हमारे परिवार का न जाने क्या हाल होता! इस घटना के बाद से मेरी श्रद्धा गुरुदेव के प्रति हमेशा के लिए बँध गई।

**प्रस्तुति :-सुरेश कुमार सोनी**
**तहसीलदार, धामपुर बिजनौर ( उ.प्र. )**

## आत्मचिंतन की महत्ता

सोते समय आत्मचिंतन करना जरूरी है। अपनी त्रुटियों और बुराइयों को रोज ही ढूँढना चाहिए और अगले दिन उन्हें घटाने की बात सोचनी चाहिए। रस्सी की थोड़ी-थोड़ी रगड़ रोज पड़ते रहने से पत्थर पर भी निशान बन जाता है, तो सुधार का थोड़ा-थोड़ा प्रयत्न भी यदि चलता रहे, उस मार्ग पर धीरे-धीरे भी हम चलें तो कुछ ही दिनों में हमारा बहुत कुछ सुधार हुआ स्पष्ट दीखने लगेगा। निरन्तर चलते रहने वाला मंदगामी कछुआ भी जब लम्बी यात्राएँ पूरी कर सकता है, तो अपनी खराबियों को सोचने-सुधारने और निरन्तर चलने वाला क्रम हमें एक दिन पूर्ण पवित्रता के लक्ष्य तक क्यों नहीं पहुँचा देगा?

(अखंड ज्योति सित०-१९६२, पृष्ठ ४७)

# ऋषियुग्म से मिला अभयदान

मेरा जन्म स्थान झारखण्ड प्रांत के पूर्वी सिंहभूम जिले के ग्राम चाकुलिया में है। रोजी-रोटी के सिलसिले में मैं अपने बच्चों के साथ कटक (उड़ीसा) में बस गया। मुझे अपने चाचा श्री कैलाश चन्द्र जी, जो युग निर्माण मिशन के समर्पित कार्यकर्ता हैं, की प्रेरणा से पू.गुरुदेव से जुड़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

वर्ष २०११ के जनवरी-फरवरी के महीने में मेरे दाहिने पैर में अचानक असह्य वेदना शुरू हो गयी। इधर-उधर बहुत सारे चिकित्सकों से इलाज कराने के क्रम में चिकित्सकों द्वारा शल्य चिकित्सा की सलाह दी गयी, जिसका खर्च लगभग तीन लाख था। यह मेरे लिए दुष्कर ही नहीं, असंभव था। आशा की एकमात्र किरण पू.गुरुदेव ही थे।

मैं जहाँ काम करता था वहाँ के लोगों से बात की। उन्होंने सुझाव दिया कि ई.एस.आई. को लिखने पर आपकी समस्या का समाधान हो सकता है। ई.एस.आई. को पत्र लिखा गया और गुरुदेव की कृपा से मेरे ऑपरेशन के लिए आदित्य केयर हॉस्पिटल में व्यवस्था हो गयी। दिनांक १३ जुलाई को ऑपरेशन की तारीख रखी गयी। मुझे ऑपरेशन के नाम से ही डर लगता था। हमारे घर के सभी लोग बहुत घबड़ाये हुए थे। मैं भी ऑपरेशन के नाम से बहुत भयभीत था।

ऑपरेशन के एक दिन पहले घर के सभी परिजन बहुत परेशान थे। क्या होगा? कैसे होगा? मेरे चाचाजी ने रात्रि ८ बजे शांतिकुंज में आदरणीय विनय बाजपेयी जी भाई साहब से फोन पर मेरे ऑपरेशन की बात बताई और आध्यात्मिक उपचार हेतु प्रार्थना की। भाई साहब ने तुरन्त आश्वासन दिया कि जैसा आप चाहते है मैं व्यवस्था कर रहा हूँ। आप परेशान न हों, हम गुरुसत्ता से प्रार्थना करेंगे। उनके आश्वासन पर हम सभी को बहुत राहत मिली। लग रहा था, सचमुच गुरुदेव का ही संरक्षण मिल रहा है, अब कुछ अनिष्ट नहीं होगा। १३ जुलाई को मुझे एडमिट कर लिया गया। एडमिट होते ही डॉक्टर ने कहा कि पेशेन्ट के ग्रुप का २ बोतल खून चाहिए। मेरे जामाता एवं मेरे एक मित्र के खून का ग्रुप मुझसे मिलता था। दोनों लोगों को खून देने के लिए समय पर हॉस्पिटल पहुँचना था। लेकिन दुर्भाग्यवश मित्र महोदय समय पर नहीं पहुँचने के कारण उनके आने की राह देख रहे थे।

सभी चिन्तित थे और सभी मन ही मन गुरुदेव से प्रार्थना कर रहे थे। अचानक एक अपरिचित सज्जन हम सबके बीच आये और कहने लगे कि आप लोग परेशान न हों मैं खून दूँगा। मेरे खून का ग्रुप इनके खून से मैच करता है। इनके इतना कहते ही जिन मित्र महोदय का खून लेना था वे भी वहाँ पहुँच गये। सभी लोग उनके देर होने आदि के सम्बन्ध में बातचीत करने लगे। जब हम उस अपरिचित सज्जन को धन्यवाद देने के लिए पीछे मुड़े तो देखा, उनका कहीं कोई पता नहीं था। सभी ने पता करने की कोशिश की, मगर वे नहीं मिले। बाद में अनुभव हुआ कि हम जिस समर्थ सत्ता से जुड़े हैं वे हमारी कष्ट कठिनाइयाँ देख नहीं सकते, वे किसी न किसी रूप में सहायता कर ही देते हैं।

इस घटना से हम सभी के मन में गुरुदेव के प्रति श्रद्धा और विश्वास बढ़ गया कि अब हमें परेशान होने की जरूरत नहीं है, क्योंकि जिसके ऊपर महाकाल की छत्रछाया हो उसका काल क्या बिगाड़ेगा?

ऑपरेशन की सारी व्यवस्थाएँ हो चुकी थीं। मैं और मेरे परिवार के सभी लोग केवल गुरुदेव को मन ही मन स्मरण कर रहे थे। मेरा विश्वास इतना सघन हो गया था कि ऑपरेशन थियेटर में जाते समय मेरा भय समाप्त सा हो गया था। मेरा ऑपरेशन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गया। मुझे दो दिन तक गहन चिकित्सा कक्ष में रखा गया। उसके पश्चात् मुझे जनरल वार्ड वी.के.सी. बेड पर स्थान दिया गया। मुझे यहाँ कुछ असुविधा हो रही थी। मैं तीन-चार दिन जनरल वार्ड में रहा। इसके पश्चात् मैंने अपनी सुविधा हेतु अपना स्थानान्तरण बेड सं. ए में करवा लिया। लेकिन यहाँ पर मेरा सोचना गलत था। यहाँ स्थान सुविधा की दृष्टि से तो अच्छा था, किन्तु यहाँ पर आने के पश्चात् मेरे साथ अजीबोगरीब घटनाएँ होने लगीं, जो असामान्य थी।

मुझे चौबीसों घण्टे बेचैनी छाई रहती। नींद बिल्कुल नहीं आती थी। मैं एक मिनट के लिए भी सो नहीं पाता था। रात्रि तो मेरे लिए काल बन कर आती थी। मैं सुबह होने का इन्तजार करता। रात्रि के आते ही मेरी परेशानी बढ़ने लगती। लगता था, कमरे के सारे परदे अपने आप हिल रहे हों। लगता कोई मेरा गला दबा रहा हो। मैं बोलने का प्रयास करता तो मेरा कण्ठ अवरुद्ध हो जाता। मैंने अपनी धर्मपत्नी से यह बात कही तो उसने कहा ऐसा कुछ नहीं है। मेरी धर्मपत्नी ऑपरेशन के समय से ही मेरे साथ थीं और मेरी देखभाल करती थीं। मैं असहाय था और मेरी परेशानी का हल किसी के पास नहीं था। पत्नी ने दिलासा दिया ताकि मैं घबरा न जाऊँ।

घबराहट की ऐसी मनोदशा में मुझे भय और निराशा के विचारों ने बुरी तरह घेर लिया। अवसादजन्य भावना से वशीभूत होकर मेरे अंदर बुरी आत्मा के चंगुल में आ जाने और अपना अंत होने का आभास होने लगा। लेकिन इस क्षण मुझे गायत्री मंत्र का आश्रय और गुरुदेव की कृपा अनन्य रूप से एक मात्र सहायक और संबल प्रतीत हुआ। पूरी व्याकुलता के साथ मैं पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी का ध्यान करते हुए गायत्री मंत्र जपने लगा। जप करते-करते लगभग चार बजे ब्राह्ममुहूर्त में क्षणिक निद्रा में मुझे गुरुदेव-माताजी के दिव्य दर्शन हुए। मैंने देखा उनके चरण कमलों में नतमस्तक हो चरण स्पर्श कर रहा हूँ एवं वे मुझे आशीर्वाद के साथ अभयदान दे रहे हैं। मुझे अनुभव हो रहा था कि अब मेरे सारे कष्ट दूर हो गए हैं।

चेतना आने पर मैंने अपनी धर्मपत्नी से इस बात को बताया कि मुझे ऐसा स्वप्न हुआ है। आज मुझे यहाँ से छुट्टी मिल जाएगी। जबकि सच तो यह था कि उस दिन छुट्टी मिलने का प्रश्न ही नहीं था। डॉक्टर्स ने पहले ही कह दिया था कि २९ जुलाई से पूर्व आपको रिलीज नहीं किया जा सकता।

लेकिन मुझे गुरु के ऊपर विश्वास था कि आज मुझे अस्पताल से छुट्टी मिल जाएगी। २७ तारीख को जब डॉक्टर विजिट में आए तो मैंने उनसे रिलीज कर देने के लिए आग्रह किया। वे कुछ देर तक मौन रहे और बाद में अनुमति दे दी। मैं उसी दिन

रात्रि ७ बजे रिलीज होकर अपने घर आ गया। मेरे गुरुदेव ने मुझे उस अतृप्त आत्मा से बचाकर नया जीवन दिया। अगर मैं वैसी विषम स्थिति में दो दिन और रह जाता तो मेरी मौत निश्चित थी।

**प्रस्तुति :- पवन कुमार शर्मा**
**कटक ( उड़ीसा )**

## युगऋषि के विचार

गायत्री मंत्र का उपयोग, गायत्री साधना, गायत्री विद्या को जन-जन तक पहुँचाने के लिए पहले हमें अपनी मानसिकता और कार्यशैली को अधिक स्पष्ट और प्रौढ़ बनाना होगा। उसके कुछ बिन्दु इस प्रकार हैं :- **हम आन्दोलनकर्त्ता हैं, सम्प्रदायवादी नहीं**। पू. गुरुदेव ने यह तथ्य बार-बार स्पष्ट किया है कि हमारा अभियान है '**युगनिर्माण**'। दुर्भाव एवं दुर्बुद्धि जनमानस को विनाश की ओर ठेल रही है। उसे निरस्त करके जन-जन को उज्ज्वल भविष्य की दिशा में आगे बढ़ाने के लिए सद्भाव एवं सद्बुद्धि की स्थापना जरूरी है। इसी का सबल आधार, माध्यम है '**गायत्री**'। गायत्री साधना का विस्तार हमारे इसी ईश्वरीय अभियान का एक अंग है।

युग निर्माण अभियान से तो सभी मतों-सम्प्रदायों के लोग जुड़ेंगे ही। यदि लोगों को यह विश्वास हुआ कि ये लोग आन्दोलनकारी हैं, तो वे इससे सहज जुड़ जाएगे। लेकिन यदि लगा कि ये तो कोई अलग सम्प्रदाय है, तो लोग इससे बचने का प्रयास करने लगेंगे। इसलिए हमारी मान्यता में तथा व्यवहार में यह झलक स्पष्ट मिलनी चाहिए कि हम आन्दोलनकर्त्ता हैं- सम्प्रदायवादी नहीं।

पू. गुरुदेव ने कहा, जब किसी कर्मकाण्ड विशेष, चित्र या व्यक्ति विशेष को गुरु मानने का आग्रह किसी आन्दोलन में उभरने लगता है, तो वह सम्प्रदाय का रूप लेने लगता है। पू.गुरुदेव कहते रहे हैं कि उनका परिचय चमत्कारी गुरु के रूप में नहीं, क्रान्तदर्शी ऋषि के रूप में दिया जाय। लोगों से कहा जाए कि वे किसी भी सम्प्रदाय या गुरु के अनुयायी रहते हुए भी गायत्री मंत्र एवं युगऋषि के कल्याणकारी विचारों का उपयोग कर सकते हैं।

# प्रभु इच्छा सर्वोपरि

घटना १४ जुलाई १९८९ की है। विनोदानंदजी की शादी शांतिकुंज के यज्ञशाला प्रांगण में होना निश्चित हुई। श्रद्धेय आचार्यगण द्वारा विवाह संस्कार के वेदमंत्रों के छन्दबद्ध उच्चारण और उनकी सारगर्भित व्याख्याएँ श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर रही थीं। शांतिपाठ-विसर्जन के उपरांत वर-वधू को वंदनीया माताजी एवं परम पूज्य गुरुदेव के आशीर्वचनों के लिये उनके कक्ष में जाना था। तब पूज्य गुरुदेव के कक्ष में उनसे मिलने हेतु आवश्यक अनुमति लेनी पड़ती थी। परिजन दूर झरोखे से ही गुरुवर के दर्शन कर लिया करते थे। वर-वधू के आर्शीवचन हेतु गुरुवर के कक्ष में जाने की अनुमति तो मिली, लेकिन फोटो लेने की नहीं अनुमति मिली। अब हमारे मन में मचलती सी भावना थी कि शादी के इतने फोटो खींचे गए पर हमारे परम आराध्य के सान्निध्य के बिना तो वर-वधू के सारे फोटो अधूरे ही माने जाएँगे।

अब गुरुदेव के आशीर्वाद वाले पल के फोटो कैसे लिये जाएँ? यह प्रश्न हम सब के मन में बार-बार कौंधने लगा-बुद्धि उपाय ढूँढने लगी। हृदय कचोटने लगा कि गुरुदेव के फोटो नहीं लेंगे तो सब चौपट। तुरंत मेरे पति (विजय कुमार शर्मा) के मन में एक उपाय सूझा कि अगर श्रद्धेय शिव प्रसाद मिश्रा जी के द्वारा फोटो लेने की अनुमति स्वीकार करवा ली जाय तो यह संभव हो सकता है। मैं और मेरे पतिदेव गुरुवर के फोटो लेने की अभिलाषा को पूर्ण करना चाहते थे। लेकिन मिश्रा जी ने स्पष्ट कहा कि गुरुदेव की अनुमति के बिना फोटो लेना संभव नहीं है। उन्होंने भी फोटो लेने से मना कर दिया। निराश होकर हम सब वंदनीया माताजी के कमरे की ओर वर-वधू के साथ बढ़े। नीचे के कमरे में वंदनीया माताजी से आशीर्वाद लेकर ऊपर के कमरे में गुरुदेव के आशीष हेतु जाना था। मेरे पति भी कैमरा लेकर वर-वधू के साथ गुरुवर के पास पहुँच गए। गुरुदेव ने बड़े प्यार से भावभरे आशीष वचन कहे। तभी मेरे पति ने कैमरे से दो फोटो फटाफट खींच लिए। गुरुदेव एक भेदक दृष्टि डालकर मुस्कुराए भी। हम सब बड़े प्रसन्न थे कि गुरुदेव की यादगार हमारे साथ होगी। हम सब खुशी-खुशी घर लौटे।

अपने घर जमालपुर (मुंगेर) पहुँचकर जब मेरे पति ने कैमरे की रील साफ कराई तो वे स्तब्ध रह गए। मैं भी देखकर हैरान थी कि वंदनीया माताजी के फोटो तो कैमरे में स्पष्ट आए थे, पर गुरुदेव के लिये गए दोनों चित्र बिल्कुल सादे आए थे। तब मैं गुरुदेव की उस भेदक दृष्टि और मुस्कुराहट का अर्थ समझी। वस्तुतः जाग्रत चेतना के प्रज्ञा-पुरुष की इच्छा से भौतिक (कैमरा) भी नियंत्रित हुआ। उनकी आज्ञा की अवहेलना कर कैमरा भी फोटो नहीं ले पाया। सच ही कहा गया है- संसार में प्रभु की इच्छा ही सर्वोपरि है। परमात्मा की इच्छा ही विजयी होती है। तब ये भौतिक यंत्र और संसार उनकी इच्छा को कैसे टाल सकते हैं।

**प्रस्तुति : आशा देवी शर्मा**
**जमालपुर, मुंगेर (बिहार)**

# दरोगा जी ने दिलाई नौकरी

स्कूली पढ़ाई के प्रति मेरी रुचि हमेशा ही कुछ कम रही। यों मन लायक पुस्तकें मिलतीं तो डूबकर पढ़ता, पर कोर्स की पढ़ाई मुझे कभी नहीं भाई। जैसे-तैसे दसवीं तक की पढ़ाई पूरी कर मैंने सोचा अब नौकरी कर लूँ, लेकिन घर में बड़ों के दबाव में आकर इण्टर में एडमीशन लेना पड़ा।

इण्टर का अभी एक ही वर्ष पूरा हुआ था कि मेरे चचेरे भाई की नौकरी केबुल कम्पनी, जमशेदपुर में लग गई। भाई की नौकरी लगने से घर में सभी खुश थे, मैं भी खुश था। लेकिन मुझे बार-बार यह बात कचोटती रहती कि मैं बड़ा हूँ और अब तक कुछ नहीं कर सका। घर में सभी उसकी इज्जत करते। मुझे लगता अगर मुझे भी नौकरी मिल गई होती, तो इसी तरह मेरी भी इज्जत होती। भाई को टाटानगर में ज्वाइन करने जाना था। उसे पहुँचाने की जिम्मेदारी मुझे सौंपी गई। नई नौकरी थी। उसके लिए नए कपड़े सिलवाए गए थे, जिसे पहनकर वह बड़ा स्मार्ट दिख रहा था। मैं बार-बार उसे देख रहा था। भाई को लेकर मैं जमशेदपुर पहुँचा। अगले दिन उसने ज्वाइन भी कर लिया। मैं ही साथ लेकर गया था। उसे छोड़ खिन्न मन से मैं वापस लौट रहा था। ऐसा महसूस हो रहा था जैसे अब मुझे कहीं कुछ नहीं मिलने वाला।

हमें छोटी-छोटी जरूरतों के लिए घर में हाथ फैलाना पड़ता है। कब तक ऐसे चलेगा। अब मैं कोई बच्चा तो नहीं। अब तो माँगने में और भी शर्म महसूस होगी। मैं सोचता हुआ चल रहा था। अचानक रास्ते में पड़े एक छोटे से पत्थर से पैर टकरा गया और मैं गिरते-गिरते बचा। मेरे मुँह से अनायास निकल गया हे गुरुदेव! मेरी आँखों में आँसू आ गए। अपने आप को शांत करने के लिए मैंने मानसिक जप शुरू किया।

मन कुछ स्थिर हुआ ही था कि आवाज आई 'ओ पहलवान इधर आ'। मैंने चौंककर इधर-उधर देखा बिष्टुपुर थाना के दरोगा आर.बी.बी.सिंह थाना कार्यालय के पास, पीपल के पेड़ के नीचे कुर्सी लगाकर बैठे थे और मुझे ही घूर रहे थे। उन्होंने फिर आवाज दी 'तुझे ही बुला रहा हूँ, इधर आ'। मैंने क्या किया है! ये मुझे क्यों बुला रहे हैं ? कुछ सोच नहीं पाया। फिर मन ने सुझाया- मैं तो गायत्री साधना करता हूँ। मेरा कोई क्या बिगाड़ेगा। मैं क्यों डरूँ, मानसिक जप करता हुआ मैं पास गया।

उन्होंने पूछा-तुम इन्सपेक्टर कुमार के भाई हो? मैंने हामी भरी। फिर प्रश्न हुआ नौकरी करोगे? अचानक गुरुदेव का मुखमण्डल आँखों के आगे आ गया। देखा मुस्कराते हुए मेरी ओर देख रहे हैं। जैसे कह रहे हों खिन्न क्यों होते हो, तुम्हें भी मिल जाएगी नौकरी। मैंने आँखों ही आँखों उन्हें प्रणाम किया। फिर दारोगा जी को अपनी सम्मति बताई। उन्होंने तुरंत काइजर कम्पनी के डायरेक्टर कैप्टन बालको को फोन

मिलाया और बोले, मेरा भाई तीन महीने से खाली बैठा है। उसको खिलाने की व्यवस्था आप कीजिए या कम्पनी में भर्ती कर लीजिए। उधर से आवाज आई एक हफ्ते के बाद भेज दें। उन्होंने कहा- एक सप्ताह बाद नहीं, मैं अभी लेकर आ रहा हूँ।

उन्होंने मुझे अपनी मोटर साइकिल पर बैठाया और सीधे जाकर वर्मा माइन्स मेन गेट के सामने रुके। अन्दर जाते ही एक व्यक्ति ने पत्र देकर मुझे शीट मेटल शॉप में भेज दिया। वहाँ नाम की एन्ट्री हुई। आरंभिक वेतन ५०० रुपये प्रतिमाह तय हुआ। दारोगा का भाई होने के कारण नित्य ८ घण्टे ओवर टाइम भी मिलने लगा।

उस दिन वापस लौटते समय मन बल्लियों उछल रहा था। गुरुदेव अवश्य ही अन्तर्यामी हैं। मन की रुदन को उन्होंने कैसे तुरन्त पहचान लिया और समाधान भी तुरन्त प्रस्तुत कर दिए।

**प्रस्तुति :- प्रभाशंकर कुमार**
**टाटानगर ( झारखण्ड )**

# तुम चिन्ता मत करो

बेटे ! अगर आप यह कहें कि गुरुजी के बाद क्या होगा? बेटे, गुरुजी का शरीर ही तो चला गया, लेकिन आत्मा तो उनकी यहीं विद्यमान है। मेरे पास भी है और सारे शांतिकुंज में भी विद्यमान है। आप जैसे पहले रहते थे, वैसे ही अब रहेंगे। क्यों साहब, माताजी जब आप नहीं रहेंगी, तो फिर हमारा क्या होगा? बेटे, आपसे हमारा वायदा है कि आपके लिए कोई घाटा होने वाला नहीं है। न तो पहनने का और खाने का, कोई भी घाटा होने वाला नहीं है। घाटा होगा तो केवल आपकी संकीर्णता का होगा। संकीर्ण आप रहेंगे, बुजदिल आप रहेंगे, कायर रहेंगे और जो आपका पहले संकल्प था, उस संकल्प को अगर आप तोड़ेंगे, तो कहीं के नहीं रहेंगे, दो कौड़ी के हो जाएँगे। जब हमें इसी मिट्टी में मिलना है, इसी में रहना है, इसी में मरना है, इसी में खपना है, तो अपना मनोबल बनाए रखना चाहिए। आप के लिए बेटे, हम इतना छोड़ जाएँगे और इतना गुरुजी छोड़ भी गए हैं कि आपका पेट पालन होता रहेगा।

# एक भयानक घटना टली

दिसम्बर २००८ की बात है। उन दिनों मैं नए वर्ष के लिए '**अखण्ड ज्योति**' एवं '**युग निर्माण योजना**' के सदस्य बनाने में व्यस्त थी। उसी समय मेरे साथ एक भयानक किन्तु आश्चर्यजनक घटना घटी। मैं नया सिलेण्डर भरवाकर बाजार से लाई थी, शायद वह कहीं से लीकेज था। पास में रखे लैम्प से उसमें आग लग गई। मैंने बुझाने का बहुत प्रयास किया परन्तु लपटें बढ़ती ही गईं। किसी तरह रसोई से घसीट कर सिलेण्डर को मैं बरामदे तक ले आयी। आगे खुले स्थान पर ले जाना संभव न था, क्योंकि लपटें अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थीं। मैंने अपनी माँ को घर से बाहर ले जाकर बैठा दिया।

बाहर निकलकर पड़ोसियों से सहायता के लिए चिल्लाई। सारे पड़ोसी एकत्र होकर अपनी-अपनी राय देने लगे और अपनी तरह से आग बुझाने का प्रयास करने लगे, पर किसी को कोई भी कामयाबी नहीं मिली। किसी ने फायर ब्रिग्रेड को सूचना भी दे दी, लेकिन स्टेशन पास न होने के कारण शीघ्र सहायता न मिल सकी। मेरे सामने विषम परिस्थिति थी। सामने साक्षात् तबाही का दृश्य था। देखने वालों की भीड़ लगी थी। सभी त्राहि-त्राहि कर रहे थे। परन्तु सहानुभूति के अलावा किसी के पास कोई उपाय न था। मैं बहुत घबराई हुई थी। जाड़े की शाम जल्दी ही गहरा जाती है। सायं पाँच बजे का समय था, अँधेरा छाने लगा था। लपटें अपना उग्र रूप धारण करती जा रही थीं। सिलेण्डर पूरा भरा होने के कारण देर तक जलता रहा। मैंने भीड़ की ओर एक बार फिर देखा कि शायद कोई कुछ उपाय कर सके, परन्तु इस भौतिक संसार में इतनी सामर्थ्य कहाँ जो किसी का कष्ट हर ले।

कुछ ही पलों में एक भयानक दुर्घटना होने वाली थी, सभी विवश थे, उस भयानक स्थिति में सहसा मुझे गुरुदेव याद आये। मैं आर्त स्वर में रो पड़ी, गुरुदेव मेरी रक्षा करो, आप ही इस तबाही से मेरी रक्षा कर सकते हैं। गुरुदेव! यदि कुछ अनिष्ट हुआ तो मन टूट जाएगा, मैं इस समय आपका कार्य कर रही हूँ। उसमें व्यवधान आ जाएगा। इतना परिपक्व नहीं हूँ जो इतनी बड़ी घटना को सह सकूँ। गुरुदेव! क्षति मेरी नहीं आपकी होगी। लोग कहेंगे कि लोगों को गायत्री उपासना की सलाह देती हैं और कहती हैं गायत्री मंत्र सबका कल्याण करने वाला अनिष्ट निवारक मंत्र है। अपना ही अनिष्ट नहीं रोक पाई। इस घटना से बहुत लोगों की आस्था टूट जाएगी। लोग कहेंगे कि गायत्री उपासना में कोई शक्ति नहीं है। ज्यों-ज्यों लपटें बढ़ रही थीं मेरी प्रार्थना और आर्त्त होती जा रही थी। परन्तु गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा और विश्वास था कि अब कुछ नहीं होगा। जब गुरुदेव याद आ गए तो निश्चित है कि परोक्ष में वे साथ दे रहे हैं। मन में विश्वास जागा कि गुरुदेव आ गए, अब कोई अनिष्ट नहीं होगा।

बहनों ने कहा- सिलेण्डर से तेज आवाज होने लगी है, घर से बाहर निकल आओ, बस फटने ही वाला है। घर की छत उड़ जाएगी, दरवाजे दीवारें गिर जाएँगी। बड़ा भयानक विस्फोट होगा। सामान का नुकसान हो जाएगा कोई बात नहीं, जान तो

बच जाएगी। लेकिन पता नहीं क्यों मुझे यह आभास हो रहा था कि मेरी करुण पुकार सुनकर मेरे गुरुदेव आ गए हैं अब कुछ नहीं होगा। मैंने उनसे यही बात कही भी। भीड़ से कुछ लोग व्यंग्यात्मक हँसी हँसकर बोले- यह विज्ञान का सत्य है कि सिलेण्डर फटेगा तो दीवार दरवाजे टूट जाएँगे, भयानक हादसा होगा। विज्ञान के नियमों में कच्ची श्रद्धा न रखो, इसमें तुम्हारे गुरु क्या कर पायेंगे। मेरा मन शांत था जैसे सब कुछ सामान्य हो। सहसा मेरे मन में विचार आया- जैसे किसी ने आदेश दिया हो कि तुम गायत्री मंत्र का जप शुरू करो। मैंने तुरंत आँखें बंद करके जप शुरू कर दिया। मेरे इस क्रिया-कलाप को सभी देख रहे थे और यह कह रहे थे कि मानती नहीं है। अंधी श्रद्धा भक्ति इसको ले डूबेगी।

एक बुजुर्ग हितैषी बाहर ले जाने के लिए मेरा हाथ पकड़कर घसीटने लगे। मैंने कहा- मामा जी चिन्ता न करें मेरा मन शांत है। यहाँ पर अदृश्य में गुरुदेव उपस्थित हैं। अब मुझे चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है। मैंने पुन: आँखें बंद कर गायत्री मंत्र का जप शुरू कर दिया। अभी ११ मंत्र ही हुए होंगे कि सिलेण्डर से साँय-साँय की तेज आवाज आने लगी। लोग चिल्लाने लगे कि अब सिलेण्डर फटने वाला है, ये बाहर निकल नहीं रही है। इसके बाद मैं भीड़ के कोलाहल से बेखबर, आँखें बंद किए, ध्यानावस्थित होकर मंत्र जप करती रही। एक भयानक धमाके के साथ सिलेण्डर फट गया। घर की दीवारें, छत व पृथ्वी हिल गई। साथ ही मैं भी डगमगा गई। मन मस्तिष्क को धमाके ने हिला दिया। सिलेण्डर फटने का दृश्य मैंने नहीं देखा, क्योंकि मैं आँखें बंद किए हुए थी। धमाके की आवाज सुनकर सभी रोने लगे। मेरी माँ का रोते-रोते बुरा हाल था, लोग समझ रहे थे कि मेरा अंत हो चुका है। धमाके से मेरी आँखें खुलीं तो देखा पूरा घर धूल से भर गया है। चारों तरफ धूल ही धूल थी। कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। मैंने अपने शरीर को स्पर्श किया कि कहीं मुझे चोट वगैरह तो नहीं आई ! अपने को सुरक्षित पा मैं जोर से चिल्लाई- परेशान मत होओ मुझे कुछ नहीं हुआ। जब मैं घर से बाहर निकली तो मुझे सुरक्षित देख मेरी माँ मुझसे लिपट गई। सबकी आँखों में आँसू आ गए।

मेरा मन गुरु के प्रति कृतज्ञ हो उठा। लगभग १ घंटे तक चर्चा चलती रही। धमाके की आवाज सुनकर दूर-दूर के लोग भी एकत्रित हो गए। एक घंटे बाद जब घर की धूल बैठ गई तो कुछ लोगों के साथ घर के अन्दर गई। देखा टमाटर, संतरे, अंगूर, कपड़े सभी धमाके से छत पर चिपक गए थे। अलमीरा से बरतन नीचे गिर गए थे। इधर-उधर बिखर गए थे। सारे घर में धूल ही धूल थी, सभी कुछ आश्चर्यचकित कर देने वाला था। सबसे अधिक आश्चर्य तो लोगों को तब हुआ जब उन्होंने देखा कि बरामदे में रखा सिलेण्डर धरती में १ फुट नीचे धँस गया, और उसके ऊपर का हिस्सा टूटकर मात्र १ से २ फुट की दूरी पर बिखरे हुए थे, जैसे किसी ने उन्हें जान बूझकर समेट दिया हो। सिलेण्डर के पास रखी चरपाई, दरवाजे बॉक्स, सब सुरक्षित थे और कहीं भी कुछ नुकसान नहीं हुआ। छत दीवार सब सही सलामत थे, जिसे देखने के लिए लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी। रात्रि हो गई थी, घर को वैसी स्थिति में छोड़कर हम

सब सो गए। दूसरे दिन जब सवेरा हुआ तो लोगों का जमावड़ा होने लगा। इस अद्‌भुत घटना को देखने के लिए जन समूह उमड़ पड़ा। लोगों ने कई सिलेण्डर फटते देखे, जिसमें छत दीवारें, दरवाजों के काफी नुकसान हुए, सिलेण्डर को जमीन में धँसते किसी ने नहीं देखा था। सभी लोग कह रहे थे कि यह अद्‌भुत लीला तो सर्वोच्च सत्ता की ही हो सकती है, जो असंभव को संभव कर दे। यह तो विज्ञान को अध्यात्म की जबरदस्त चुनौती है। गुरु पर श्रद्धा विश्वास का फल देखकर सभी परम पूज्य गुरुदेव और माँ गायत्री के चरणों में नतमस्तक हो गए।

**प्रस्तुति :- ममता सिंह**
**रायबरेली ( उ.प्र. )**

---

# कुछ यूँ टला संकट

बात १५ सितम्बर २०११ की है। मेरा पुत्र राजकुमार अपने लड़के को पढ़ा रहा था। पढ़ाते हुए वह अपने बच्चे को पीट रहा था। मेरी बहू ललिता बच्चे को बचाने के लिए दौड़ी तो बच्चे को छुड़ाने के चक्कर में हृदय में चोट लग गई और वह बेहोश होकर गिर पड़ी। उसकी सांस रुक गई, दांत भिंच गई। शोर सुनकर मैं दौड़कर भागा। देखा कि बहू को मेरी पत्नी गोद में लेकर बैठी हुई है। मेरी पत्नी बहुत परेशान थी।

यह दृश्य देखकर मैं भी रोने लगा। मैं व्याकुल हो गया और अधीर होकर गुरुदेव को पुकारा, कि गुरुदेव यह क्या हो गया? मेरा परिवार आपकी शरण में है। अब तो आप ही मुझे संकट से उबारिये। मेरे बेटे ने यह बिना सोचे विचारे क्या कर ड़ाला? अगर कुछ हो जाएगा तो मैं समाज को क्या मुँह दिखाऊँगा। मैं आँसू रोके हुए बस गुरुदेव को याद कर रहा था। मेरी पत्नी भी किंकर्तव्यविमूढ़ हो चिंतामग्न बैठी थी, करीब पांच या दस मिनट बाद अचानक मेरी पत्नी ने बहू के चेहरे पर पानी के छींटे मारे। उसने आंखें खोल दीं। फिर उसको अस्पताल ले गए और उसकी जान बच गई।

गुरुदेव ने मुझे उस वक्त बड़े संकट से बचाया, अगर कुछ हो जाता तो बड़ी विपत्ति में फँस जाता। इसके बाद मैं २८ सितम्बर को शांतिकुंज श्रमदान हेतु पहुँच गया। यह गुरु की कृपा है जो मैं आज हँसी-खुशी से उनके कार्य में संलग्न हूँ।

**- प्रस्तुति : धनेश्वर सिंह यादव**
**चंदौरा, नालंदा ( बिहार )**

# आस्था रखने वाले रीते नहीं रहते

सन् १९७० से ही मैं अखण्ड ज्योति पढ़ता आ रहा हूँ। उससे हमेशा प्रेरणा-प्रकाश प्राप्त होता रहता है। शान्तिकुञ्ज पहली बार गया सन् १९८५ की जनवरी में। एक मासीय शिविर में भाग लेने के लिए पहुँचा था। गुरुदेव उन दिनों सूक्ष्मीकरण साधना में थे। वे किसी से मिलते नहीं थे। उनके कक्ष में गिने-चुने लोगों को ही जाने की अनुमति थी।

गुरुदेव के दर्शन नहीं हो पाये इसका मुझे बहुत मलाल रहता था। मैं अपनी किस्मत को कोसता रहता कि इतने दिनों से मानसिक रूप से जुड़े होने के बावजूद मैंने एक बार भी आकर गुरुदेव से मिलने का प्रयास क्यों नहीं किया। पता नहीं फिर कभी दर्शन हो पाएँगे भी या नहीं। बार-बार मन ही मन उनसे याचना भी करता रहता कि हे गुरुदेव! किसी प्रकार, कभी तो दर्शन दे दो।

उसी वर्ष फरवरी की बात है। मैं पटना से गया जा रहा था। ट्रेन में बहुत भीड़ थी। लोग बोगियों की छत पर भी सवार थे। बोगियों के अन्दर स्थान न होने के कारण हम कुछेक भाई दरवाजे के पास खड़े थे। मेरा पूरा शरीर बाहर की ओर लटका हुआ था। चूँकि मैं गाड़ी की गति की विपरीत दिशा में मुँह किए था, इसलिए सामने से आने वाले खतरे की तरफ से मैं बिल्कुल अनभिज्ञ था। गाड़ी बहुत तेजी से एक खम्भे को पार कर रही थी। हमारी बोगी उसके पास तक आते-आते सामनेवाले सहयात्री को खतरे का आभास हुआ। वे 'गया-गया' करके चिल्ला उठे। मेरे कुछ समझ पाने से पहले ही दो बलिष्ठ हाथों ने मेरे सिर को अन्दर की ओर धकेल दिया। दूसरे ही पल मैंने जाना कि एक पल की देर हो गई होती तो मेरा सिर उस खम्भे से टकराकर चूर-चूर हो जाता।

निश्चित मृत्यु के हाथों से मुझे बचाने वाला कौन है-मालूम करने का प्रयास किया, तो सहयात्रियों ने बताया- एक बूढ़ा आदमी पता नहीं कहाँ से अचानक आ पहुँचा। ऐसा लगा मानो वहीं प्रकट हुआ हो; क्योंकि हमारे साथ जितने लोग खड़े थे, उन सभी से वे अलग थे। चेहरे का वर्णन जैसा उन्होंने किया, उससे मुझे मालूम हो गया कि वे पूज्य गुरुदेव के अतिरिक्त कोई और नहीं हो सकते।

दर्शन न कर पाने का दुख जाता रहा। उनका स्पर्श आज भी अनुभव होता रहता है। उसी दिन मैंने जाना कि गुरुदेव को मन से पुकारने वाले को वे कभी खाली नहीं लौटाते। उनका सहयोग संरक्षण आज भी अनुभव करता रहता हूँ।

प्रस्तुति : रामानन्द सिन्हा
नालन्दा ( बिहार )

# जीवन दान मिला

दिनांक २ दिसम्बर २००० को मैं बीमार पड़ा। टाटा मेन अस्पताल में मुझे उपचार हेतु भर्ती किया गया। लगभग बारह दिनों तक इलाज चला किन्तु हालत सुधरने के बजाय और बिगड़ता चली गई। मेरे पुत्र सुनील कुमार ने टाटा मेन अस्पताल के डॉक्टरों से लड़-झगड़ कर मेरी छुट्टी करा ली। १४ दिसम्बर को टाटा के एक प्रसिद्ध डॉक्टर ए.के.दत्ता को दिखाया। डॉक्टर दत्ता ने खून और पेशाब की जाँच कराने के बाद बताया कि मेरी जिन्दगी मात्र सात दिनों की है। मेरी किडनी बिल्कुल खराब हो गयी है। मुझे तुरन्त वैलूर ले जाना होगा। मेरा लड़का घबरा गया। वैलूर का रेलवे टिकट बनवाया परन्तु बर्थ नहीं मिली। वह घबरा कर गायत्री शक्तिपीठ टाटानगर गया। वहाँ श्री कमल देव भगत को सारी बातें बताई। कमलदेव भगत जी के अथक प्रयास से किसी तरह दो बर्थ मिलीं। गायत्री परिवार के अनेक परिजनों को मेरी बीमारी की जानकारी श्री भगत जी द्वारा मिल गई थी। अगले दिन वैलूर जाने की गाड़ी शाम को २.४० मिनट में थी। लगभग ग्यारह बजे दिन में कमलदेव भगत जी, परिव्राजक श्री मुन्ना पाण्डे के साथ मेरे निवास स्थान पर आए और मेरे सामने एक प्रस्ताव रखा कि शायद मेरे जीवन का यह अंतिम समय है; अतः मैं अपने-आपको पूज्य गुरुदेव को दान दे दूँ। पहले तो मैं समझा नहीं। फिर कमलदेव बाबू ने बताया कि अगर गुरुदेव आप से युग निर्माण का काम लेना चाहें तो वे आप को जीवनदान दे सकते हैं। चूँकि जीवन का वह समय गुरुदेव का अनुदान होगा, इसलिए वह समय आप सिर्फ युग निर्माण के कार्य में लगाएँगे। मैं उनकी बात से सहमत हो गया। तब परिव्राजक मुन्ना पांडे जी ने मुझे जीवन अर्पण का संकल्प कराया। मेरी हालत काफी बिगड़ चुकी थी। पेट में हमेशा भयंकर दर्द रहता था और उल्टी होती थी। एक महीने में मैंने अन्न का एक दाना नहीं खाया था। अपने से करवट बदलने की भी शक्ति शरीर में नहीं थी।

निश्चित समय पर हम लोग रेलवे स्टेशन पहुँचे। स्टेशन पर गायत्री परिवार के सैकड़ों परिजन मुझे विदाई देने आए थे। स्टेशन पहुँचने तक मेरे पेट का दर्द आधा हो गया। मुख्य ट्रस्टी श्री दौलत राम चाचरा और ट्रस्टी श्री इन्दु भूषण झा जी मुझे सहारा देकर रेलगाड़ी के डिब्बे तक ले आए। पता नहीं मुझमें कहाँ से शक्ति आ गई कि मैं पैदल चल सका। श्री चाचरा साहब बार-बार मुझे हिम्मत देते रहे और कहते रहे कि आप पूज्य गुरुदेव पर विश्वास रखें और हिम्मत नहीं हारें। आप अवश्य ही गुरुदेव के आशीर्वाद से स्वस्थ होकर लौटेंगे तथा पुनः शक्तिपीठ में समय देंगे। ट्रेन में बैठते ही उल्टी बन्द हो गए।

१८ तारीख को सायं पाँच बजे मुझे वैलूर अस्पताल के नेफरो वार्ड में भर्ती करा दिया गया। मेरी हालत देखकर वैलूर के डॉक्टर भी गंभीर हो गए। लगातार सात दिनों तक तरह-तरह की जाँच होती रही। इस बीच मुझे कोई दवा

नहीं दी गए। सिर्फ भोजन की कमी को दूर करने के लिए एक सुई दी गई। नौवें दिन २६ तारीख को मुझे अस्पताल से छुट्टी मिल गई और मैं लॉज में आ गया। लगभग पाँच दिनों के बाद डॉक्टर से मिलने और अंतिम रिपोर्ट प्राप्त करने का समय निश्चित हुआ। मेरी पत्नी श्रीमती सरोजिनी देवी मेरे साथ रहती थी। वह नित्य ब्रह्ममुहूर्त में होटल की छत पर जाकर चौबीस माला गायत्री महामंत्र का जप करती थी। जिस दिन रिपोर्ट मिलने वाली थी, उस दिन मेरी पत्नी जप उपासना कर मेरे पास आई तो बड़ी प्रसन्न दिखाई पड़ी। प्रसन्नता का कारण पूछा तो कहने लगी- आज उपासना के समय पूज्य गुरुदेव और वंदनीया माता जी आए थे, उन्होंने ध्यान में दर्शन दिए। अचानक मेरे मुँह से निकल गया कि आज अंतिम रिपोर्ट मिलने वाली है। अतः ऋषियुग्म हम दोनों को आशीर्वाद देने आए थे। रिपोर्ट अवश्य ही अच्छी होगी। गुरुदेव का स्मरण कर हम दोनों की आँखें डबडबा गईं। दोपहर तीन बजे जब हम लोग डॉक्टर से मिलने गए तो मुझे देख कर डॉक्टर मुस्कुरा दिए। डॉक्टर के मुख से पहला वाक्य निकला मिस्टर भगत यु आर लक्की। आपकी किडनी बिलकुल ठीक है। आपको कोई बड़ी बीमारी नहीं है। सिर्फ पुराना इन्फेक्शन है। कुछ दिनों के इलाज से ठीक हो जाएगा। आज भी मैं पूर्ण स्वस्थ हूँ। गायत्री शक्तिपीठ टाटानगर के साहित्य केन्द्र में नियमित समय देता हूँ।

**प्रस्तुति :- कामिनी मोहन भगत**
**जमशेदपुर ( झारखण्ड )**

## सुधार के लिए आत्मसमीक्षा

अपने गुण, कर्म, स्वभाव में जो त्रुटियाँ हों, उन पर अपने आलोचक या विरोधी की दृष्टि से निरीक्षण करते रहना चाहिए। जब तक अपने प्रति पक्षपात की दृष्टि रहती है तब तक दोष एक भी सूझ नहीं पड़ता, पर जब निष्पक्ष आलोचक की दृष्टि से देखते हैं तो खुर्दबीन के शीशे की तरह अगणित त्रुटियाँ अपने में दिखाई देने लगती है। त्रुटियों को सुधारने और अच्छाइयों को बढ़ाते चलना प्रत्येक विचारशील व्यक्ति का आवश्यक कर्त्तव्य है।

**( अखण्ड ज्योति जून, १९६२ पृष्ठ ५० )**

# पुत्रवत्सल गुरुदेव

परम पूज्य गुरुदेव का सान्निध्य सन् १९५९ में 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका के माध्यम से मिला। गुरुदेव के व्यक्तिगत पत्राचार और मार्गदर्शन के अनुरूप मैं अपनी दिनचर्या विधिवत् चला रहा था। मेरे जीवन का अधिकांश समय गुरुकार्य में ही लगता था। इससे मुझे आंतरिक शांति भी मिलती थी। जब कभी शिथिलता आती तो मन बेचैन हो उठता। मेरी धर्मपत्नी का भी गुरुकार्य में बड़ा सहयोग रहता था। हमारे जीवन में बहुत सारे ऐसे क्षण आए जिसमें मैंने गुरु की कृपा और करुणा को अनुभव किया।

कहते हैं माँ भी शिशु को दूध पिलाने तभी दौड़ती है जब वह रोता है। मगर हम बच्चों पर गुरुदेव का प्यार उस मातृप्रेम से भी निराला था। हम माँगें या न माँगें, उन्हें हमारी जरूरतों का ध्यान अवश्य रहता है। हमारे ज्येष्ठ पुत्र का विवाह हुए दो वर्ष से अधिक बीत चुके थे, मगर बहू को अब तक कोई सन्तान की प्राप्ति नहीं हुई थी। स्वाभाविक रूप से कुलदीपक के रूप में एक पौत्र की अभिलाषा हमारे मन में दबी हुई थी। विशेषकर मेरी धर्मपत्नी को इस बात का काफी कष्ट था।

१२ सितम्बर सन् २००० की बात है। अनन्त चतुर्दशी का दिन था। रात्रि के अन्तिम प्रहर-ब्रह्ममुहूर्त में मैंने एक स्वप्न देखा। स्वप्न में मैंने अपने-आपको शान्तिकुञ्ज में नौ दिवसीय शिविर में साधना करते हुए पाया। साधना के समापन पर गुरुदेव का लिखा एक पत्र मुझे प्राप्त होता है, जिसमें उनका स्पष्ट आश्वासन था कि हमारी साधना के फलस्वरूप हमारे घर में एक शिशुपुत्र का आगमन होगा। आनन्द से हृदय इतना गद्गद् हो गया कि नींद खुलने और स्वप्न टूटने के बाद भी वह आनन्द बना रहा। मन बार-बार कहता गुरुदेव का आश्वासन झूठा नहीं हो सकता। घर में किसी अन्य को तो इस स्वप्न की बात मैंने नहीं बताई, केवल धर्मपत्नी के साथ थोड़ी-सी चर्चा की और गुरुदेव के आश्वासन वाक्य को एक कागज पर लिखकर मैंने लिफाफे में बन्द कर बेटे के हाथ में दे दिया और हिदायत दी कि इसे सँभालकर रखना। भूलकर भी खोलकर नहीं देखना। समय आने पर मैं स्वयं लिफाफा खोलने को कहूँगा।

ब्रह्ममुहूर्त का स्वप्न निष्फल नहीं जाता-ऐसा मैंने सुन रखा था। करीब दो माह बाद बहू के संतान-संभावना की जानकारी मैंने अपनी धर्मपत्नी से पाई। मैंने कहा- अवश्य ही पोता होगा। गुरुदेव का आशीर्वाद फलित होगा। उनके आश्वासन के करीब साल भर बाद गुरुदेव का वह वरदान पौत्र रूप में हमारे घर आया। धन्य है गुरुदेव का वात्सल्य, प्यार, आशीर्वाद, जो बिना माँगे हमारे ऊपर बरसा।

**प्रस्तुति : नर्मदा प्रसाद ओझा,**
**मौर्यविहार, पटना ( बिहार )**

# अनजानी बीमारी से बचाई गयी बालिका

मेरी बेटी वंदना को अचानक बेहोशी का दौरा पड़ने लगा। इस बीमारी की शुरुआत तब हुई, जब वह ननिहाल में थी। वहीं पर इलाज शुरू हुआ। एक एक कर कई डॉक्टरों की दवाएँ चलीं, लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ।

दो-तीन महीने बीतते-बीतते बीमारी बहुत बढ़ गई। अब बेहोशी के बाद पैरों में असहनीय दर्द की शिकायत भी रहने लगी और धीरे-धीरे चलना-फिरना भी कठिन हो गया। ऐसी हालत में वंदना को औरंगाबाद लाकर डॉ. गुंजन सिन्हा को दिखाया गया, लेकिन उनका इलाज भी कोई काम नहीं आया।

उन्हीं दिनों घर पर आए एक रिश्तेदार ने राँची के प्रसिद्ध डॉक्टर के.के. सिंह को दिखाने की सलाह दी। इन्हें एशिया के अन्य देशों से भी कन्सल्टेन्ट के रूप में बुलाया जाता है। डॉ. सिंह ने भी कई तरह की जाँच करवाई, लेकिन किसी भी जाँच की रिपोर्ट से बीमारी पकड़ में नहीं आई।

बेहोशी के दौरे अब और भी जल्दी-जल्दी आने लगे। इस लम्बी चिकित्सा प्रक्रिया से थककर मेरी बच्ची जीवन के प्रति कुछ निराश-सी हो चली थी। दिन भर गुम-सुम सी बैठी रहती थी। अकेले में 'गायत्री माता-गायत्री माता' बुदबुदाया करती थी। एक ही रट लगाए रहती-मुझे गायत्री मन्दिर ले चलो।

गायत्री मन्दिर के पास हमारी थोड़ी-सी जमीन थी। उसमें घर बनाने की तैयारी चल रही थी। हमने उसे दिलासा दे रखी थी कि भूमि पूजन के दिन गायत्री मन्दिर ले चलेंगे। निर्धारित तिथि को हम सब भूमि पूजन के लिए घर से चले। वंदना भी हमारे साथ थी। गायत्री मन्दिर जाने के नाम पर वह बहुत खुश थी। साइट पर पहुँचते ही उसने कहा-अब चलो गायत्री मंदिर। हमने कहा-पूजा हो जाने दो, हम सब साथ-साथ चलेंगे। लेकिन वह जिद करने लगी कि अभी चलो। भूमि पूजन में व्यवधान होते देखकर मैंने उसे जोर से डाँट दिया। वह रो-रोकर बेहोश हो गई।

हम सभी घबरा उठे। भूमिपूजन को बीच में ही रोककर उसे गायत्री मंदिर ले जाकर माँ गायत्री की मूर्ति के आगे लिटा दिया गया। कुछ मिनटों बाद ही उसे होश आ गया। वह आँखें मलते हुए उठ बैठी। स्वयं को मन्दिर में पाकर उसकी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। वह एक ही झटके में गायत्री माता की मूर्ति के पास पहुँची और हाथ जोड़कर प्रार्थना करने लगी। थोड़ी देर बाद हम लोग भूमि पूजन के लिए वापस चल पड़े। वंदना तो उछलती-कूदती इस प्रकार आगे भागी जा रही थी मानो उसे पंख लग गए हों।

उसी दिन से उसका दौरा पड़ना हमेशा के लिए बन्द हो गया। माँ गायत्री की असीम अनुकम्पा से आज वह पूरी तरह से स्वस्थ है।

**प्रस्तुतिः आशा देवी**
**औरंगाबाद ( बिहार)**

# शरणागति से मिला आरोग्य

एक बार विचित्र तरीके से मेरे गले में कुछ समस्या उत्पन्न हुई। ऐसा लगता था मानो गले में काँटे जैसा कुछ चुभ रहा है। डॉक्टर को दिखाया। कुछ समझ में नहीं आया तो डॉक्टर ने गरम पानी से गरारा करने की सलाह दी। एहतीयात के तौर पर कुछ दवा भी दी। इन सब से कोई लाभ न होते देख मैंने बड़े डॉक्टर से दिखाने की सोची। एक डॉक्टर का पता चला कि वे पूरे एशिया में छठे स्थान पर माने जाते हैं।

उनके पास गया। उन्होंने पूरी गम्भीरता के साथ मेरी तकलीफें सुनीं। खून, थूक-खखार की जाँच करवाई। मशीन से गले की जाँच की। इतनी जाँच-पड़ताल के बाद उन्होंने बताया कोई बीमारी नहीं है। संदेह की कोई गुँजाइश नहीं रह गई थी। लेकिन मेरी तकलीफ का क्या करूँ, जो सोते-जागते हर क्षण याद दिला रही थी कि कुछ तो अवश्य ही है। धीरे-धीरे तकलीफ इतनी बढ़ गई कि खाना खाने और पानी पीने में भी तकलीफ होने लगी। आखिरकार हार कर दूसरे डॉक्टरों के पास गई। जिनके पास भी जाती, जाँच के बाद सब यही बताते कि कोई बीमारी नहीं है। टी.एम.एच, डॉ.भटनागर, फिर परसूडीह के चिकित्सक अनिल कुमार ठाकुर सबने देखा-जाँचा, गले की चुभन दूर करने के लिए सभी ने कोई-न-कोई नुस्खे दिए, पर मुश्किल दूर न हो सकी।

कहड़गोड़ा में दिखाया। वहाँ बताया गया, कटक में एक बहुत बड़े डॉक्टर हैं डॉ. सनातन रथ-वहाँ दिखाइए। उनके क्लीनिक और डायग्नोस्टिक सेन्टर में गया। वहाँ डॉक्टर ने कुरेद-कुरेद कर काफी सवाल पूछे। इसी दौरान मुझे याद आया कि मुझे दोनों स्तनों में अक्सर दर्द रहता है, जिस पर पहले बहुत अधिक ध्यान नहीं दिया, लेकिन डॉक्टर के पूछने पर मैंने बताया। उन्होंने संभावना जताई कि संभव है इसी के प्रभाव से गले की समस्या आ रही हो। उन्होंने कहा-कैन्सर की संभावना से भी इंकार नहीं किया जा सकता। कई तरह की जाँच करवाई गई, लेकिन रोग का निदान नहीं हो सका। इस बीच मेरी हालत और खराब होती गई। कमजोरी के कारण गले की चुभन इतनी अधिक बढ़ गई कि खाना पीना भी बन्द होने की नौबत आ गई।

जीवन का अन्त बहुत नजदीक दिखाई देने लगा। इन्हीं दिनों आध्यात्मिकता की ओर मेरा कुछ रुझान होने लगा। पड़ोस में एक भाई गायत्री परिवार के थे। कभी-कभार उनसे कुछ पुस्तकें मिल जाया करती थीं। पढ़कर आकर्षण अनुभव करती थी। अचानक तबीयत के बिगड़ जाने से ऐसा आभास होने लगा कि जिन्दगी के इतने दिन काट लिए, लेकिन परलोक के बारे में कुछ सोचा ही नहीं। कहते हैं, दीक्षा से सद्गुरु का मार्गदर्शन मिलता है, जिससे मृत्यु के बाद सद्गति मिलती है, आत्मा को भटकना नहीं पड़ता। कुछ इन्हीं विचारों से प्रेरित होकर मैंने गुरुदीक्षा ले ली। पड़ोस के वे सज्जन गुरु भाई के नाते कभी-कभार हाल-चाल पूछ लिया करते थे। एक दिन शक्तिपीठ से लौटते समय मेरे पति से भेंट हुई तो उन्होंने साधारण तौर पर कुशल समाचार पूछे। पति ने मेरी हालत बताई तो उन्होंने कहा-ऐसी समस्याओं में एलोपैथी

की तुलना में आयुर्वेदिक दवाएँ अधिक कारगर होती हैं। उन्होंने मुसालनी में डॉ.एम.एन.पाण्डेय (आयुर्वेदिक चिकित्सक) के यहाँ दिखाने की सलाह दी। वैसे भी इसके अलावा हमारे पास और कोई चारा नहीं था। इतने दिनों से इस अजीब रोग के इलाज के पीछे इतने पैसे बहा चुके थे कि अब अधिक सामर्थ्य भी नहीं रह गई थी। कैन्सर की सम्भावना जानने के बाद से ही मैं सोच रही थी कि वैलूर में चेकअप करवा लूँ। वहाँ की काफी प्रसिद्धि सुन रखी थी। लेकिन पैसे के अभाव में वैसा सम्भव नहीं था। डॉ. पाण्डेय से ही दिखाना तय हुआ।

डॉ. पाण्डेय ने केस हिस्ट्री पढ़कर और यह सुनकर कि मैं पैसे के अभाव में वैलूर न जा सकी, वहाँ जाने के लिए खर्च स्वयं देने की पेशकश की और तात्कालिक तौर पर कुछ दवाएँ दीं। बोले जब तक अच्छी तरह चेकअप नहीं हो जाता तब तक इन्हें लेते रहिए। उन्होंने दवा की कीमत भी नहीं ली। अभी इलाज शुरू ही हुआ था कि अचानक एक दिन घर में आग लग गई। इलाज भी बन्द हो गया। अब डॉक्टर के यहाँ जाती भी कैसे! एक बार दवा मुफ्त में दे दी तो दुबारा कैसे माँगी जाय- इस पशोपेश में कई दिन गुजर गए। वैलूर जाने की बात भी अधर में रह गई। दीक्षा के बाद से मैं नियमित साधना करने लगी थी। एक दिन साधना के बाद यों ही अनमनी-सी बैठकर मैं अपनी समस्याओं के बारे में सोच रही थी। अचानक ध्यान आया कि आजकल पहले जैसा दर्द और गले की चुभन अनुभव नहीं हो रही। पता नहीं वह बीमारी अपने आप कैसे छूट गई और आज तक मैं ठीक हूँ। ऐसा मात्र ग१६१रुकृपा से सम्भव हुआ है।

**प्रस्तुति :- विभा देवी**
**परसूडीह, टाटानगर ( झारखण्ड )**

---

# मानवीय गरिमा

आदर्शों के प्रति आस्था, यही है मानवी गरिमा का प्राण। यदि इसे हटा दिया जाए तो अपनी शारीरिक दुर्बलताओं, मानसिक विकृतियों और कुसंस्कारी दुष्टता के कारण मनुष्य किसी के लिए भी उपयोगी न रह जाएगा। यहाँ तक कि अपने आपे के लिए भी अभिशाप सिद्ध होगा। तब इस संसार में न संस्कृति शेष रहेगी और न सभ्यता के कहीं दर्शन होंगे। जिसकी लाठी उसकी भैंस का मात्स्य न्याय ही सर्वत्र दृष्टिगोचर होगा। तब शासन, समाज, नीति, मर्यादा, व्यवस्था आदि की सुंदर संरचना का सारा महल ढह जाएगा और या तो आदिम काल के वनमानुष युग में लौट चलना पड़ेगा अथवा प्रलय तुल्य किसी महायुद्ध से संचित सभ्यता और प्रगति का पूरी तरह अंत करना पड़ेगा।

(अखंड ज्योति-दिस.,१९७७, पृष्ठ - ५)

# गुरुदेव भी रो पड़े

मध्य प्रदेश में यज्ञ चल रहा था। गुरुदेव के साथ मैं भी वहाँ गया हुआ था। एक दिन एक हॉल में तीन-चार सौ बहिनें उनके साथ बैठी थीं। बातचीत के साथ-साथ हँसी के फव्वारे छूट रहे थे। गुरुदेव बात-बात में हँसाते जाते थे। सभी बहिनें उनकी बातों पर हँस रही थीं। एक बहिन उन सबमें गुमसुम बैठी थी। उसे हँसी नहीं आ रही थी। उसे दुखी देख गुरुदेव ने पास बुलाया और पूछा- बेटी तुझे क्या दु:ख है?

वहाँ बैठी सभी बहिनें सज-धज कर आई थीं, अच्छे-अच्छे कपड़े-जेवर पहने हुए थीं और वह लड़की सिर्फ सफेद धोती पहनी थी। गुरुदेव की बात का उसने कोई जवाब नहीं दिया, केवल सिर झुका लिया। गुरुदेव ने फिर दुलारते हुए पूछा-बेटी क्या कष्ट है तुझे, तू हँस भी नहीं रही है। उसे निरुत्तर देख गुरुदेव उसे अलग ले गए। मैं भी उनके साथ चला गया। मैं हमेशा उनकी हरेक बातचीत सुनने का प्रयास करता। उनसे काफी कुछ सीखने को मिलता था।

अलग ले जाकर उन्होंने उससे पूछा-बेटी बता तुझे क्या दुख है? तेरे सारे दुख दूर कर दूँगा। उसने लम्बी साँस ली। फिर बोली- गुरुदेव, मुझे कोई दुख नहीं है। उसकी आँखें आँसुओं से डबडबा आईं। गुरुदेव के बहुत दबाव डालने पर उसने बताया कि उसकी शादी बहुत बचपन में ही हो गई थी। उसके पति का स्वर्गवास हो चुका है। और अब वह स्वनिर्भर जीवन जी रही है। एक विद्यालय में शिक्षिका है और अपना सब काम स्वयं करती है।

विधवा होने का दुख तो वह झेल ही रही थी मगर समाज की बेरुखी से वह बुरी तरह टूट चुकी थी। वह कह रही थी "मैं १०० अखण्ड ज्योति मँगाती हूँ। उसे लेकर सुबह किसी के घर जाती हूँ तो सभी मुझसे नाराज होते हैं कि तू विधवा है। सुबह-सुबह आकर मुँह दिखला दिया, न जाने आज का दिन कैसा बीतेगा। सब गाली भी देते हैं, मैं चुप होकर सुन लेती हूँ और वापस चली आती हूँ। शाम को अखण्ड ज्योति बाँटने जाती हूँ, तब भी वे यही कहते हैं कि शाम को आकर मुँह दिखला दिया। कल से हमारे घर मत आया कर।" वह सिसकते हुए कह रही थी- जहाँ जाती, वहीं सब मुझसे नफरत करते हैं। पत्रिका बाँटने घरों में न जाऊँ तो उनके पैसे अपने वेतन से भरने पड़ते हैं। अपने खर्च में कटौती करनी पड़ती है। समाज की इस नफरत को लेकर जीने की इच्छा नहीं होती। कभी-कभी सोचती हूँ कि आत्महत्या कर लूँ, पर आप कहते हैं आत्महत्या पाप है। मगर मैं जीऊँ तो कैसे?

बोलते-बोलते वह फूट-फूट कर रोने लगी। उसके साथ-साथ गुरुदेव भी रोने लगे। मेरे भी आँसू नहीं रुक रहे थे। गुरुदेव ने उससे कहा-चल बेटी मेरे साथ चल। फिर हॉल में सबके बीच आकर वे कहने लगे "बेटी मैं अपनी बात नहीं कहता, वेद की बात कहता हूँ। तू तो पवित्र गंगा जैसा जीवन जीती है। श्रम करती है, लोक मंगल का कार्य करती है, ब्रह्मचर्य से रहती है। तू साक्षात् गंगा है। जो तेरे दर्शन करेगा-सीधे स्वर्ग को जाएगा और जो यह सब बैठी हैं श्रृंगार करती हैं, फैशन करती हैं, बच्चे पैदा करती हैं, देश के सामने अनेक प्रकार की समस्याएँ पैदा करती हैं-जो भी इनके दर्शन करेगा, सीधे नरक को जाएगा।"

गुरुदेव को इतना क्रोधित होते मैंने कभी नहीं देखा था। वे कह रहे थे "जो दुखी है उसको और दुख देना पाप है। जो यह कहता है कि विधवा को देखने से पाप लगता है वह सबसे बड़ा पापी है। बेटी! तू तो शुद्ध और पवित्र है। उनकी इस बात पर वहाँ बैठी सभी बहिनों ने गर्दन नीची कर ली। थोड़ी देर बाद गुस्सा ठण्डा होने पर उन्होंने उनसे कहा- कहो बेटियों, आपको क्या कहना है? इस पर किसी ने कुछ नहीं कहा। सभी शान्त होकर बैठी रहीं। थोड़ी देर बाद जब उठकर जाने लगीं तो मैंने दरवाजे तक जाकर उनसे कहा- बहनों, गुरुदेव की बातों का बुरा नहीं मानना, वे गुस्से में हैं। लेकिन उनकी बातों पर विचार करना। वे लज्जित होकर बोलीं- भाई साहब, गुरुदेव की बातों का बुरा क्यों मानेंगे। उन्होंने तो सही बात कही है। विधवा तो शुद्ध पवित्र जीवन जीती है। आज उन्होंने हमारी आँखें खोल दीं। आज से हम जब भी किसी विधवा का दर्शन करेंगे, उसमें गंगा माता का दर्शन करेंगे और उसे कोई कष्ट हो, तो उसकी मदद करेंगे। हम दूसरों को भी बताएँगे कि विधवा का दर्शन करने से पाप नहीं होता।

वे कह रही थीं कि गुरुदेव ने हमारी आँखें खोल दीं। हम सौभाग्यशाली हैं कि ऐसे गुरु हमें मिले। ऐसे गुरु हों तो देश में फैला हुआ अज्ञान शीघ्र ही दूर हो जाए। वह दुखी बहिन भी वहीं खड़ी ये सब बातें सुन रही थी। उसके मुख पर सन्तोष के भाव थे। दुख के बादल छँट चुके थे। हल्की सी धूप झिलमिला रही थी।

**प्रस्तुति :- पं. लीलापत शर्मा की यादों के झरोख, मथुरा ( उ.प्र. )**

**( गुरुवर के करीबी रहे स्व. पं. लीलापत शर्मा की डायरी का अंश )**

## आत्मा की प्राप्ति

चित्त की वृत्तियों को शुद्ध करने से ही आत्मा की प्राप्ति होती है, जिसका अंत:करण मल-विकारों से भरा है उसे आत्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता। सत्कर्म के द्वारा भावना शुद्ध होती है और भाव शुद्धि से ईश्वर मिल जाता है। जो अपने दोषों को नहीं देखता, उनके शमन और निराकरण का उपाय नहीं करता, उसकी सारी साधनाएँ आडम्बर मात्र हैं।

मन को निर्मल बनाये बिना न भक्ति प्राप्त होती है, न उपासना बन पड़ती है। जिस ज्ञान से आचार शुद्ध न हों, सद्‌गुण न बढ़े वह निरर्थक भार मात्र है। जिस कर्म के पीछे उच्च भावनाएँ न हों वह बंधन में बाँधने वाला ही होता है। इसलिए ज्ञान, कर्म और भक्ति योग की साधना करके आत्मा की प्राप्ति करने के इच्छुकों को सबसे पहले अपने आचार और विचार शुद्ध करने चाहिए।

अखंड ज्योति-१९६२, अक्टूबर १ -( **भगवान् कृष्ण** )

# बदल दी जीवन की दिशा

मैं एक नास्तिक प्रकृति का व्यक्ति था। मुझे धर्म में कोई आस्था नहीं थी। मैं शांतिकुंज एवं गुरुदेव के नाम को भी नहीं जानता था। मेरा जीवन बहुत ही विचित्र किस्म का था। मैं शराब छोड़कर सभी चीजों का सेवन करता था। मांसाहार भी करता था। एक दिन अचानक एक व्यक्ति से मुलाकात हुई, जो गाड़ियों के ट्रान्सपोर्ट का व्यवसाय करता था। उनका नाम वीरेन्द्र सिंह था। वह चेन स्मोकर था। एक दिन मैं उसके पास बैठा था। स्मोंकिंग की वजह से उनके मुँह में छाले पड़ गए थे। लेकिन मैंने देखा कि उनके दोनो नेत्रों के बीच से प्रकाश निकल रहा है। मैं देखकर आश्चर्य से भर गया। मैंने पूछा तुम्हारी आँखों से क्या निकल रहा है ? तो उसने कहा कि मैं तुमको यहाँ नहीं, बाद में बताऊँगा। बाद में उसने बताया कि मेरे गुरुदेव हैं श्रीराम शर्मा आचार्य जी। मैं उनका शिष्य हूँ। उसकी बातों से मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। धीरे-धीरे मुझे वह गुरुदेव के बारे में बताने लगा। मुझे मिशन की जानकारी हो गई। वह मुझे प्रत्येक कार्यक्रम में बुलाता था। उस समय मेरे क्षेत्र में आचार्य जी के मिशन का कोई प्रचार नहीं था।

१९९२ की बात है। शान्तिकुञ्ज की टोली मेरे क्षेत्र में आई थी। वीरेन्द्र सिंह जी बहुत परेशान थे। उन्होंने मुझसे कहा- भाई साहब शान्तिकुञ्ज से लोग आए हैं, कार्यक्रम कराना है। आप सहयोग करें। मैं सहर्ष तैयार हो गया। मैंने जगह आदि की व्यवस्था कर दी। कार्यक्रम बहुत अच्छे ढंग से सम्पन्न हुआ। जिस दिन पूर्णाहुति थी, टोली में आए भाई बोले- डॉ० साहब कुछ दक्षिणा दीजिए। उनकी बातों को सुनकर मैंने सोचा कि ये लोग भी शायद ठगने खाने वाले हैं, पता नहीं क्या माँग रहें हैं। मैंने कहा- मेरे पास कुछ नहीं है देने के लिए तो वे बोले- आपके पास बहुत कुछ है, कुछ तो दीजिए मैंने सोचा शायद उनको पता है कि मेरे पास रुपया पैसा है। तो मैंने कहा- बोलिए क्या चाहिए ? तो वे बोले अपनी कोई बुराई दीजिए उनकी बातों से मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि अजीब लोग हैं, दक्षिणा में बुराई लेते हैं। उन्होंने कहा- आप माँस छोड़ दीजिए, मैंने कहा- यह मेरे बस का नहीं है। उन्होंने कहा कि आप इसकी चिन्ता मत किजिए। आप केवल संकल्प लीजिए। आपकी बुराई अपने-आप छूट जाएगी। उनने जबर्दस्ती मुझे अक्षत पुष्प दे दिए।

उसके पश्चात् मैंने गायत्री माता को प्रणाम किया, किन्तु उनके बगल में गुरुजी-माताजी के चित्रों को देखकर मैं बहुत हँसा कि ये कैसे भगवान ? ये मेरी क्या बुराई छुड़ाएँगें ? मैंने केवल गायत्री माँ को प्रणाम किया। गुरुजी-माताजी को प्रणाम भी नहीं किया। सोचा साधारण वेष-भूषा में ये मेरे ही जैसे सामान्य व्यक्ति हैं। मुझे बिल्कुल श्रद्धा नहीं हुई। इस प्रकार कार्यक्रम समाप्त हुआ। १५ दिन बीत जाने के बाद माँसाहार की ओर से मेरा मन हटने लगा और धीरे-धीरे मेरे सारे दुर्व्यसन दूर हो गए।

१९९३ के लखानऊ अश्वमेध यज्ञ में मैंने माताजी से दीक्षा ली। तीन महीने का समयदान भी दिया। आज मेरा पूरा परिवार गुरुकार्य में संलग्न है। शताब्दी वर्ष ही मेरा रिटायरमेन्ट हो चुका है। जबकि मेरा पेन्शन, प्रोविडेन्ट फंड आदि का कार्य बाकी है। लेकिन मैं यहाँ चला आया हूँ, चूँकि मेरे लिए गुरुकार्य से बढ़कर कोई कार्य नहीं है। गुरुकृपा से मेरे जीवन के सारे दुर्गुण दूर हो गए। मैं एक अच्छा इन्सान बन सका।

**प्रस्तुति : डॉ० के० के० खरे**
**प्रतापगढ़ ( उत्तरप्रदेश )**

---

# शराब से छुटकारा

किउल रेलवे जंक्शन के रेलवे अस्पताल में एक कम्पाउण्डर थे राजेन्द्र प्रसाद। वह बहुत शराब पीते थे। एक बार टाटानगर के एक यज्ञायोजन में वे मेरे साथ गए। वहाँ पूज्यवर भी पधारे हुए थे। सुबह को प्रणाम क्रम चला तो लम्बी लाईन बन गई। काफी देर की प्रतीक्षा के बाद गुरुदेव के दर्शन हुए। चरण स्पर्श के लिए उनको और कुछ देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ी। लाइन धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। जब उनकी बारी आई तो उन्होंने गुरुवर को प्रणाम किया। मगर गुरुदेव ने उनकी ओर नजर उठाकर नहीं देखा और न कोई बात कही।

वे दुखी हो गए। लौटकर मुझसे कहने लगे कि हमने गुरुजी को प्रणाम किया, मगर उन्होंने मेरी तरफ देखा तक नहीं। वे दुबारा जाकर लाईन में लग गए। जब गुरुवर के निकट पहुँचे तो उन्होंने कहा- बेटा, तुम फिर आ गए? वे शर्म से पानी-पानी हो गए। जल्दी से प्रणाम किया और वापस चले आए।

जाने क्या भाव आए उनके मन में, गुरुदेव ने उनकी तरफ नहीं देखा- इसका क्या कारण सोचा उन्होंने, लेकिन इसके बाद उनके जीवन में बड़ा परिवर्तन आया। राजेन्द्र जी ने शराब पीना बिल्कुल छोड़ दिया।

**प्रस्तुति :- नर्मदा प्रसाद ओझा,**
**पटना ( बिहार )**

# गुरुदेव ने बदली चिन्तन धारा

बात १९७५ के ३१ मार्च की है। उन दिनों हमने प्रतिवर्ष टाटानगर से चार बार शान्तिकुञ्ज आने का नियम बना रखा था। ३० मार्च को शिविर समाप्त हुआ था। ३१ मार्च को वापस जाते समय पूज्य गुरुदेव से मिलने गया। उनने पूछा फिर कब आओगे? मैंने कहा अब जून में आएँगे। छूटते ही उनने कहा- जून में मत आना, मैं बहुत व्यस्त रहूँगा, तुम्हें समय नहीं दे पाऊँगा। बात यह थी कि शान्तिकुञ्ज आने पर जब कभी भी हम पूज्य गुरुदेव से मिलने जाते थे तो वे अपने पास बिठा लेते थे। बातें भले औरों से करते रहें लेकिन हमें उठने नहीं देते थे। लगता था मुझे लोगों से डीलिंग करना सिखा रहे हों। अथवा सबसे परिचय करा रहे हों। फिर हमने कहा- अब आपकी इच्छा, आप जब बुला लें तब आ जाऊँगा। ऐसा कहकर उन्हें प्रणाम किया और नीचे आकर स्टेशन जाने के लिए बस में बैठ गया।

१० मई को अचानक एक पाँच कुण्डीय यज्ञ २२ से २५ मई की तारीखों में श्री डी. एन. झा 'मस्ताना जी' के गाँव (नूतन सोनबरसा, थाना बीहपुर, जिला खगड़िया, बिहार) में सम्पन्न कराने जाने की बात तय हो गई। साथ में टाटानगर के श्री के. पी. श्रीवास्तव और गायक श्री प्रेमदास जी की टीम बनी। इसी के साथ अगला पाँचकुण्डीय कार्यक्रम दिनांक २७ से ३० मई तक उ.प्र. के देवरिया जिले के लाररोड के समीप तेलियाकलाँ गाँव में सम्पन्न कराने की बात भी तय हो गई।

तेलियाकलाँ के कार्यक्रम में श्री डी. एन. झा जी भी साथ हो गए थे। गरमी बहुत तेज होने के कारण ३० मई को ११ बजे तक पूर्णाहूति कर लेनी पड़ी। १२ बजे तक सभी का भोजन भी हो गया। इसी समय पता लगा कि लाररोड में पूज्य देवरहा बाबा का भी यज्ञ होने वाला है और वे यज्ञ की तैयारियों के लिए इन दिनों यहीं हैं। हम चारों के मन में उनसे मिलने की प्रबल इच्छा जागी और तपती दोपहरी में उनके दर्शनों के लिए चल पड़े। हममें से किसी ने कहा- बाबा के हाथ का फल खाएँगे।

लगभग २.३० बजे हम लोग उनके प्रांगण में पहुँचे तो उपस्थित शिष्य समुदाय ने आगे बढ़ने से रोका। हम सब पीले वस्त्र में थे। पूज्य बाबा जी ने माचा पर से हाथ देकर बुलाया। हम सब उनके पास पहुँचे। कड़कती आवाज में उनने पूछा- आप लोग कौन हैं, कहाँ से आए हैं? हमने जवाब दिया.... हम सब वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य जी के शिष्य हैं। समीप के गाँव तेलियाकलॉं में गायत्री महायज्ञ सम्पन्न कराने आए थे। अभी आपके दर्शनों के लिए आए हैं। पूज्य बाबा ने फिर पूछा आप लोगों का क्या मंतव्य है- हमने जवाब दिया ... भगवान बुद्ध के भिक्षुओं की तरह पर्वतों, जंगलों, रेगिस्तानों, बियावानों को पार करते हुए सम्पूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति की ध्वजा फहराना।

पूज्य बाबा जी ने- "आप सबकी जय हो, विजय हो" कहते हुए दोनों हाथ ऊपर उठाकर आशीर्वाद दिया। स्वयं माचे से नीचे उतरे और साथ आने का निर्देश देते हुए आगे बढ़े। थोड़ी दूर चलने पर भूगर्भ (तलघर) में प्रवेश किया, जहाँ गोबर से लिपाई-पुताई की हुई और बिजली का बल्व जल रहा था। उस गुफा में बाँस से बनी जाली के उस पार- जहाँ उनका आसन बना था, जाकर बैठ गए। इस पार हम सबको आसन देकर बैठाया। अन्दर में सेब, संतरा, केला, अंगूर का ढेर लगा था। हम सब को पर्याप्त मात्रा में फल देकर फलाहार करने का निर्देश दिया। हम सब एक दूसरे का मुख ताकने लगे, क्योंकि हमने फलाहार की इच्छा व्यक्त की थी। हम सब फल खाते हुए पूज्य बाबाजी से बातें कर रहे थे। हमारे मना करने पर भी उनने दुबारा फल दिए, यह कहते हुए कि ग्रामवासियों को भी दे देवें।

चलते समय हमने बाबाजी को प्रणाम किया। उनने पुन: यशस्वी होने का आशीर्वाद दिया और पूछा कि अब आप यहाँ से कहाँ जाएँगे ? बिना सोचे मेरे मुख से बात निकल गई कि परम पूज्य गुरुदेव के दर्शनों के लिए हरिद्वार जाएँगे। इस उत्तर के बाद के दृश्य की हमने कल्पना भी नहीं की थी। पूज्य बाबा ने कहा कि उन दिव्य पुरुष की पार्थिव काया के दर्शनों का सौभाग्य तो जाने कब मिलेगा, किन्तु उनके श्रीचरणों में हमारा साष्टांग प्रणाम अवश्य निवेदित कीजियेगा। इतना कहते हुए उनकी आँखों में आँसू छलके और गाल पर ढुलक आये। सिर झुकाकर, हाथ जोड़कर हमने निर्देश स्वीकारा। तत्काल मस्तिष्क में ख्याल उभरा-देखो ये दिव्य आत्माएँ किस तरह उच्चस्तरीय धरातल पर एक दूसरे के प्रति सम्मान का भाव रखते हुए एकजुट होकर लोक कल्याण के कार्यों में अपने-अपने ढंग से संलग्न हैं।

गुफा से जब हम बाहर निकले तो अचानक अपनी भूल का अहसास हुआ। जाना था टाटानगर-जमशेदपुर और हमने हरिद्वार जाने की बात कह दी। सोचने लगा, उचित स्थल पर संदेश न पहुँचाने पर संदेशवाहक को पाप लगेगा। इस पाप से बचने के लिए तत्काल हरिद्वार जाने का निर्णय ले लिया। फिर दूसरी बात मस्तिस्क में उभरी, पूज्य गुरुदेव ने जून में हरिद्वार आने को मना कर रखा है। स्थिति धर्म संकट की बन गई।

स्थान की दूरी और आवागमन की सुविधा पर ध्यान दौड़ाया तो ऐसा लगा कि तेलिया कलाँ पहुँच कर यज्ञ संयोजक से विदा लेकर यदि आज ही चल दिया जाए तो शायद धर्म संकट की स्थिति टल जाए। सो गाँव पहुँचते ही हमने बाबा का दिया प्रसाद यज्ञ संयोजक श्री राम नक्षत्र जी को दिया और तत्काल विदा देने की बात कही। उस समय विदा होने पर मार्ग में होने वाली असुविधा का उनने ध्यान दिलाया, फिर भी हमने दबाव दिया और आधे घण्टे में हम सब तत्काल वहाँ से विदा हो गए।

गाँव से दो फर्लांग की दूरी पर पक्की सड़क थी। वहाँ पहुँचने पर पता लगा कि लार रोड जाने वाली अंतिम बस जा चुकी है। उन दिनों यात्राओं में स्वाध्याय के लिए मिशन की ढेरों पुस्तकें लेकर चलता था, जिससे सामान का बैग भारी हो जाता था। भारी वजन से कन्धे चरमराने लगे और किसी के सहयोग की आवश्यकता अनुभव होने लगी। अचानक ६ फीट का काला छरहरा जवान कंधे पर खाली कांवर लिये आता दिखाई पड़ा। हमने सोचा, लगता है कि शादी विवाह का या मरनी आदि का न्यौता पहुँचा कर लौट रहा होगा। हमने अपना सामान लाररोड तक पहुँचा देने का निवेदन किया तो उसने हामी भर दी। मजदूरी पूछने पर वह मुस्कुरा दिया, जिससे किसी अदृश्य सहायता मिलने की परिकल्पना मेरे मस्तिष्क में उभरी। लगभग तीन कि.मी. की दूरी तय की तो एक बस खड़ी दिखाई पड़ी।

कांवर वाले भाई ने बताया कि यही बस लाररोड स्टेशन जाने वाली है। टायर पंक्चर हो जाने से यहाँ रुक गई थी। अब टायर मरम्मत हो गई है और गाड़ी तुरंत जाने वाली है, आप लोग इसी गाड़ी में बैठ जाएँ। इस भाई को पैसा देने में मुझे झिझक हुई। श्री के. पी. श्रीवास्तव को सामान रखवाने को कह कर हम उनके लिए मिठाई लाने चले गए। कुछ देर बाद मैं लौटा और उन्हें ढूढ़ने लगा तो कहीं पता नहीं चला। वह दूर-दूर तक भी नहीं दिखाई पड़े। हम मन मसोस कर पैकेट लिए गाड़ी में बैठ गए।

लाररोड स्टेशन पहुँचते ही हमें बनारस जानेवाली ट्रेन मिल गए, जिससे १२ बजे रात में वाराणसी पहुँच गए। पता चला कि सियालदाह से चलकर जम्मू-तवी को जाने वाली ३०५१-अप ट्रेन एक घण्टे लेट है और एक बजे रात में वाराणसी आ रही है। हमें हरिद्वार का टिकट लेने का मौका मिल गया और उसी ट्रेन से चलकर ३१ तारीख की ८ बजे रात में लक्सर आए। यहाँ पर सहारनपुर देहरादून पैसेंजर ट्रेन लगी मिल गए, जिससे १० बजे रात में हम सब हरिद्वार स्टेशन आ गए।

स्टेशन से शान्तिकुञ्ज जाने के लिए कोई रिक्शा वाला भाई तैयार नहीं होता था। कारण पूछने पर बताया कि रात में उस वीरान इलाके से लौटते समय रास्ते में लोग पैसा छीन लेते हैं। अन्त में एक रिक्शा चालक से बात तय हुई कि हम उसे दूना पैसा देंगे, रिक्शा पर कोई व्यक्ति नहीं बैठेगा, केवल सामान रखा रहेगा। चढ़ाई आने पर हम सब पीछे से धक्का भी देंगे और शान्तिकुञ्ज पहुँचने पर रात्रि में उसके सोने की व्यवस्था भी बना देंगे। इन्हीं शर्तों पर रिक्शा से सामान लेकर हम लोग रात्रि के ११ बजकर ५० मिनट पर शान्तिकुञ्ज गेट पर आ गए, जो इन दिनों गेट नं. १ के नाम से जाना जाता है। उन दिनों एकमात्र वही गेट था। गेट खटखटाया तो सामने डाकघर के कमरे में सोये डाकपाल श्री किरीट भाई जोशी ने आकर गेट

खोल दिया, और इस तरीके से हम लोग ११ बजकर ५५ मिनट पर शान्तिकुञ्ज प्रांगण में आकर मैदान में सो गए।

शान्तिकुञ्ज में उस समय स्थायी यज्ञशाला का निर्माण नहीं हुआ था। आज के कम्प्यूटर रूम के सामने वाले मैदान में बाँस और कपड़े की बनी अस्थाई यज्ञशाला में प्रातः दैनिक हवन हुआ करता था और हवन यज्ञ के पश्चात् यज्ञशाला को समेट कर रख दिया जाता था। हम लोगों ने भी हवन यज्ञ में भाग लिया और नियमित दिनचर्या के अनुसार प्रातः ८ बजे अखण्ड दीप के दर्शन और पूज्य गुरुदेव, वन्दनीया माता जी को प्रणाम करने प्रथम तल पर पहुँचे। उन दिनों ये शक्ति-युगल अखण्ड दीपक वाले बरामदे में ही बड़े सोफा पर दर्शन देने बैठा करती थीं।

अपनी बारी आने पर मैं श्रीगुरुचरणों में प्रणाम करने झुका तो देखते ही पूज्य गुरुदेव ने कहा- बेटा, जून माह में आने के लिए तुम्हें मना किया था। सहसा मेरे मुँह से निकल गया- नहीं पिताजी, जून में नहीं आया हूँ। रात ग्यारह बजकर पचपन मिनट पर मई माह में ही परिसर में आ गया था। पूज्यवर ने मुस्काते हुए कहा- अच्छा-अच्छा मई माह में ही आ गया था, अच्छा किया। पर बेटा अपने साथ इतना वजन लेकर मत चला करो। तुम्हारा वजन उठाने में मेरे कन्धे चरमरा जाते हैं। सुनकर ३० मई की शाम मिले उस काले आदमी को याद कर हमारी आखें फटी रह गईं। मेरी आँखों में आँसू छलछला आए कि पूज्य गुरुदेव को मेरा बोझ उठाना पड़ा।

आगे पूज्यवर ने कहा-देख बेटा! इन दिनों शान्तिकुञ्ज में तीन-तीन शिविर चल रहे हैं- १. नौ दिवसीय जीवन साधना शिविर,२. ब्रह्मवर्चस् लेखन शिविर और ३. रामायण प्रशिक्षण शिविर। तीनों शिविर महत्वपूर्ण है, तुम तीनों में भाग लेना। तीनों की दिनचर्या की जानकारी नीचे जाकर वीरेश्वर से ले लेना और थोड़ा समय ऊँचा-नीचा करके तीनों में शामिल हो जाना। जी पिताजी, कहकर हमने अपनी सहमति व्यक्त की। फिर देवरहा बाबा का संदेश प्रसंग हूबहू उनके सामने रख दिया। क्षण भर के लिए पूज्य गुरुदेव की आँखें बन्द हो गईं। आँखें खुलीं तो उनकी दोनों आँखे नम थीं। इस दृश्य ने मेरे अन्दर विनम्रता और कृतज्ञता भाव का संचार किया और अपने सहयोगियों के प्रति प्रतिद्वन्द्विता की जगह अपनत्व और सहयोग भाव विकसित हुआ। उस दिन से गायत्री परिजनों के प्रति मेरे चिन्तन की धारा ही बदल गई। सभी भगवत् कार्य के सहयोगी दिखाई देने लगे।

पूज्य गुरुदेव के निर्देशानुसार नीचे आकर मैंने अग्रज श्री वीरेश्वर उपाध्याय जी से भेंट कर उनको सारा हाल बताया। उनसे शिविर दिनचर्या की पूरी जानकारी प्राप्त की और उनके सहयोग से तीनों शिविरों की भागीदारी करके तीनों के प्रमाण-पत्र प्राप्त किए। उन तीनों शिविरों के लिए प्रमाण-पत्र हमें प्रदान करने की विशेष व्यवस्था बनाई गई थी।

तीनों शिविर एक दूसरे से बढ़कर जानकारी देने वाले, श्रद्धा संवर्द्धन करने वाले और उपयोगी थे। थोड़े समय में इतना बेशकीमती ज्ञान प्रदान करने की व्यवस्था तो कोई समर्थ और हितैषी गुरुसत्ता ही कर सकती है। मैं सतत् चिन्तन करता रहता हूँ कि किस प्रकार शुभेच्छु गुरुसत्ता अपनी और शिष्य की वाणी की मर्यादा बचाते हुए शिष्य के विकास के लिए निरन्तर ताना-बाना बुनती रहती है और अच्छे अवसर उत्पन्न कर शिष्य के आत्मिक और जागृतिक विकास में सहयोग प्रदान करती है। धन्य है गुरु शिष्य का यह अद्‌भुत पावन सम्बन्ध और धन्य हैं ऐसे सौभाग्यशाली शिष्य।

**प्रस्तुति : केसरी कपिल**
**शांतिकुंज, हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )**

## प्रेरणा और प्रोत्साहन

*थोड़े से वोट व्यापक क्षेत्र में अपना प्रभाव दिखा सकते हैं, उसी प्रकार हमारी आदर बुद्धि यदि विवेकपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करे तो कितने ही कुमार्ग पर बढ़ते हुए कदम रुक सकते हैं और कितने ही सन्मार्ग की ओर चलते हुए झिझकने वाले पथिक प्रेरणा और प्रोत्साहन पाकर उस दिशा में तत्परतापूर्वक अग्रसर हो सकते हैं।*

**( अखंड ज्योति-१९६२, सित० २३ )**

# खीर में मिला महाप्रसाद का स्वाद

यह जमशेदपुर की कहानी है। सन् १९६९ई. में वर्मा माइन्स में महायज्ञ का आयोजन किया गया था। निर्धारित तिथि को पूज्य गुरुदेव का आगमन हुआ। उन्हें टाटा कम्पनी के भव्य गेस्ट हाउस में ठहराया गया। रात्रि विश्राम से पहले पूज्य गुरुदेव ने वाचमैन से कहा-मथुरा से एक पण्डित जी रात के डेढ़-दो बजे आने वाले हैं। लीलापत नाम है उनका। उन्हें मेरे पास ही ठहरा देना।

उस वाचमैन की ड्यूटी बदल गई थी और वह साथी वाचमैन को लीलापत जी के बारे में बताना भूल गया था। लीलापत जी पहुँचे। बोले-पूज्य गुरुदेव जहाँ हैं, मुझे वहीं ठहराया जाए। वाचमैन ने कहा-आपकी व्यवस्था कहीं और की गई है, मैं आपको वहीं ले चलता हूँ। पण्डित जी को बात पसंद नहीं आई। उन्होंने कहा-सत्यानन्द या गायत्री का घर जानते हो? मुझे वहीं ले चलो।

लड़का उन्हें मेरे घर ले आया। लीलापत जी के घर पर आने से हमारी खुशी का ठिकाना नहीं रहा। आनन-फानन में उनके विश्राम की व्यवस्था की गई।

लीलापत जी बिस्तर पर लेटे ही थे कि एक बार फिर दरवाजा खटखटाया गया। दरवाजा खोलते ही मैंने देखा-सामने पूज्य गुरुदेव खड़े हैं, एक हाथ में लोहे की पेटी लेकर। साथ में एक लड़का सिर पर बेडिंग लिए खड़ा था। एक-एक घर के सभी लोग दरवाजे पर आ गये। हम सब-की हालत ठीक वैसी ही थी, जैसी भगवान श्रीकृष्ण के पहुँचने पर विदुर की हुई होगी। हमने सपने में भी कल्पना नहीं की थी कि पूज्य गुरुदेव के चरण हमारे घर पर पड़ेंगे। गायत्री दीदी तो इतना विभोर हो गई थीं कि उनकी आँखों से आँसू निकल पड़े। उन्होंने कहा-हमारे घर का तो कोना-कोना अपवित्र है, गुरुदेव! आप यहाँ कैसे आ गए?

दीदी की बात सुनकर गुरुदेव मुस्कराते हुए अन्दर आए। एक-एक कर हर कमरे में जाकर बैठे और बोलते गए-लो, तुम्हारा घर पवित्र हो गया। सुबह होते-होते श्री रमेश चन्द्र शुक्ला तथा श्री हेमानन्द जी भी पूरे कुनबे के साथ आ गए। घर पर उत्सव जैसा माहौल बन गया।

सबके लिए खीर बनाकर परोसी गई। पहले गुरुदेव ने चखा, फिर शुक्ला जी ने चखते ही अजीब-सा मुँह बनाया। हम शंकित हुए। अचानक दीदी को याद आया कि डालडा के उस डिब्बे में नमक रखा था और उन्होंने अतिउत्साह में खीर में चीनी की जगह नमक डाल दिया था। उनके उड़े हुए चेहरे को देखकर गुरुदेव ने पूछा-क्या बात है? दीदी ने अटकते हुए कहा-खीर में नमक....। गुरुदेव बोले-बेटी, कहाँ है नमक? ठीक तो है। तुम लोग भी चख कर देखो। एक-एक कर सबने खीर चखी। .....और आश्चर्य! खीर में माँ जगदम्बा को अर्पित किए गए भोग जैसा अलौकिक स्वाद था।

**प्रस्तुतिः भास्कर प्रसाद सिन्हा,**
**पूर्वजोन, शांतिकुंज, हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )**

# पंगुं लङ्घयते गिरिं

अमरेली जिले के बगसरायक मोटा मान्दोड़ा गाँव के प्रज्ञापीठ में मैं अपनी माँ के साथ ६ वर्षों तक रहा। उस इलाके में पानी की बहुत दिक्कत थी। तब पूरे गाँव में एक ही टेप नल था, जो सुबह-शाम दो घण्टे तक ही खुलता था। मेरे कमरे से नल तक पहुँचने के लिए जो रास्ता जाता था, उसी रास्ते पर एक मकान बन रहा था, जिसकी नींव हेतु आठ फीट गहरा गड्ढा खुदा हुआ था। कच्चे रास्ते के बीचो-बीच खोदे गये इस गड्ढे पर लोगों के आने जाने हेतु लकड़ी का पटरा डाल दिया गया था। वैसे तो मैं हर रोज सुबह-सुबह ही नल पर जाकर पीने का पानी भर लिया करता था, पर उस दिन मुझे पुंसवन संस्कार कराने अमरेली जाना था, इसी कारण पानी नहीं भर सका। मेरी माँ नब्बे साल की थीं, इसलिए मैंने उन्हें पानी भरने से मना किया और कहा कि शाम को आकर पानी भर लूँगा।

मेरे सामने तो उन्होंने हाँ कर दी, किन्तु मेरे जाने के बाद ममता की मारी वे सोचने लगीं कि बेटा थक हार कर शाम को आएगा, फिर उसे पानी लाने जाना पड़ेगा। इससे तो अच्छा है कि मैं ही धीरे-धीरे पानी ले आती हूँ। यह सोचकर वे पानी लेने चल पड़ीं और विधाता को जो मंजूर था, वही हुआ।

जब वह लकड़ी के पटरे पर पैर रखकर नींव के गड्ढे के ऊपर से गुजर रही थीं, लकड़ी डगमग हुई, पैर फिसला और वे सीधे आठ फीट गहरे गड्ढे में जा गिरीं।

उनके गिरते ही आस-पास हल्ला मच गया। पास के स्कूल में ४०-५० बच्चे पढ़ रहे थे, शोर सुनकर वे सभी दौड़ पड़े। गड्ढे के अन्दर टेबुल डालकर उन बच्चों ने मिलकर उन्हें निकाला और कमरे पर पहुँचा दिया तथा शरीर में लगे चोट पर हल्दी लगा दी।

शाम को मैं वापस लौटा, तो बस से उतरते ही लोगों ने मुझे बताना शुरू किया कि सुबह पानी भरते हुए आपकी माँ गड्ढे में गिर पड़ी हैं और उन्हें काफी चोट आई है।

इतना सुनते ही मैं तेजी से घर की ओर चल पड़ा। मेरा मन माँ पर झल्ला उठा था। जब मैं पानी लाने के लिए मना कर चुका था, तो उन्हें जाने की जरूरत ही क्या थी? मुझे तो पहले ही शक था कि पानी लाने जाएँगी, तो गड्ढे में गिरेंगी जरूर। आखिर हुआ भी वही। अब अगर इस बुढ़ापे में कोई हड्डी टूट गई हो, तो क्या होगा?

तरह-तरह की चिन्ताओं से घिरा जब मैं घर पहुँचा, तो देखा कि वह बिस्तर पर लेटी हुई जोर-जोर से कराह रही थीं। उनका पूरा शरीर गहरी चोट से काला पड़ गया था। वह मुझे देखते ही बिलख-बिलख कर रोने लगीं।

उनका यह हाल मुझसे देखा नहीं जा रहा था। मैंने गुरुदेव से प्रार्थना की- गुरुदेव, इस मुसीबत से उबरना हमारे बस की बात नहीं है। इस उम्र में अगर मेरी माँ चलने-फिरने के काबिल नहीं रहीं, तो मैं क्या करूँगा? अब तो आप ही हमें इस मुसीबत से उबार सकते हैं।

चिन्ताओं में डूबा हुआ मैं बाहर निकला और गाँव के वैद्य को साथ लेकर वापस आया। माँ की हालत देखकर वे सशंकित भाव से सिर हिलाने लगे। उस समय

माँ की स्थिति इतनी नाजुक थी कि वह अपने हाथ-पैर की उंगलियाँ भी नहीं चला पाती थीं। उन्होंने कुछ दवाइयाँ दीं और जाते हुए कहा-पूज्य गुरुदेव पर भरोसा रखिए। उन्होंने चाहा, तो सब ठीक हो जाएगा।

गुरुजी का ध्यान करके मैं सो गया। प्रातः उठा तो देखता हूँ कि माँ के कमरे की बत्ती जली हुई है। सोचा, माँ तो उठ नहीं सकती, फिर लाइट किसने जलाई ? जिज्ञासावश माँ के कमरे में गया तो देखा कि माँ का बिस्तर खाली है। मैं चक्कर में पड़ गया। वह तो हाथ-पैर भी नहीं हिला सकती थी, फिर आखिर गई तो कहाँ गई ? मैं तेजी से पलटकर कमरे से बाहर निकला, तो देखा कि माँ स्नान करके वापस आ रही थीं। मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। रात भर में ऐसा क्या जादू हो गया कि माँ आराम से चलने-फिरने लगी है।

मुझे आश्चर्यचकित देखकर माँ ने मुस्कुराते हुए कहा-बेटा, रात को गुरुदेव आए थे। वे बोले-उठ, खड़ी हो जा। तुझे कुछ भी नहीं हुआ है। उनकी बातों में न जाने कैसा जादू था कि मैं एक ही झटके में उठकर खड़ी हो गई। जैसे ही मैं उनके चरण छूने के लिए आगे बढ़ी, वे अचानक गायब हो गए। उनकी कृपा से अब मैं बिल्कुल ठीक हूँ। गुरुसत्ता की इस अनुकम्पा को याद करके आज भी मेरी आँखें भर आती हैं।

**प्रस्तुतिः बिट्ठल भाई**
**जामनगर, गुजरात ( उत्तराखण्ड )**

## प्राण शक्ति का प्रभाव

यों हर मनुष्य में एक विद्युत धारा विद्यमान है, पर महानुभावों में यह प्राणशक्ति अपेक्षाकृत कहीं ज्यादा होती है। उसे तेजोवलय के रूप में देखा और अनुभव किया जा सकता है। वह अपने क्षेत्र में एक विशेष प्रकार का प्रभाव छोड़ती है। समीपता-घनिष्ठता होने पर महाप्राणों, सशक्तों का प्राण-प्रवाह न्यून प्राण वालों की ओर अनायास ही चल पड़ता है। प्रत्यक्ष कथनीपरक न होने पर भी परोक्ष रूप से प्राणवानों के व्यक्तित्व से निकलने वाली ऊर्जा अपने समीपवर्ती प्राणियों और पदार्थों को प्रभावित करने लगती है। ऋषि आश्रमों के समीपवर्ती क्षेत्र में सिंह एवं गाय वैर-भाव भूलकर एक घाट पानी पीते और स्नेह-सद्भाव में घुल जाते हैं।

# ऐसा तो भगवान से ही संभव है!

मंत्र दीक्षा मैंने सन् १९७२ में ही ले ली थी। अपने पैतृक गाँव खीर भोजना, वारसलीगंज, नवादा (बिहार) में ही वह संस्कार सम्पन्न हुआ था। १९७६ में बोकारो में गायत्री यज्ञ हुआ। आदरणीय रमेश चन्द्र शुक्ल जी वहाँ केन्द्रीय प्रतिनिधि के रूप में थे। उनसे पत्र लेकर पू. गुरुदेव के दर्शन हेतु शान्तिकुञ्ज आया। अप्रैल का महीना था। लेकिन वसन्त पूरे वातावरण में अभी तक व्याप्त था। ब्रह्ममुहूर्त में गुलाबी जाड़े की सुखद अनुभूति होती थी। यहाँ पाँच दिनों तक के शिविर में ही मेरे विचार और चिन्तन में आमूलचूल परिवर्त्तन होता चला गया।

दर्शन शास्त्र का विद्यार्थी होने के नाते अध्यात्म की थोड़ी बहुत जानकारी तो थी, पर कर्मकाण्डी पंडितों की तिकड़मों के कारण उस पर आस्था नहीं जम पाती। यहाँ आकर अध्यात्म को लेकर अविश्वास का वह भाव बिल्कुल खत्म हो गया। एक दृढ़ आस्था मन में पनपने लगी, कोई सत्ता अवश्य है जिसके अनुसार सब कुछ अपने समय से चलता रहता है।

मिशन के विषय में मैं अधिक से अधिक जानना चाहता था। सेवा कार्य में सहयोग देने की भी इच्छा होती। मैंने आदरणीय श्री वीरेश्वर उपाध्याय भाई साहब से परामर्श किया और उनके बताए अनुसार अगले वर्ष मई, १९७७ में शान्तिकुञ्ज आकर एक मासीय सत्र किया। उसी समय संकल्प लिया कि वर्ष में छुट्टी के दो माह मैं यहाँ के कार्य में लगाऊँगा। स्थानीय समय दान के अलावा केन्द्र में समयदान १९७८ से देने लगा।

पहले छुट्टियों में घर जाता था। खेती-बाड़ी के काम में पिताजी की मदद करता था। वह सिलसिला बंद हो गया, तो पिताजी नाराज़ हुए। घर भेजी जाने वाली मासिक राशि में भी कटौती होती गई। अपने गाँव या आस-पास के गाँव के कोई परिचित मिल जाते, तो कहते-पिताजी तुमसे बहुत नाराज रहते हैं। कहते हैं, पता नहीं किस साधु महात्मा के चक्कर में पड़ गया है। न घर आता है, न ही पैसा दे पाता है। उसका नाम मत लीजिये। यह सब सुनकर मुझे अच्छा नहीं लगता।

मैं असमंजस में था। पिताजी को मैं इस तरह से नाराज नहीं करना चाहता था। सेवा कार्य के संदर्भ में मैंने पिताजी को विश्वास में लेने की पूरी कोशिश की, लेकिन वे रत्ती भर भी नहीं पिघले। अन्त में थक हार कर मैंने मन ही मन गुरुदेव से प्रार्थना की। मुझे पूर्ण विश्वास था कि इसका वे ही कुछ समाधान निकालेंगे। १९७९ में पिताजी बद्रीनाथ जाने के लिए राजी हुए। पहले शान्तिकुञ्ज आकर सामान रखने की व्यवस्था बनाई गई। फिर पिताजी को साथ लेकर पूज्य गुरुदेव से मिलने गया। गुरुदेव बोले-बेटा, इन्हें बद्रीनाथ घुमा लाओ। पूज्य गुरुदेव की बातें सुनकर पिताजी को आश्चर्य हुआ। नीचे आकर वे हमसे पूछने लगे-इन्हें कैसे मालूम हुआ कि हम बद्रीनाथ जा रहे हैं? मैंने कहा-मुझे क्या मालूम? मैं तो आपके साथ ही हूँ।

बद्रीनाथ से लौटकर शान्तिकुञ्ज में दो-एक दिन रुकने के लिए पिताजी से पूछा, तो वे राजी हो गए। शान्तिकुञ्ज के स्नेहिल वातावरण ने उनका मन मोह लिया था। बोले मुझे यहाँ बहुत अच्छा लग रहा है। जब तक चाहो, रुको। इसी बीच एक दिन अपने कमरे में ही आश्चर्य से उत्तेजना पूर्ण स्वर में कहने लगे-अरे? गुरुजी तुम लोगों को बुड़बक (मूर्ख) बना कर रखे हुए हैं। ये आदमी नहीं हैं। ये भगवान के सिवा कुछ हो ही नहीं सकते। साश्चर्य मैंने पूछा-क्या हुआ, ऐसा क्यों कह रहे हैं? उन्होंने कहा-आज एक लड़का, जिसको मरे हुए घंटे भर से ज्यादा हो गया था, उसे उन्होंने जिन्दा कर दिया।

घटना को पूरे विस्तार से बताते हुए उन्होंने कहा-मरे हुए उस लड़के को लेकर कुछ लोग गुरुजी के पास गए। गुरुजी पश्चिम वाले कमरे से निकल रहे थे। शोर सुनकर पूरब वाले कमरे में गए। आकर लोगों से पूछा-क्या बात है? लोगों ने बताया-एक बच्चा मर गया है। बच्चा जमीन पर लेटा था। बच्चे की माँ छाती पीटकर रो रही थी। गुरुजी बोले-कुछ नहीं हुआ है। इतना कहते हुए उन्होंने झटके से बच्चे का हाथ पकड़कर उठा दिया। बोले-जा, इसे माता जी के पास ले जाकर प्रसाद खिला दे। सभी आश्चर्यचकित थे। मरे हुए को जिन्दा कर देना ऐसा तो मात्र भगवान ही कर सकते हैं!

इस घटना के बाद पिताजी की दृष्टि बदल गई। इसके बाद वे हमेशा मेरे सेवा कार्य को सराहते रहे-मेरा नाम लेते ही भावुक होकर कहते-वह जो कर रहा है, करता रहे, मुझे उसके पैसे और समय की जरूरत नहीं है। वह भगवान का काम कर रहा है, वह स्वयं तो तरेगा ही, हमारे सारे खानदान को भी तार देगा।

**- प्रस्तुतिः रामनरेश प्रसाद, बोकारो (झारखण्ड)**

## विचार परिवर्त्तन की आवश्यकता

मनःस्थिति परिस्थितियों की जन्मदात्री है। विचार कार्य का रूप धारण करता है। आकांक्षा अग्रगामी योजना बनाती है और साहस-पुरुषार्थ में जुट पड़ता है। इन दिनों यह प्रयोग विध्वंस के लिए हो रहा है। तात्कालिक लाभ को ही सर्वोपरि मानने की यह परिणति है। इसे प्रतिभाओं का भटकाव कहा जा सकता है। यदि प्रतिभाओं को सही दिशा दी जा सके, उनकी शक्ति को सुनिश्चित किया जा सके तो पुनः सतयुगी परिस्थितियाँ अवतरित कर पाना संभव है। यह सुनियोजन यदि सुनिश्चित हो सके, तो उज्ज्वल संभावनाएँ अगले ही दिनों देखी जा सकेंगी।

# चौथे ऑपरेशन में सूक्ष्म सत्ता का संरक्षण

मैं गुजरात प्रान्त के बलसाड़ जिले के डुंगरी ग्राम में रहता हूँ। सन् १९६२ से १९६५ तक स्थानीय हाई स्कूल में नॉन टीचिंग स्टाफ के रूप में कार्यरत रहा। इसी दौरान मेरा संपर्क पास के गाँव के गायत्री परिजनों से हुआ। उनकी युग निर्माण योजना की बातें मेरे मन-मस्तिष्क को प्रभावित कर गईं।

मैं मिशन के काम में रुचि लेने लगा। कुछ ही दिनों बाद मुझे पूज्य गुरुदेव से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनसे मुलाकात क्या हुई कि मैं उन्हीं का होकर रह गया। तब से लेकर आज तक मुझे गुरुवर के अनेक अनुदान-वरदान मिले हैं।

यह संस्मरण मेरे जीवन के ७१वें वर्ष का है। सन् २००६ में मैं हर समय सिर दर्द से परेशान रहा करता था। यह परेशानी जब बहुत अधिक बढ़ गई, तो मैं डॉक्टर से मिला।

डॉक्टर ने कई तरह की मशीनों से मेरे सिर की जाँच की। जाँच के बाद वह इस नतीजे पर पहुँचे कि हृदय की कुछ नाड़ियों के ब्लाक हो जाने के कारण ही हमेशा सिर दर्द बना रहता है। उन्होंने कहा कि बाईपास सर्जरी से ही इस रोग का निदान हो सकता है।

बाईपास सर्जरी की तैयारियाँ शुरू हुईं और २ अगस्त २००६ को नाडियाद, महागुजरात हास्पिटल में ऑपरेशन हुआ। पहले पसलियों को बीचो-बीच काटकर दो हिस्से में बाँट दिया गया, फिर दिल को पसलियों से बाहर निकालकर उसका ऑपरेशन किया गया।

ऑपरेशन के बाद कटी हुई पसलियों को तार से जोड़कर पहले जैसा बनाया गया-इसे डॉक्टरों की भाषा में 'कॉटन बाडी' बोलते हैं। लेकिन मेरे शरीर ने इस कॉटन बाडी को स्वीकार नहीं किया। फलतः शरीर के अन्दर से रिस-रिसकर मवाद बाहर आने लगा।

डॉक्टर को दिखाने पर उन्होंने कहा कि कॉटन बाडी के कारण प्रायः ऐसा होता है। चिन्ता की कोई बात नहीं है। कुछ दिनों में अपने-आप ठीक हो जाएगा।

लेकिन छः महीने बीत जाने के बाद भी मवाद निकलना बन्द नहीं हुआ, तो डॉक्टर ने कहा कि पसली की हड्डियों को तार से बाँधने के कारण इन्फेक्शन हो गया है। अब दुबारा ऑपरेशन करके तार बाहर निकालना पड़ेगा।

२ अप्रैल २००७ को दूसरी बार ऑपरेशन हुआ। फिर से छाती खोलकर तार निकाला गया। लेकिन इतने दिनों में इन्फेक्शन हड्डियों को प्रभावित कर चुका था, इसलिए मवाद का निकलना बंद नहीं हुआ।

थक हार कर अहमदाबाद के बड़े अस्पताल में पहुँचा। वहाँ के डॉक्टरों ने २० जून को तीसरा ऑपरेशन किया। वह भी असफल रहा।

सीनियर डॉक्टर ने मेरे बेटे को बताया कि मेरी मौत अब किसी भी क्षण हो सकती है, फिर भी अन्तिम प्रयास के रूप में एक और ऑपरेशन किया जाना चाहिए।

निराश होकर मैंने सीनियर डॉक्टर से कहा कि आप लोग अपना काम कीजिए, मैं अपना काम करूँगा। एक जूनियर डॉक्टर ने जिज्ञासावश पूछा कि आप क्या करेंगे। मैंने कहा-मैं गुरुदेव का स्मरण करूँगा और उन्होंने जो मंत्र दिया है, उसके जप की संख्या बढ़ा दूँगा। अब मैं अध्यात्म की ताकत को आजमाऊँगा।

......और मैंने वैसा ही किया। सुबह से शाम तक गायत्री मंत्र का जप और रात में सोते समय गुरुदेव का ध्यान।

इसी प्रकार तीन सप्ताह और बीत गए। चौथे सप्ताह में चौथे ऑपरेशन की तारीख तय हुई-१८ जुलाई। सारी तैयारियाँ हो चुकी थीं। मुझे ऑपरेशन थियेटर ले जाया गया।

ऑपरेशन शुरू होने से पहले मैंने डॉक्टरों से अनुरोध किया कि वे मुझे पाँच मिनट प्रार्थना करने दें। मैंने गुरुदेव का फोटो अपने साथ रखा था। फोटो सामने रखकर उन्हें प्रणाम किया और आँखें बन्द कर मन ही मन उनसे प्रार्थना करने लगा-परम पूज्य गुरुदेव! ये डॉक्टर पता नहीं क्या-कैसे करेंगे। आप सूक्ष्म रूप से आकर इनका मार्गदर्शन कीजिए, जिससे ये सही तरीके से ऑपरेशन कर सकें और इनके सत्प्रयास से मेरी जीवन-रक्षा हो सके फिर मैं जल्दी से स्वस्थ होकर वापस घर पहुँच सकूँ।

तीन-चार दिन पहले श्रद्धेय डॉक्टर साहब (डॉ. प्रणव पण्ड्या) और आदरणीया जीजी (शैलबाला पण्ड्या) को चार पेज का पत्र लिखा था। उनका जवाब आया-"आपके उत्तम स्वास्थ्य के लिए हम सब प्रार्थना कर रहे हैं। आप चिन्ता मत करिए। पूज्य गुरुदेव के आशीर्वाद से सब कुछ ठीक हो जाएगा।"

ऑपरेशन ५ घंटे तक चला। चौथी बार हर्ट का ऑपरेशन हो रहा था, इसलिए डॉक्टर्स ने प्लास्टिक सर्जरी की भी पूरी तैयारी कर रखी थी। टीम में प्लास्टिक सर्जरी के दो विशेषज्ञ डॉक्टर भी तैयार खड़े थे। लेकिन गुरुदेव की कृपा से प्लास्टिक सर्जरी करने की नौबत ही नहीं आई।

अगली सुबह जब बड़े डॉक्टर्स मुझे देखने आए, तो उन्होंने कहा-आपका ऑपरेशन बहुत अच्छा हुआ। सच तो यह है कि केस हिस्ट्री और आपकी हालत देखकर मैं अन्दर से घबराया हुआ था, लेकिन लगता है कि ऑपरेशन से पूर्व आपके द्वारा की गई प्रार्थना आपके इष्टदेव ने सुन ली। ऑपरेशन के दौरान मुझे लगा कि कोई बाहरी शक्ति कदम-कदम पर मेरा मार्ग-दर्शन कर रही है, हिम्मत बढ़ा रही है।

इतने बड़े ऑपरेशन के बाद इतनी तेजी से रिकवरी हुई कि १५ दिनों के बाद ही मुझे हॉस्पिटल से छुट्टी मिल गई और मैं पूरी तरह से स्वस्थ होकर खुशी-खुशी घर लौट आया। तब से लेकर आज तक गुरुकृपा से मेरा स्वास्थ्य पास-पड़ोस के लोगों के लिए एक उदाहरण बना हुआ है।

**प्रस्तुतिः दौलत भाई जीवन जी देसाई,**
**बलसाड़ ( गुजरात )**

# मनुष्य में हुआ देवत्व का उदय

भरतपुर, राजस्थान के भैंसापिचूना गाँव के निवासी हैं श्री रामजी लाल वर्मा। बहुत ही साधारण परिवार में पैदा हुए। श्री वर्मा जीवन के संघर्षों का सामना करते हुए पढ़-लिखकर राज्य सरकार के चिकित्सा विभाग में प्रशासनिक अधिकारी के पद पर पहुँचे। धीरे-धीरे परिवार की श्रीसम्पन्नता बढ़ने लगी।

वर्मा जी के एक छोटे भाई हैं, जो गाँव में किसानी करते हैं। छोटी सी खेती पर निर्भर रहने के कारण उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय थी। इसीलिए बड़े भाई ने छोटे भाई के लड़के के नाम पर जयपुर के पास नेशनल हाईवे पर १८,००० स्क्वायर फीट जमीन ४ लाख रुपये में सन् २००० ई. में खरीदी।

करते धरते नौ साल बीत गए। छोटे भाई की अभावग्रस्तता दिनोदिन बढ़ती गई। शान-शौकत से जीने के आदी छोटे भाई ने ब्याज पर कर्ज लेना शुरू किया।

कर्ज का बोझ बहुत अधिक बढ़ जाने पर उन्होंने बड़े भाई द्वारा अपने बेटे के नाम पर खरीदी गई जमीन औने-पौने दाम में बेच दी। सन् २००९ ई. में उस जमीन की कीमत १० लाख हो चुकी थी, जबकि बेची गई सिर्फ ५० हजार रुपये में। इससे कर्ज नहीं चुका, तो ट्रैक्टर भी बेच दिया गया।

वर्मा जी ४-६ महीने पर गाँव जाते थे। नवम्बर २००९ की उस करतूत का पता उन्हें तब चला, जब फरवरी २०१० में घर लौटे। सब कुछ जानकर अवाक् रह गए।

इस घटना से वर्मा जी पूरी तरह से टूट चुके थे। जीवन से निराश होकर उन्होंने आत्महत्या करने की सोची। दोपहर में बाजार जाकर बड़ी मात्रा में सल्फास की गोलियाँ खरीदीं और घर आकर किताबों की आलमारी में छुपा कर रख दीं। फैसला कर चुके थे कि रात में सबके सो जाने के बाद सल्फास की गोलियाँ खाकर हमेशा के लिए चैन की नींद सो जाएँगे।

रात का दूसरा प्रहर शुरू हुआ। सभी सो चुके थे। वर्मा जी सल्फास की गोलियों की तरफ बढ़े। लेकिन आश्चर्य! गोलियाँ आलमारी से गायब थीं। उन्होंने किताबों को हटा-हटाकर खोजा। गोलियाँ नहीं मिलीं।

इस खोज-बीन में पू. गुरुदेव की एक किताब उनके हाथों में आ गई। किताब पर नजर पड़ते ही चेतना जागी। उसे पलटते ही जो पृष्ठ खुला, उस पर लिखा था कि जो व्यक्ति युग निर्माण मिशन से जुड़ा है, उसके घर में कभी आग नहीं लग सकती, उसे कभी साँप नहीं काट सकता और वह कभी जहर खाकर मर नहीं सकता।

पूज्य गुरुदेव की ये पंक्तियाँ पढ़ते-पढ़ते वर्मा जी का चेहरा आँसुओं से तर हो गया था। वे देर रात तक हिचक-हिचक कर रोते रहे। आत्महत्या करने का उनका निर्णय अब बदल चुका था।

अगले कई दिन तनाव में ही बीते। कीमती जमीन का हाथ से जाना, सगे भाई द्वारा किया गया विश्वासघात ये सभी बातें उन्हें दिन-रात बेचैन किए रहती थीं। आखिरकार, एक दिन वे शांतिकुंज के लिए निकल पड़े।

शांतिकुंज पहुँचकर उन्होंने निर्धारित कक्ष में अपने सामान रखे और नहा-धोकर अखण्ड दीप के दर्शन किये, उसके बाद समाधि स्थल पर आये। अभी उन्होंने समाधि की परिक्रमा शुरू ही की थी कि पीछे से आवाज आयी- तू तो बड़ा है बेटा! उसे माफ कर दे। मैंने तुझे यहाँ इसीलिए बुलाया है कि तू पीछे का सब कुछ भूलकर मेरा काम कर। करेगा न, बेटे!

वर्मा जी ने पलट कर देखा-सामने पूज्य गुरुदेव सफेद धोती-कुर्त्ता पहने मुस्कुरा रहे थे। वे लपक कर गुरुदेव की तरफ बढ़े। अभी दो कदम ही आगे बढ़े थे कि पूज्य गुरुदेव अन्तर्ध्यान हो गए।

वर्मा जी आनन्दातिरेक में डूबे समाधि के आगे बैठ गए। आँखों से अश्रुधारा बही जा रही थी। मन का सारा मैल धुलता चला गया।

जिस छोटे भाई को वे दिन-रात कोसते रहते थे, उसी के कल्याण की प्रार्थना उन्होंने समाधि स्थल पर की।

यही तो है विचार परिवर्तन, इसे ही तो कहते हैं मनुष्य में देवत्व का उदय, ऐसे ही तो होता है धरती पर स्वर्ग का अवतरण।

**प्रस्तुतिः मनीष,**
**पूर्वजोन, शांतिकुंज, हरिद्वार, ( उत्तराखण्ड )**

## प्रार्थना में भरें प्राण

प्रार्थना का अर्थ याचना नहीं है। वह तो आत्मा की पुकार है। जब दृढ़ विश्वास के साथ आकुल हृदय से मनुष्य ईश्वर को पुकारता है, तो वही भावना प्रार्थना बन जाती है। ईश्वर से हृदय का मिलन, उसका एकीकरण ही प्रार्थना का उद्देश्य होना चाहिए। उसकी सफलता का उपाय बताते हुए रामकृष्ण परमहंस ने कहा है- "जब मन और वाणी एक होकर वस्तु मांगते हैं, तो उस प्रार्थना का उत्तर अवश्य ही मिलता है।" केवल वाणी द्वारा प्रार्थना पर्याप्त नहीं। उसमें अन्तःकरण की तल्लीनता भी आवश्यक है। ऐसी प्रार्थनाओं में ही सजीवता होती है, चुम्बकत्व होता है। वह अपना संदेश परमात्मा तक पहुँचाने में समर्थ होती है। सदुद्देश्यों के लिए की गई हृदय की, आत्मा की पुकार अनसुनी नहीं जाती। ईश्वर उसे अवश्य पूरा करता है।

# अनजान रास्ते में मिले आत्मीय बंधु

घटना उस समय की है जब मैं पटन्डा ब्लॉक के देहात बोडाम में को-ऑपरेटिव एक्सटेन्शन अफसर था। मैं टाटानगर से रोज आना-जाना करता था। उस दिन शाम चार बजे बोडाम से अपनी राजदूत मोटर साईकिल से टाटा जा रहा था।

रास्ते में पहाड़ी है, सड़क काफी टूटी हुई थी। सड़क की मरम्मत का कार्य चल रहा था। मैं किसी तरह से रोड क्रास कर रहा था फिर भी करीब आधा फर्लांग रह गया जिसे मैं पार नहीं कर सका। मैंने देखा कि दूर से सामने साईड से एक जीप भी आ रही थी। उसे भी वही अड़चन थी। रास्ता क्रास करने के प्रयास में वे लोग भी थे। कुछ देर बाद मैंने देखा कि उसने अपनी जीप वहीं से वापस मोड़ ली। मैं सोच में पड़ गया कि क्या करूँ? जाना तो था ही। साहस नहीं हो रहा था कि आगे रास्ता मिल पाएगा कि नहीं। मैं घर कैसे पहुँचूंगा। चिन्ता की रेखाएँ मन मस्तिष्क पर छा गईं। अत: मैंने भी मन ही मन गुरुदेव को याद करते हुए आपनी बाइक खेतों के रास्ते की ओर बढ़ा दी।

खेतों की मेढ़ों के ऊपर चल रहा था। मुझे बहुत घबराहट हो रही थी। दिमाग कुछ सोचने करने की स्थिति में नहीं था। उसी हडबड़ाहट की स्थिति में मेरा दिमाग से कन्ट्रोल हट गया। गेयर लगाना चाहिए था, पर गलती से न्यूट्रल लग गया। नीचे गहरी खाई थी। मैं खाई में गिर गया। उसके पश्चात् मेरे ऊपर मोटर साईकिल गिर गई। उस समय वहाँ पर कोई नहीं था। मैंने पूरी तरह सोच लिया कि आज मेरा अन्त निश्चित है। जब व्यक्ति चारों तरफ से हताश एवं निराश होता है इस समय केवल भगवान को याद करता है। मैं मन ही मन अपने आराध्य गुरुदेव से प्रार्थना करने लगा।

इतने में मेरा ध्यान टूटा। मुझे जीप की आवाज सुनाई दी। मुझे लगा गुरुदेव ने मेरी प्रार्थना सुन ली। जीप में बैठे सारे लोग बाहर निकल आए और मुझे देखा। वे खाई में उतरे और पूछा 'आपको निकाल दें खाई से?' मेरे लिए उनके ये शब्द किसी वरदान से कम न थे। मैंने बिना समय गँवाये झट से हाँ कर दी। वे चार लोग थे, चारों ने मिलकर पहले मोटर साइकिल उठाई और किनारे कर दी फिर मुझे सहारा देकर उठा कर ऊपर लाए। मैं अपने आप उठ गया, लगा कि मुझे अधिक चोट नहीं आई है। मैंने देखा कि मैं ठीक हूँ। मैंने उन लोगों को धन्यवाद दिया।

उन लोगों ने कहा- कोई बात नहीं भाई साहब। हम लोग भी आपकी तरह रास्ता ढूँढ़ते इधर आए हैं। चलिए, आपको घर तक छोड़ देते हैं। मुझे लगा गुरुदेव ने इन लोगों को हमारे लिए ही भेजा है नहीं तो आजकल सहायता माँगने पर लोग अनसुना करके चले जाते हैं, ये लोग बिना कहे-सुने इस वीरान सुनसान स्थान पर मेरी रक्षा करने आ पहुँचे।

मैंने कहा 'मैं खुद ही चला जाऊँगा' तब उन लोगों ने कहा 'पहले गाड़ी स्टार्ट करके तो देखिए'। मुझे भी लगा शायद ये लोग सही कह रहे हैं। मैंने गाड़ी स्टार्ट किया तो गाड़ी स्टार्ट हो गई। उन लोगों ने फिर कहा कि भाई साहब आपको चोट लगी

होगी, जीप में चलिए। मैंने धन्यवाद करते हुए स्वयं चले जाने की बात कही। उसके बावजूद उन लोगों ने कहा- अच्छा आप बाइक से चलिए हम आपके पीछे चलते हैं।

इस प्रकार उन लोगों ने मुझे समीप के एक गाँव बहादुर-डीह तक पहुँचाया। जब उन्होंने देख लिया मैं ठीक तरीके से जा रहा हूँ, वे अपनी दिशा में वापस लौट गए। मैं गुरुसत्ता की असीम कृपा से अन्दर ही अन्दर प्रफुल्लित हो रहा था कि अनजान व्यक्तियों ने परिवार से अधिक आत्मीयता दिखाई एवं खाई से निकालकर एक गाँव तक सकुशल पहुँचाया। आज के समय में यह शायद संभव नहीं। मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि गुरुदेव ने दूत भेजकर मेरे जीवन को संकट से मुक्त कराया। अगर गुरुदेव की कृपा नहीं होती तो मेरी जीवन रक्षा न हो पाती। यह सोचकर आज भी मैं रोमांचित हो उठता हूँ।

**प्रस्तुति : सिद्धेश्वर प्रसाद**
**राँची ( झारखण्ड )**

# वो कौन थी?

बात सन् १९९८ की है। नवम्बर का महीना था। घर में कुछ अशांति के कारण मैं अकेले ही हरिद्वार आ गई थी। अखण्ड परमधाम (सप्तसरोवर) में ठहरी थी। मन बहुत अशान्त था, बच्चों की चिन्ता सता रही थी। एक दिन भोर में नहाकर मैं अकेले ही मंदिरों के दर्शन करने निकल पड़ी।

रास्ते में अचानक एक अधेड़ उम्र की महिला मुझसे बड़ी आत्मीयता से मिली और मेरा हालचाल पूछने लगी। बातों ही बातों में उन्होंने मुझसे कहा कि- यहाँ एक बहुत सुन्दर आश्रम है, शान्तिकुञ्ज। क्या आप वहाँ गईं ? मैंने कहा- नहीं तो। वे बड़े प्यार से मेरा हाथ पकड़कर शान्तिकुञ्ज ले आईं। गेट में प्रविष्ट होकर मैंने पीछे मुड़कर देखा तो वह महिला नज़र नहीं आईं। मैंने अन्दर जाकर जब माताजी और गुरुजी का फोटो देखा, तब स्तब्ध रह गई। क्योंकि उस महिला की शक्ल और आकृति-आकार बहुत कुछ माताजी से मिलता-जुलता था।

इस घटना ने मुझे भावविभोर कर दिया। उसी दिन मैं अपना सामान लेकर शान्तिकुञ्ज आ गई। उसी दिन शुरू हो रहे नौ दिवसीय सत्र में मैंने भाग लिया। पहले से दीक्षित होते हुए भी मैंने पुनः दीक्षा ली। इस प्रकार उस दैवी मार्गदर्शन ने मेरी पूरी जिन्दगी ही बदल दी। तब से लेकर आज तक मैं पूरी तरह गायत्री माता की उपासना और गुरुकार्य में संलग्न हूँ और गुरुदेव की कृपा से बड़ी-से-बड़ी विपत्तियों का बड़ी ही सहजता से निराकरण हो जाता है।

**प्रस्तुति : डॉ. मृणालिनी चटर्जी**
**वर्द्धमान ( प.बंगाल )**

# संजीवनी ने किया नवचेतना का संचार

**( पग-पग पर गुरुदेव ने सिखाया, बचाया और सँवारा )**

गुरु की चमत्कारिक कृपा को जीवन के क्षण-क्षण में अनुभव किया है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि गुरुतत्व की अदृश्य चैतन्यशक्ति सतत मार्गदर्शन, संरक्षण, मंगलमय जीवन, हर प्रगति और हर कर्म के कुशल-क्षेम वहाम्यहम् का वचन निभाती रही है। पूर्वजन्मों के संस्कारवश योग, आसन, उपवास, आदि में अभिरुचि रही। कई एक अतीन्द्रिय अनुभूतियाँ भी हुईं, लेकिन आगे के लिए गुरु की खोज रही। कई आश्रमों, मठों और चर्चित महापुरुषों के सम्पर्क में आया। अनायास 'कादम्बिनी' नामक पत्रिका के तंत्र-विशेषांक में आचार्य श्रीराम शर्माजी के तंत्र महाविज्ञान पर एक लेख में शान्तिकुञ्ज और ब्रह्मवर्चस् शोध-संस्थान के बारे में पढ़ने को मिला।

पत्र-व्यवहार के बाद आने की अनुमति मिली। लेकिन परिवार से जाने की अनुमति नहीं मिली। शान्तिकुञ्ज से फिर वंदनीया माताजी का पत्र पहुँचा- आयुष्यमान आए नहीं, प्रतीक्षा होती रही। यह राष्ट्रीय एकता और अखंडता के लिए यज्ञ के राष्ट्रव्यापी अभियान का वर्ष था! दूसरी बार अकेले ही जमालपुर से हरिद्वार बगैर रिजर्वेशन के रेल यात्रा से पहुँचा। लगा, रास्ते भर कोई दिव्य शक्ति संरक्षित करती रही। पहुँचने पर शान्तिकुञ्ज का वातावरण अपूर्व, मनोरम और अलौकिक प्रतीत हुआ। वंदनीया माताजी से भेंट और परामर्श का अवसर मिला। यहाँ हालांकि प्रवचनों में गायत्री और यज्ञ की महिमा को सुना लेकिन वैज्ञानिक तर्क के स्तर पर सहमत नहीं हो पा रहा था।

क्योंकि ऐसी महिमाएँ पहले भी सुनता रहा था, किसी प्रकार का अनुभव हुआ नहीं था। कई असमंजस के साथ जब ट्रेन से लौट रहा था, सोए रहने की वजह से ट्रेन आगे बढ़ गई थी। टी.टी. किसी न किसी बहाने सबसे कुछ रकम ऐंठ रहा था। उसने मुझसे भी कुछ रकम माँगी। प्रयोग के तौर पर मैंने मन ही मन गायत्री मंत्र जपना आरंभ किया। मेरे हाथ में गुरुदेव की लिखी कोई पुस्तक थी। टीटी ने पुस्तक मेरे हाथ से लेकर पूछा- 'कहाँ से आ रहे हैं ?

मैंने कहा- 'शांतिकुंज हरिद्वार से।' टी. टी. ने कहा- 'हाँ, मेरे एक चाचाजी भी यहाँ से जुड़े हैं, मेरी श्रद्धा है इस संस्था से।' फिर टी. टी. ने मुझे ससम्मान सही ट्रेन में बैठाया। यह तो गायत्री मंत्र की शक्ति की एक झलक मात्र थी। आचार्य जी के उपलब्ध साहित्य को पढ़ते हुए एक जगह भावना ठहर गई। एक पुस्तक में उन्होंने लिखा था कि जिन्हें विश्वास न हो वे गायत्री मंत्र का जप करके तो देखें। गायत्री मंत्र जप कर रहा था। इसी बीच राज्य स्तर के प्रतिष्ठित विद्वान प्राध्यापक के पुत्र जिनसे मेरी मैत्री थी, अपने पिता के ब्रेन हैमरेज के आघात के बाद एक दिन राय-मशवरे के लिये अपने घर ले गए। मेरे जैसे अदना व्यक्ति के साथ नामी-गिरामी बुद्धिजीवी का आध्यात्मिक विषय पर चर्चा-परिचर्चा मेरे लिये अप्रत्याशित रोमांच था।

मैं लगातार सुन और पढ़ रहा था कि बिना गुरुदीक्षा के साधना फलती नहीं, मंत्र में प्राण नहीं आता। लेकिन तार्किक मन गुरुदीक्षा का अर्थ अधीनता समझ रहा था। कई बार नौ दिवसीय सत्र में दीक्षा के अवसर को टालता रहा। एक बार इसी तरह टालते हुए आश्रम की कैंटीन में बैठा। एक गुजराती महिला ने अनायास पूछा- 'आप कितनी बार शान्तिकुञ्ज आ चुके हैं ?' मैंने कहा- 'पाँच बार' महिला- 'आपने दीक्षा ली' - 'नहीं।' महिला- 'इतनी बार शान्तिकुञ्ज आ चुके हैं, दीक्षा नहीं ली ?' यह बात जैसे दिल को छू गई।

एक बार माँ और बहनों को लेकर शान्तिकुञ्ज आया। माँ पहली बार में ही दीक्षित हो गई। दूसरी बार माँ के साथ शान्तिकुञ्ज आया। माँ ने कहा इस बार अवश्य ही दीक्षा ले लो। मैंने दीक्षा तो ली लेकिन अभी भी बेशर्त समर्पण का भाव था नहीं। अभी भी बौद्धिक भूख के रूप में विभिन्न साधना, ध्यान मार्ग की पद्धतियों में भटक रहा था। कई बार ऐसा लगा कि स्वयं गुरुदेव ही मुझे ये सब जानने समझने की सुविधा और अवसर उपलब्ध करा रहे हैं। एक बार आँवलखेड़ा के युगसंधि महापुरश्चरण की अर्द्धपूर्णाहुति के अवसर पर टूंडला किसी धार्मिक सत्संग स्थल पर गया। आगरा आते हुए बस से उतरते वक्त बुरी तरह सड़क पर गिर गया।

वहाँ के लोगों ने उठाकर सड़क के किनारे लिटाया। सामने एक बड़े पोस्टर में गुरुदेव व माताजी की आशीषमय मुद्रा में बड़ी तस्वीर थी। इस स्थिति में प्रबल आत्मविश्वास से भरी प्रार्थना के साथ इन्हें संरक्षक के रूप में स्वीकारा। अद्भुत! वहाँ के बड़े परोपकारी लोग चैरिटेबिल अस्पताल ले गए। वहाँ अस्थिरोग विशेषज्ञ, चिकित्सकों ने पूरा ख्याल किया। वहाँ सहायक सज्जनों ने बड़ी सद्भावपूर्ण भावना से कांधे पर बिठाकर ट्रेन आदि के सहारे घर पहुँचाया। गायत्री परिवार के लोगों की सामूहिक प्रार्थना के बलबूते मैं स्वस्थ हुआ। कुछ लोग मिशन के कार्य से बुलाने आते। टाल-मटोल करता रहा। एक दिन आधी रात को माँ को गंभीर रूप से बीमार होने के कारण अस्पताल में भर्ती करना पड़ा। ऑक्सीजन सिलेंडर लगाना पड़ा। मुझे यह गुरुकार्य की अवहेलना का दण्ड लगा।

अस्पताल के पीछे चबूतरे पर बैठकर गुरुदेव से प्रार्थना की कि अब आपकी सेवा में पूरे तौर पर तत्पर रहूँगा। आश्चर्य! माँ ठीक होने लगी। फिर गायत्री मिशन में बेशर्त पूर्णतः सक्रिय हुआ हूँ। हमारी तीनों बहिनें मिशनरी गतिविधि में अपनी गायन-वादन प्रतिभा से सक्रिय हैं। गुरु के अनुदान स्वरूप उन्हें अच्छी शिक्षा, उत्तम वैवाहिक जीवन प्राप्त हुआ।

एक और घटना जिसने चेतना को उन्नत बनाया और शारीरिक चिकित्सा के स्तर पर अद्भुत अनुभव दे गया। हुआ यूँ, पूरबसराय शक्तिपीठ (मुंगेर) से युवा सम्मेलन के कार्यक्रम से लौटते हुए गेट के पास पथरीले रास्ते से फिसल कर इतनी बुरी तरह गिरा कि बाँये पैर के घुटने में जबरदस्त चोट आई। लाख प्रयास के बावजूद न तो पैर मुड़ पा रहा था और न ही मैं उठ पा रहा था।

बेहद लाचार और असहाय विवशता की स्थिति! वहाँ उपस्थित गायत्री परिजन कई सलाह-मशवरे के बाद मुंगेर के पोलो मैदान के पास एक व्यक्ति के पास ले गए। उसने गहरी चोट कहकर पट्टी बाँध दी, तीन सौ रुपये लिये, फिर मुझे घर लाया गया। भ्रम, भय, आशंका और नासमझी में कुछ दर्द निवारक गोलियों और अन्य उपचारों से मन को बहला रहा था। करवट बदल नहीं पाता था।

करीब पन्द्रह या बीस दिनों के बाद जब स्वत: पट्टी खोली तो मेरा घुटना मुड़ता ही नहीं था। फिर एक्स-रे से जो रिपोर्ट आई उसमें घुटने की चक्री दो टुकड़े में टूटी थी। घुटना बुरी तरह फूला हुआ था। डॉक्टर की सलाह मिली कि स्टील की चक्री प्रत्यारोपित की जाए या हड्डी काटी जाए। बेहद खर्च, सहायक लोगों की कमी, स्वयं विस्तर से भी उठ नहीं पाने की असमर्थता। उस वक्त नगर में विराट गायत्री महायज्ञ का आयोजन होने को था। अत्यंत किंकर्तव्यविमूढ़ सी अवस्था में गुरुदेव से आर्त्त स्वर में रुदन से भरी प्रार्थना ने अंधेरे में पग-पग पर रोशनी बनकर चमत्कारिक कृपाएँ बरसायीं।

स्टिक के साथ चलने के प्रयास में किसी झटके में असहनीय दर्द बढ़ गया। उस रात बहुत रो-रोकर गुरुदेव से प्रार्थना की। रात्रि स्वप्न में एक दिव्य पुरुष ने घुटने को हाथ से छूते हुए कहा कि आप मेरे बताए हुए प्राणायामों को थोड़ी लंबी अवधि तक और गहरे प्रार्थना भाव से करें। पहले भी प्राणायाम के अभ्यास से पेट की बीमारी से राहत पाए थी।

एक उदाहरण द्वारा तत्कालीन गायत्री शक्तिपीठ के उपजोन समन्वयक श्री त्रिवेणी प्रसाद अग्रवाल ने अपनी पत्नी के टूटी हड्डी का केस बताया जो प्राकृतिक ढंग से ठीक हो गया था। एक धार्मिक चेनल पर एक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रख्यात अस्थि रोग विशेषज्ञ के १०० लोगों पर प्राणायाम के शिविर द्वारा सकारात्मक परिणाम को देखा। दोनों उदाहरणों से आए विश्वास और बिल्कुल सकारात्मक सोच के साथ प्रात: ३.३० बजे, संध्या ४.०० बजे में पर्याप्त समय तक प्रार्थना पूर्ण भाव से प्राणायम की आध्यात्मिक चिकित्सा का अभ्यास आरंभ किया। प्राणायाम-ध्यान के वक्त मैं मिलने वाले लोगों से कम मिलता था। आश्चर्य! पैर धीरे-धीरे मुड़ने लगा।

ढाई महिने में पैर के सहारे बैठने लगा। एक रात्रि स्वप्न में डॉ० प्रणव पण्ड्या ने निर्दिष्ट किया कि प्राणायाम के साथ-साथ रोम-रोम में, हर कोशिका में सविता संचार और सोऽहम का भाव करें। प्राणायाम करते हुए भाव रहता कि अंतरिक्ष से सर्वश्रेष्ठ ईश्वरीय चिकित्सा, औषधि की आशीषमय चेतना का प्रवाह घुटने में हो रहा है। प्रबल विश्वास के साथ हाथ के स्पर्श से ईश्वरीय चेतना को घुटनों में प्रवाहित होने का ध्यान करता। स्टिक के सहारे अब धीरे-धीरे टहलना आरंभ किया।

गायत्री जयंती के दिन सन् २००७ में रक्त-दान शिविर के कार्यक्रम में किसी तरह गया था। इस बीच आन्तरिक जगत में अद्भुत दिव्य अनुभूति, अलौकिक

स्वप्नों का क्रम बना रहा। स्टिक के सहारे ही यज्ञों की टोलियों में जाने, स्वाध्याय-मंडल चलाने जैसी कई गतिविधियों में सक्रियता बढ़ी। पहले तो स्थिति इतनी बुरी थी कि ह्वील चेयर ओर बैशाखी के सहारे चलने की अवसादजन्य सोच थी। लेकिन प्रार्थनामय प्राणायाम से टूटी हड्डी जुड़ने की अद्भुत चिकित्सा हुई। मिशन के लिय महत्वपूर्ण दायित्व निभाने के अवसर मिले। एकांत की साधना से संचित प्रारब्ध कटे। शांति, दिव्यता की अलौकिक अनुभूति और गुरुदेव के आशीषमय कृपाओं के प्रति अन्तरतम से चिर कृतज्ञ हूँ।

**प्रस्तुति : मनोज मिश्र**
**जमालपुर (बिहार)**

## हम श्रेष्ठ योद्धा की भूमिका निबाहें

जीवन एक सग्राम है, जिसमें हर मोर्चे पर उसी सावधानी से लड़ना होता है, जैसे कि कोई स्वलय साधन संपन्न सेनापति शत्रु की विशाल सेना का मुकाबला करने के लिए तनिक भी प्रमाद किए बिना आत्मरक्षा के लिए पुरूषार्थ करता है। गीता को इसी आध्यात्मिक परिस्थित की भूमिका कहा जा सकता है। पांडव पाँच थे, किन्तु उनका आदर्श ऊँचा था। कौरव सौ थे, किन्तु उनका मनोरथ निकृष्ट था। दोनों एक ही घर में पले और बड़े हुए थे।

इसलिए निकटवर्ती सम्बन्धी भी थे। अर्जुन लड़ाई से बचना चाहता था और अनीति का वर्चस्व सहन कर लेना चाहता था। भगवान ने उसे उद्बोधित किया और कहा - लड़ाई के अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं। असुरता को परास्त किए बिना देवत्व का अस्तित्व भी संभव न होगा। असुरता विजयी होगी, तो सारे संसार का नाश होगा। इसलिए अपना ही नहीं, समस्त संसार के हित का ध्यान रखते हुए असुरता से लड़ना चाहिए। भगवान के आदेश को शिरोधार्य कर अर्जुन लड़ा और विजयी हुआ।

# छूट गयी कमर की बेल्ट और बैसाखी

बचपन से ही मैं बागवानी का शौकीन रहा हूँ। जब मैं नौकरी पेशा में था, तो मैंने अपने छोटे से आवास को तरह-तरह के फूलों और पौधों से सजा रखा था। व्यस्तताओं से भरे जीवन में भी मैं उन पौधों की देखभाल के लिए समय निकाल ही लेता था।

एक दिन मैं पौधों में पानी डाल रहा था। छुट्टी का दिन था, सो मैं सोच रहा था कि लगे हाथों बेतरतीबी से बढ़ आए पौधों की कटाई-छँटाई भी कर डालूँ। सभी तरह के औजार पास ही पड़े थे। मैंने कैंची उठाकर छँटाई शुरू कर दी। तभी मेरी नजर उस बेल पर गयी जिसे रस्सियों के सहारे छत पर पहुँचाया गया था।

एस्बेस्टस की छत पर इस लता ने अपना घना आवरण बिछा रखा था, जिससे गर्मियों में काफी ठण्डक बनी रहती थी, लेकिन धीरे-धीरे यह दीवार के पास ही इतना घना होने लगा कि आसपास की सुन्दरता में बाधक बन गया था। इसकी करीने से छँटाई करने के लिए स्टूल के सहारे दीवार पर चढ़ गया। दीवार मात्र दस इंच चौड़ी थी। सावधानी से दोनों पैर जमाकर मैंने छँटाई शुरू की। रस्सी के चारों ओर बेतरतीबी से फैली हुई लताओं को काटता हुआ अपना हाथ ऊपर की ओर उठाने जा रहा था। मेरी कोशिश थी कि छत के पास तक की छँटाई अच्छी तरह से हो जाए। छत की ऊँचाई को छूने की कोशिश में मेरा संतुलन बिगड़ा और मैं उस पार सड़क पर जा गिरा। गिरते ही पीड़ा से चीख उठा, जिससे आसपास के लोगों की भीड़ जमा हो गई। अन्दर से पत्नी दौड़ी आई और मुझे इस तरह पड़ा देख जोर-जोर से रोने लगी और उस बेल को कोसने लगी। लोगों ने मुझे उठाकर बरामदे में पड़े बिछावन पर लिटा दिया। कई बहिनों ने पंखा झलना शुरू किया। दो भाई डॉक्टर बुलाने के लिए दौड़ पड़े। डॉक्टर आए और दवा, इंजेक्शन आदि देकर, मरहम पट्टी कर चले गए। पड़ोस से आए लोग भी एक-एक कर जा चुके थे। मैं पीड़ा से कराहता हुआ गुरुदेव को स्मरण कर रहा था। बीच-बीच में पत्नी के रोने-बिलखने की आवाज से ध्यान बँट जाता।

थोड़ी देर बाद फोन से सूचना पाकर मेरे सम्बन्धी डॉ. विधुशेखर पाण्डेय जी आ पहुँचे। उन्होंने मुझे अपने निजी नर्सिंग होम, आरोग्य निकेतन ले जाने का निर्णय लिया। मेरे लड़के प्रेमांकुर और डॉ. साहब के बीच मोटर साइकिल पर बिठाकर मुझे भगवानपुर ले जाया गया। वहाँ एक्स-रे करने पर पता चला कि दाएँ पैर की एड़ी बुरी तरह से क्षतिग्रस्त हो गई है। दूसरे दिन अस्थि विशेषज्ञ डॉ. ए.के. सिंह को भी दिखाया गया। पैर में सूजन हो गई थी, इसलिए तत्काल प्लास्टर न कर कच्चा प्लास्टर चढ़ाया गया। एक सप्ताह बाद पक्का प्लास्टर हुआ। चिकित्सक के निर्देशानुसार डेढ़ माह तक पूरी तरह बिस्तर पर रहना था। इतनी लम्बी अवधि तक निकम्मों की तरह पड़े रहना होगा, यह सोच-सोचकर जीवन भार-सा लगने लगा। शौचादि क्रिया भी बिस्तर पर लेटे-लेटे ही करनी थी। सेवा सुश्रुषा के लिए पत्नी भी अस्पताल चली आईं।

निरंतर डेढ़ माह तक लेटे रहने से रीढ़ एवं कमर के नीचे बैक सोर हो गया था। निर्धारित समय पर प्लास्टर कटा और मैं बैसाखी-इंकलेट, कमर के ऊपर लगने वाले लोहे के प्लेट युक्त विशेष बेल्ट के सहारे चलनेफिरने लगा। फिर भी मन में इतना संतोष तो था ही कि गुरुवर की अनुकम्पा से मैं अपाहिज होने से बच गया। तीन दिन बाद घर आ गया। एक दिन गुरुजी ने स्वप्न में दर्शन दिए और मुझे शान्तिकुञ्ज जाने को कहा। उसी अवस्था में मैंने जाने की तैयारियाँ शुरू कर दीं।

२ मई २००७ को मैं शान्तिकुंज आ गया। यहाँ आते ही मुझे ऐसा लगा जैसे मेरे शरीर में कोई पीड़ा, कोई क्लेश है ही नहीं। यहाँ आने के एक माह बाद एकदिन शान्तिकुञ्ज के वरिष्ठ कार्यकर्त्ता आदरणीय अमल कुमार दत्ता, एम.एस. ने मेरी शारीरिक परेशानियों के सम्बन्ध में विस्तार से जानकारी ली। एक्स-रे करवाया और रिपोर्ट देखकर बोले-अब बगैर छड़ी बेल्ट, इन्कलेट के चलने की आदत डालें। मुझे असमंजस में देखकर उन्होंने आश्वस्त किया, चिंता न करें-गुरुदेव सब अच्छा ही करेंगे।

मैंने उसी समय आँखें बन्द करके पूज्य गुरुदेव का स्मरण किया। बेल्ट, इन्क्लेट उतारे, छड़ी को बगल में दबाया और पूज्य गुरुदेव की समाधि की ओर बढ़ चला। तब से लेकर आज तक मिशन के काम से तीसरी मंजिल पर बने ढेर सारे विभागों के कार्यालयों तक जाने-आने के लिए हर रोज सैकड़ों सीढ़ियाँ आराम से चढ़ता उतरता हूँ। सब पूज्यवर की ही कृपा है।

**प्रस्तुति :-डी.एन. त्रिपाठी**
**पूर्व जोन, शान्तिकुञ्ज, हरिद्वार ( उत्तराखण्ड )**

## आत्मिक प्रगति का सोपानः साधना

भौतिक प्रगति के लिए भौतिक प्रयास करने पड़ते हैं और आत्मिक प्रगति के लिए चेतना का स्तर उठाने और प्रखरता को आगे बढ़ाने की आवश्यकता पड़ती है। पेट में भूख लगती है, तो शरीर में समर्थता बढ़ाने का, कामुकता की तरंगें उठती हैं तो साथी ढूंढने, परिवार बसाने का मानसिक ताना-बाना बुना जाने लगता है। प्राणि-जगत् का अस्तित्व और पराक्रम, इन्हीं पेट-प्रजनन के दो गति-चक्रों के सहारे सरलतापूर्वक लुढ़कता रहता है। आत्मिक प्रगति का प्रसंग दूसरा है। चौरासी लाख योनियों के संग्रहीत स्वभाव-संस्कार मनुष्य जीवन के उपयुक्त नहीं रहते, ओछे पड़ जाते हैं। आन्तरिक अभ्युत्थान के इसी पराक्रम को साधना कहते हैं।

# सब कुछ करता तू ही

एक बार मेरी धर्मपत्नी बहुत गम्भीर रूप से बीमार हो गईं। उन्हें दमा की बीमारी थी। हालत इतनी खराब थी कि पानी में हाथ डालना भी मुश्किल था। कोई भी काम अपने हाथ से नहीं कर पातीं। केवल हम दो व्यक्तियों के परिवार में घर के काम-काज के लिए दो लड़कियों को रखना पड़ा। अपनी दोनों बेटियों का विवाह हो चुका था। वे अपने परिवार की जिम्मेदारियों को छोड़कर हमारे पास आकर माँ की सेवा नहीं कर सकतीं थी। इधर यह बीमारी थी जो छूटती ही नहीं थी। पाँच साल तक इलाज चलता रहा। मगर हालत सुधरने के बजाय बिगड़ती ही चली गई।

मैं स्वयं एकहोमियोपैथ चिकित्सक हूँ। होमियोपैथिक,एलोपैथी,आयुर्वेद सब तरह का इलाज कराकर थक चुका था। हर रात किसी न किसी डॉक्टर को बुलाकर लाना पड़ता था। हुगली जिले में ऐसे कोई प्रतिष्ठित डॉक्टर नहीं बचे थे जिन्हें न दिखाया गया हो, लेकिन यह सिलसिला कभी समाप्त होता नहीं दिखता था। रात-रात भर पत्नी के बिस्तर के पास बैठकर बीतता। कभी रोते-रोते गुरुदेव से प्रार्थना करता- हे गुरुदेव! उनकी यह असह्य पीड़ा हमसे नहीं सही जाती। या तो ठीक ही कर दीजिए या जीवन ही समाप्त कर दीजिए।

दिन पर दिन बीतते गए। हमारे आँसुओं का कोई अंत नहीं दिखता था। एक दिन आधी रात को इसी उधेड़बुन में बैठा था कि किस नए डॉक्टर को दिखाया जाए। दिखाने से कोई लाभ है भी या नहीं। अचानक किसी की आवाज आई- इतनी चिन्ता क्यों करते हो? एक अंतिम प्रयास खुद भी तो करके देखो। मैंने चौंककर इधर-उधर देखा। यह अन्तरात्मा की आवाज थी। जैसे गुरुदेव ही इलाज की नई दिशा की ओर इंगित कर रहे हों। मैंने तत्काल निर्णय कर लिया, अब जो कुछ हो उन्हीं के निर्देश पर इलाज करूँगा। किसी डॉक्टर को नहीं बुलाऊँगा।

यह निर्णय लेते ही मन में उत्साह की लहर आई। मन की सारी दुश्चिंताएँ मिट गईं। भोर होते-होते मैंने धर्मपत्नी को भी यह बात बता दी कि अब मेरे घर कोई डॉक्टर नहीं आएँगे। मैं ही इलाज करूँगा। उन्होंने भी सहमति जताई। कहा-'मर तो जाऊँगी ही, यह मरण अगर आपके ही हाथों लिखा हो, तो कौन टाल सकता है? पत्नी की इन निराशा भरी बातों से भी मेरा उत्साह कम नहीं हुआ। बल्कि अन्दर से जोरदार कोई प्रेरणा उठी और मैं होमियोपैथी की किताब लेकर बैठ गया।

गहन अध्ययन कर सारे लक्षणों को मिलाकर सटीक दवा खोजने का प्रयास करता। इसी तरह एक के बाद एक कई दवाएँ चलाईं; लेकिन स्थिति दिन-पर-दिन बुरी होती गई। बेटियाँ मुझ पर लांछन लगाने लगीं। आस-पड़ोस के लोग भी कंजूस कहकर ताने देने लगे। बेटियों ने तो यहाँ तक कह दिया कि यदि हमारी माँ को कुछ हो गया, तो हम आपको जेल भी पहुँचाने में नहीं चूकेंगी। फिर भी इस काम में गुरुदेव का निर्देश समझकर मैं जुटा रहा।

गुरुदेव को स्मरण कर एक पर एक दवा मिला-मिलाकर प्रयोग परीक्षण करता रहा। कुछ लाभ न होता देख जब मन विचलित हो उठा, हिम्मत जवाब देने लगी, तब फिर एक बार वही आवाज सुनाई पड़ी-चिन्ता मत कर, कल तू जरूर सही दवा खोज निकालेगा। मैं चारों ओर से ध्यान हटाकर किताब लेकर बैठा। सारे लक्षणों को सूचीबद्ध किया। पहले दी गई दवाओं के परिणामों को देखते हुए दुबारा अच्छी तरह अध्ययन कर दवा चुनी। गुरुदेव का स्मरण कर दवा देते समय मन ही मन कहा- गुरुदेव! यह दवा मैं नहीं दे रहा। यह आपकी दी हुई दवा है। अब आप जानिए और आपका काम जाने।

गुरुदेव की बात सच हुई। दवा सही निकली। इसी दवा से धीरे-धीरे मेरी पत्नी स्वस्थ होने लगी। हमारे घर में फिर से खुशियाँ लौट आईं।

इसके बाद से पूज्य गुरुदेव को स्मरण कर जब-जब रोगियों को दवा दी है, रोगी को अवश्य ही आराम पहुँचा है। गुरुदेव की बड़ी कृपा रही है मुझ पर।

**प्रस्तुति :-डॉ.टी० के० घोष**
**हुगली ( पं.बंगाल )**

---

# हमारा काम

दो प्रश्न आपके मस्तिष्क में उठते होंगे। एक प्रश्न यह कि आपको बनना क्या है और बनाना क्या है? दूसरा, करना क्या है और कराना क्या है? इन दोनों प्रश्नों के उत्तर में एक ही जवाब है कि हमको अपनी दृष्टि का परिशोधन करना चाहिए। आप एक ही बात ध्यान में रखिए कि हमारी दृष्टि परिष्कृत होनी चाहिए। हमारा चिन्तन उच्चस्तरीय होना चाहिए। हमारे मनों में सिद्धांतों के लिए, आदर्शों के लिए ऊँची निष्ठा होनी चाहिए। इसलिए दृष्टि को ऊँचा करना, चिन्तन को ऊँचा करना, आस्थाओं-निष्ठाओं को ऊँचा करना, हमारा पहला काम है। असल में आदमी की शक्ति इसी में है। अध्यात्म और कोई चीज नहीं है, मात्र दृष्टि के परिष्कार का नाम है।

यही हमारा मुख्य काम है और आखिरी काम भी है। इसी के लिए हम तरह-तरह के क्रिया-कृत्य करते हैं। उसमें जप भी शामिल है, भजन भी शामिल है, अनुष्ठान भी शामिल है। ये जप, भजन, अनुष्ठान एक कृत्य हैं। अगर आपने इनको उच्चस्तरीय दृष्टिकोण बनाने के लिए किया है, तो मैं आपको बधाई देता हूँ और ये कहता हूँ कि भगवान करे ऐसा भाव हरेक के मन में हो।

- पं. श्रीराम शर्मा 'आचार्य'

# ...और मुझे भगवान के दर्शन हो गये

जब मैं घुटनों के बल चला करती थी, तभी से घर में होने वाले पूजन, हवन तथा मंत्रोच्चार के प्रति मेरे मन में एक जिज्ञासा का भाव था। कुछ और बड़ी होने पर मेरी माँ ने मुझे गायत्री मंत्र का अभ्यास करा दिया था और मैं भी घर के अन्य सदस्यों के साथ हवन में शामिल होने लग गई थी।

घर के लोग प्राय: शान्तिकुञ्ज तथा पूज्य गुरुदेव के बारे में बातें किया करते थे। मैं जब भी माँ से पूछती कि पूज्य गुरुदेव कौन हैं, तो उनकी तस्वीर की ओर इशारा करके वह हमेशा यही कहती- उनके बारे में मैं तुम्हें क्या बताऊँ? वे कोई आदमी थोड़े ही हैं। वे तो भगवान हैं, भगवान!

माँ की ऐसी बातें सुन-सुन कर मेरा मन पूज्य गुरुदेव से मिलने के लिए बेचैन होने लगा। मैं बार-बार शान्तिकुञ्ज आने की जिद करने लगी।

यह उन दिनों की बात है जब मैं चौथी कक्षा में पढ़ती थी। बहुत जिद करने पर भी घर से अनुमति नहीं मिली और लाख चाहने पर भी मैं गुरुदेव के दर्शन नहीं कर सकी। आठवीं कक्षा में आते-आते मैंने पहली दूसरी कक्षा के बच्चों को ट्यूशन पढ़ाना शुरू कर दिया था।

सन् १९९०ई. में अचानक एक दिन पता चला कि बोकारो शक्तिपीठ से कुछ परिजन शान्तिकुञ्ज जा रहे हैं। गुरुदेव से मिलने की मेरी उत्कंठा अब तक चरम पर पहुँच चुकी थी।

मैंने तत्काल शान्तिकुञ्ज जाने का मन बना लिया और वहाँ जाने वाले एक परिजन से मिलकर उनके साथ चलने का कार्यक्रम तय कर लिया। इस बात की मैंने घर में किसी को भनक तक नहीं लगने दी, डर था कि वे सभी फिर मना कर देंगे।

परिजनों की टोली के साथ मैं शान्तिकुञ्ज पहुँची। अगले दिन सुबह से ही मैं यह सोचकर खुशी से पागल हुई जा रही थी कि आज गुरुदेव के दर्शन होंगे। ऊपर के कक्ष में जाकर पहले मैंने माताजी को प्रणाम किया, तो उन्होंने सिर सहलाते हुए आशीर्वाद दिया। इसके बाद गुरुदेव को प्रणाम करने पर उन्होंने मुझे आधा पुष्प देकर आधा स्वयं रख लिया।

आधा फूल देने का अर्थ मेरी समझ में नहीं आया। वापसी में सीढ़ियों से उतरती हुई मैं इसी बात पर सोचती जा रही थी कि एक अद्भुत् अनुभूति हुई। ऐसा लगा कि मेरे कानों में कोई कुछ कह रहा है।

मैंने आवाज पहचानने की कोशिश की तो बड़ा आश्चर्य हुआ, वह गुरुदेव की ही आवाज थी। वे मुझसे कह रहे थे-तुम्हें मेरे बहुत सारे काम करने हैं। तुम जब किसी काम के लिए आगे बढ़ोगी तो मैं कदम-कदम पर तुम्हारा काम आसान करता चलूँगा।

पूज्य गुरुदेव द्वारा आधा फूल देकर आधा अपने पास रख लेने का अर्थ अब कुछ-कुछ मेरी समझ में आने लगा था।

अगले ही दिन वसंत पंचमी पर मैंने गुरुदीक्षा ले ली। जब विदाई का समय आया तो वंदनीया माता जी से मिलने गई। सोचकर तो चली थी कि मैं उनसे बहुत कुछ कहूँगी लेकिन कुछ भी नहीं कह सकी। एक ही साथ मन में इतनी बातें आ रही थीं कि कुछ कहते नहीं बना।

इस ऊहापोह में आँखों से आँसू बहने लगे। मेरी सबसे बड़ी चिन्ता तो यह थी कि मैं किसी को बताये बिना घर से चली आई थी। साथ की महिलाओं ने भी मुझे पूरी तरह से डरा रखा था। मन कह रहा था कि अगर माताजी आशीर्वाद दे दें, तो घर पहुँचने पर मुझे कोई कुछ नहीं कहेगा।

माताजी ने मेरे मन का भाव बिना कुछ कहे समझ लिया। उन्होंने मेरी पीठ थपथपाते हुए कहा–बेटा चिन्ता मत कर, सब कुछ ठीक हो जाएगा, घर के लोग तुम्हें कुछ भी नहीं कहेंगे।

.....और आश्चर्य! घर पहुँचते ही डाँट-फटकार और पिटाई की आशंकाएँ निर्मूल सिद्ध हुईं। घर में सबको पहले ही पता चल चुका था कि मैं शान्तिकुञ्ज गई हूँ। माँ-पिताजी ने एक शब्द भी नहीं कहा। उल्टे सभी इस बात को लेकर खुश हो रहे थे कि मैं वन्दनीया माताजी और पूज्य गुरुदेव का आशीर्वाद लेकर लौटी हूँ।

उसी वर्ष जब २ जून को गुरुदेव ने शरीर छोड़ दिया तो हम सभी शोकाकुल हो गए। मेरे माता-पिता दु:खी मन से आपस में बातें कर रहे थे।

माँ कह रही थी–हम दोनों से अच्छी किस्मत लेकर तो हमारी अञ्जू ही आई है। हम कई सालों तक सोचते ही रह गए और यह लड़की अकेली जाकर भगवान के दर्शन कर आई।

पिताजी ने कहा–तुम सच कह रही हो। अञ्जू अपनी मर्जी से थोड़े ही गई थी। उसे तो पूज्य गुरुदेव ने शान्तिकुञ्ज बुलाकर स्वयं दर्शन दिए थे। पर, हमारा ऐसा भाग्य कहाँ!

**प्रस्तुति :- अंजू उपाध्याय**
**डी. एस. पी. ( अरुणांचल प्रदेश )**

---

# सेवा धर्म के प्रत्यक्ष लाभ

*सेवाधर्म अपनाने में जितना दूसरों का भला होता है, उससे अधिक लाभ अपने को मिलता है। व्यक्तित्व की गरिमा, भावना की कोमलता, सहानुभूति तो प्रत्यक्ष लाभ हैं, जो मनुष्य को ऊँचा उठाते, आगे बढ़ाते हैं। इससे भी बड़ा लाभ है आन्तरिक संतोष और उल्लास, जिसकी तुलना जीवन की अन्य किसी भी उपलब्धि से नहीं की जा सकती।*

# तस्वीर ने जगायी अन्तश्चेतना

सन् १९८३ में हम दोनों पति-पत्नी शान्तिकुञ्ज आए। होली का समय था। हमें वहाँ बहुत अच्छा लगा। लौटने से पहले गुरुदेव-माताजी को प्रणाम करने गए, तब गुरुदेव ने कहा था "बेटा यहीं आ जाओ"। हम उस समय नए-नए ही मिशन से जुड़े थे। हमारा जीवनक्रम भी बिल्कुल दूसरी तरह का था। शान्तिकुञ्ज का त्याग-तितिक्षा भरा जीचन हमने अपने लिए कभी सोचा नहीं था, इसलिए हमने इस बात को अधिक गम्भीरता से नहीं लिया। सोचा सन्त व्यक्ति हैं, आत्मीयतावश बोले होंगे। जब घर आई तो यह बात ध्यान से उतर चुकी थी। हमारी दिनचर्या फिर अपने ही ढर्रे पर चलने लगी, मगर सद्गुरु ने जिसे पकड़ लिया वह भला कैसे भटक सकता है! दो साल बीतते बीतते हमें अपना सब कुछ समेटकर शान्तिकुञ्ज आने के लिए बाध्य होना पड़ा।

सन् १९८४ में अखण्ड-ज्योति में एक लेख निकला था। उस लेख को पढ़ने के बाद पता नहीं क्या हुआ, मैं हमेशा गुरुदेव और मिशन के बारे में ही सोचती रहती। दिन में काम के बीच में तो वे मन पर छाए ही रहते। रात को सो भी नहीं पाती। उठकर बैठ जाती तो अनायास ही गुरुदेव की तस्वीर पर नजर पड़ती, जो हमारे शयन कक्ष में लगी थी। मुझे एकबारगी अनुभव होता कि वह तस्वीर मुझसे कुछ कह रही है। समझने का प्रयास करती लेकिन कुछ समझ नहीं पाती। मैं हमेशा उस तस्वीर को ध्यान से देखा करती। सोचती। आखिर क्या बात रही होगी इसमें। इससे पहले भी बहुत अच्छी-अच्छी तस्वीरें-पोर्ट्रेट देखी हैं मैंने, मगर ऐसा कभी नहीं हुआ है। धीरे-धीरे यह सिलसिला बढ़ता गया,अब रात का अधिकांश समय जागते ही बीतता। कभी-कभी उठकर देखती ये (पति) भी जागे हुए हैं, उसी तस्वीर को निहार रहे हैं। एक बार मैंने उनसे पूछा-आपको भी ऐसा ही लगता है क्या? उन्होंने कहा- हाँ यह चित्र कुछ कहता है, लेकिन मैं समझ नहीं पाता।

तीन महीने तक यही क्रम जारी रहा, तब एक दिन इन्होंने कहा- गुरुदेव से ही पूछा जाए क्या कहना चाहते हैं वे, इतना कहना था कि हम दोनों को याद आई, गुरुदेव की वह बात-बेटा यहीं आ जाओ। हाँ, यही तो कहा था उन्होंने। दोनों की नजरें मिलीं और स्वीकृति बन गई। मैंने निश्चयात्मक स्वर में कहा चलो वहीं चलते हैं, ऐसा जीना भी क्या जीना, रात को सो भी नहीं पाते। घर का सारा सामान हमने लोगों को बाँट दिया। जितना साथ ले सकते थे, बिस्तर इत्यादि बाँध लिए और शान्तिकुञ्ज आ गए। बाद में किसी कारणवश जब घर जाना हुआ तब फिर उस तस्वीर को देखा, लेकिन तब वह साधारण तस्वीरों जैसी ही दीखी। दरअसल वह तस्वीर हमें बार-बार याद दिलाने का प्रयास करती, गुरुजी के आदेश को। आज मैं विश्वास करती हूँ कि वह बेजान तस्वीर नहीं बोलती थी, उसमें गुरुजी स्वयं बोलते थे। उनकी आवाज को तब मैं सुनने में असमर्थ थी।

**प्रस्तुति :-मणि दास, शान्तिकुंज ( उत्तराखण्ड )**

# सिद्ध हुआ माँ का आशीर्वाद

वंदनीया माताजी के आशीर्वाद से ३ दिसम्बर १९९२ को मेरे छोटे भाई बैजनाथ की शादी कलकत्ता आवास पर निश्चित हुई। शादी की तैयारी बड़े जोर-शोर से चल रही थी। घर में हँसी-खुशी का माहौल था। विवाह के १८ दिन पहले १५ नवम्बर ९२ को सबसे छोटे भाई रामनाथ को चिरकुण्डा स्थित फैक्ट्री के अन्दर दिन में २ बजे किसी अज्ञात व्यक्ति ने गोली मार दी। गोली लगने के बावजूद रामनाथ स्वयं पेट में गमछा बाँधकर स्कूटर चलाकर १ किलोमीटर पर स्थित एक प्राइवेट नर्सिंग होम पहुँचे थे लेकिन वहाँ उपचार की समुचित सुविधा न होने पर भाइयों द्वारा उन्हें अस्पताल धनबाद ले जाया गया।

माताजी गुरुदेव की कृपा थी, जिसके कारण रविवार अवकाश होने पर भी सभी डॉक्टर अस्पताल में मौजूद थे। डॉक्टरों ने केस की गम्भीरता से हमारे पिताजी श्री राम प्रसाद जायसवाल को अवगत कराया तथा न बचने की बात कही।

डॉक्टर की बात सुनकर सभी लोग बहुत परेशान हो उठे। लेकिन मेरे पिताजी को वंदनीया माताजी के आशीर्वाद पर पूरा भरोसा था। इसलिए डॉक्टर से ऑपरेशन करने को कह दिया। डॉक्टरों ने ऑपरेशन शुरू किया। इधर हम सभी लोग बैठकर माताजी से प्रार्थना करने लगे। मन में बार-बार भाव उठता, कुछ भी हो जाए माताजी ने घर में मांगलिक कार्यक्रम के लिए आशीर्वाद दिया है तो अमंगल कैसे हो सकता है? हम सभी के मन में यही भाव थे कि माताजी अवश्य ही अपना आशीर्वाद फलीभूत करेंगी।

हम सभी बैठकर माताजी का ध्यान कर मन ही मन गायत्री मंत्र जप कर रहे थे। करीब ४ घंटे के अथक प्रयास के बाद गोली निकाली जा सकी। सभी डॉक्टर बहुत अचंभित थे। डॉक्टरों ने मेरे पिताजी को बधाई देते हुए कहा कि इस ऑपरेशन में किसी अदृश्य शक्ति का संरक्षण मिल रहा था। इतने दुरूह ऑपरेशन के लिए काफी अधिक दक्षता की जरूरत थी। डॉक्टर साहब ने कहा कि गोली पेट को चीरते हुए किडनी के रास्ते रीढ़ की हड्डी में जा घुसी थी, जिसे निकालना आसानी से संभव नहीं था, लेकिन किसी अदृश्य शक्ति ने उस काम को बहुत आसानी से सम्पन्न करा दिया। इसके पश्चात् शक्तिपीठ से वन्दनीया माताजी द्वारा अभिमंत्रित जल की एक बूँद मुँह में डालने के ठीक दो घंटे बाद रामनाथ को होश आ गया। गुरुकृपा से मात्र १८ दिन में ही सारे उपचार हो गए। विवाह में उसे देखकर लोगों को विश्वास नहीं हो रहा था कि जो लड़का विवाह की सारी व्यवस्था देख रहा है, उसे ही गोली लगी थी।

इस प्रकार माताजी के आशीर्वाद से घर में अमंगल भी मांगलिक कार्य में विघ्न नहीं डाल सका।

**प्रस्तुति :-विश्वासनाथ प्रसाद जायसवाल**
**चिरकुंडा, धनबाद ( झारखण्ड )**

# सर्वसमर्थ गायत्री माता

यह मई १९७० की बात है। मैं अपने छोटे भाई महावीर सिंह के साथ चार दिन के शिविर में मथुरा गया हुआ था। उस दौरान गुरुदेव ने मुझसे कहा कि तेरी कोई पीड़ा हो तो मुझे बतला। मैंने कहा- गुरुदेव मेरा एक छोटा भाई है। उसके हाथ पैर में जान नहीं है। हिलते डुलते भी नहीं है। पूज्यवर ने कहा- बेटा वह उसके पिछले जन्म का प्रारब्ध है। जिसका परिणाम भुगत रहा है। मैंने कहा- गुरुदेव अगर वह अच्छा नहीं हो सकता है तो ऐसी कृपा करें कि वह मर जाय। हम लोगों से उसका कष्ट देखा नहीं जाता। गुरुदेव बोले- मैं तो ब्राह्मण हूँ, किसी को मार कैसे सकता हूँ! फिर कुछ सोचते हुए धीरे से बोले- जब मनुष्य किसी को जिन्दा नहीं कर सकता तो मारने का अधिकार उसे कैसे मिल सकता है? मैंने कहा- कम से कम चलने फिरने लग जाय.....। गुरुदेव कुछ देर मौन हो गए। उसके पश्चात् बोले बेटा गायत्री माता से कहूँगा, वह ठीक हो जाएगा। भस्मी ले जा, भस्मी से उसकी मालिश करना और मेरा काम करना।

मैंने भस्मी ले जाकर अपनी माँ को दी और बताया कि गुरुदेव की कृपा से भइया ठीक हो जाएगा। इस बात पर ज्यादा विश्वास किसी को नहीं हुआ। मेरे पिताजी को तो बिल्कुल विश्वास नहीं था। उन्होंने कहा- अगर यह लड़का ठीक हो जाएगा तो हम गुरुजी की शक्ति को मानेंगे। आसपास के लोगों में यह बात फैल गई थी। सभी लोग उसको देखने आते। डॉक्टर लोग भी बच्चे की स्थिति जानने के लिए आते। मेरी माँ ने भस्म को भाई के अविकसित हाथ पैर में रोजाना लगाना शुरू किया और महामृत्युंजय मंत्र का जप उसने निमित्त शुरू किया। थोड़े ही दिनों में उसके मसल्स बनने लगे।

इस तरह देखते-देखते करीब चार महीने बीत गए। लोगों की उत्सुकता बढ़ रही थी। हाथ पैरों में धीरे-धीरे जान आने लगी। धीरे-धीरे वह चारपाई पकड़कर उठने-बैठने लगा और कुछ ही महीनों में वह एकदम सामान्य बच्चे की तरह हो गया। किसी को विश्वास नहीं होता था कि यह वही बच्चा है। हम लोगों की खुशी का ठिकाना न रहा। पिताजी गाँव भर घूमते, लोगों को बताते कि गुरुदेव ने मेरे बच्चे को हाथ पैर दे दिए हैं। उन दिनों गायत्री यज्ञ के लिए कोई तैयार नहीं होता था, पर इस घटना ने हमें यज्ञ करने हेतु बाध्य कर दिया। ठाठरिया (चूरू) राजस्थान में ६ से ९ मई १९७२ तक एक विशाल यज्ञ का निर्धारण किया गया। उस यज्ञ में दूर-दूर से लोग आए। जो भी आता वह व्यक्ति पूज्यवर की सिद्धियों से अधिक गायत्री यज्ञ के तत्वदर्शन से प्रभावित होता। हजारों लोग दीक्षा लेकर गए। हजारों का साहित्य बिका। उस क्षेत्र में करीब पचास शाखाएँ खुल गईं।

इस घटना के बाद मेरा पूरा परिवार गुरुदेव से गहराई से जुड़ गया। मैंने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति लेकर २२ अगस्त १९९८ को स्थायी रूप से सेवा दे दी। तब से उनके चरणों में रहकर उन्हीं का कार्य कर रहा हूँ।

**प्रस्तुति :-रामसिंह राठौर -शान्तिकुञ्ज ( उत्तराखण्ड )**

विशिष्ट व्यक्तियों के, जीवन क्रम से जुड़े,
घटना क्रम को , जानने की जिज्ञासा,
हर किसी को, कौतूहल वश होती ही है।
शायद कहीं कोई
अपने काम की बात मिल जाये।
उनके अपने अनुभवों से,
कोई दिशा-प्रेरणा मिल जाये।
इसी कड़ी में,
इस युग के मार्ग दर्शक
पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य,
ब्रह्मर्षि, वेदमूर्ति, तपोनिष्ठ
स्वतंत्रता संग्राम सेनानी,
लोकनायक जन-जन को प्रिय,
सत्प्रवृत्ति संवर्धक, दुष्प्रवृत्ति उन्मूलक।
राष्ट्र के पुरोहित, राष्ट्र जागरण कर्ता,
अधिकारों के साथ, कर्त्तव्यों के प्रति सजगकर्ता।
केवल कथनी से नहीं, करनी से एक,
निज के प्रत्यक्ष उदाहरणों द्वारा,
सतयुग लाने के संकल्पकर्ता।
तप्त मानस के सुखदाता,
हर मानव के भाग्य विधाता,
ऐसे जीवट व्यक्तित्व की जीवनी की,
जानकारी के लिये, कौन उतावला नहीं होगा ?
अच्छा तो जानिए-
पन्द्रह वर्ष की आयु में, पूजा की कोठरी में,
लिये संकल्प को, जनहित तपस्या को
ऋषियों के सहयोग से, पूर्ण मनोयोग से,
एक-एक कर, साकार करते चले गये,
नया इतिहास रचते चले गये,
जो सबके सामने प्रत्यक्ष है।
बीच-बीच में, अनेक प्रश्न आते रहे,
लोग जानने की जिज्ञासा व्यक्त करते रहे,
साठ वर्ष की आयु तक टालते रहे।

अन्त में अपनी जीवनी भी,
लोक हित में अनिवार्य मान,
प्रेरणा देने के उद्देश्य से
एक केवल एक पुस्तिका लिखी,
"हमारी वसीयत एवं विरासत।
अपना सब कुछ, अपने बच्चों के नाम कर,
वे जेसे हल्के हो गये।
किन्तु उनके कर्तृत्व एवं उनकी वाणी,
का समन्दर आज भी अथाह है।
उनने चाहा - उनके बच्चे,
उनके जीवन से कुछ सीखें,
कुछ खोंजे, कुछ सोचें,
कुछ तपे, कुछ पाये,
और कुछ बनें।
जिन्हें भी उनके जीवन से प्रेरणा चाहिए,
उनके पग उसी रास्ते पर,
बढने ही चाहिए,
भले ही वह, अणुव्रत ही क्यों न हो?
आइए,
उनकी लेखनी, उनकी जीवनी,
उनकी वाणी पढें।
अणुव्रत, उनका प्रिय व्रत,
उसका ही अनुगमन करें।
इसी संकल्पंबद्ध मनःस्थिति से,
उनके विचारों को, स्वयं पढ़ने,
दूसरों को पढ़ाने, क्रियान्वित करने,
दूसरों को कराने का मानस बनाकर,
उनकी गाथा हृदयंगम करें।
उनकी अमूल्य धरोहर,
सार्थक करें, जीवन में उतारें,
लोकहित में खपें, कठिनाइयों में तपें,
उस तपन के बाद भी,
दैवी अनुग्रह मिले न मिले,
आत्म संतुष्टि का आनंद लें।

(शान्तिकुँज, हरिद्वार)

# अनुरोध एवं आश्वासन

- हमें अनेक जन्मों का स्मरण है। लोगों को नहीं जिनके साथ पूर्व जन्मों से सघन संबंध रहे हैं, उन्हें संयोगवश या प्रयत्न पूर्वक हमने परिजनों के रूप में एकत्रित कर लिया है और जिस-तिस कारण हमारे इर्द-गिर्द जमा हो गए हैं।

- बच्चों को प्रज्ञा परिजनों के संबंध में चलते-चलाते हमारा इतना ही आश्वासन है कि वे यदि अपने भाव-संवेदना क्षेत्र को थोड़ा और परिष्कृत कर लें तो निकटता अब की अपेक्षा और भी अधिक गहरी अनुभव करने लगेंगे।

- कठिनाइयों में सहयता करने और बालकों को ऊँचा उठाने, आगे बढ़ाने की हमारी प्रकृति में राई-रत्ती भी अन्तर नहीं होने जा रहा है। वह लाभ पहले की अपेक्षा और भी अधिक मिलता रह सकता है।

- जो अपनी भाव-संवेदना बढ़ा सकेंगे वे भविष्य में हमारी निकटता अपेक्षाकृत और भी अच्छी तरह अनुभव करते रहेंगे।

**असम्भवं संभवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझंञ्झावृतिरोधसक्षमम्।**
**युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम्।।**

त्वदीयं वस्तु सद्गुरुवे! तुभ्यमेव समर्पये।

**श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट**
शान्तिकुंज, हरिद्वार (उत्तराखंड) 249411 भारत
(01334) 260602, 260403, e-mail: shantikunj@awgp.org, www:awgp.org